संयुक्त प्रांत की पहाड़ी यात्राएँ

संपादक

सर्वप्रथम देव-पुरस्कार-विजेता

श्रीदुलारेलाल

(सुधा-संपादक)

गंगा-पुस्तकमाला का ११९वाँ पुष्प

संयुक्त प्रांत की पहाड़ी यात्राएँ

[सादे ६० चित्र. रंगीन ६ चित्र]

लेखक

साहित्यरत्न श्रीलक्ष्मीनारायण टंडन 'प्रेमी' एम्० ए०

[भाग्य का विधान, सप्तप्रवेश, हृदय-ध्वनि, दुलारे-दोहावली-समीक्षा, अंत्याक्षरी-प्रकाश, संयुक्त प्रांत के तीर्थ-स्थान, रचना-बोध, मातृ-भाषा के पुजारी आदि के रचयिता और भूतपूर्व सहायक संपादक 'खत्री-हितैषी' (मासिक), भूतपूर्व संपादक 'प्रकाश' (मासिक)]

:*:

मिलने का पता—

गंगा-ग्रंथागार

३६, लाटूश रोड

लखनऊ

द्वितीय संस्करण

सजिल्द ३)] सं० २००१ वि० [सादी २)
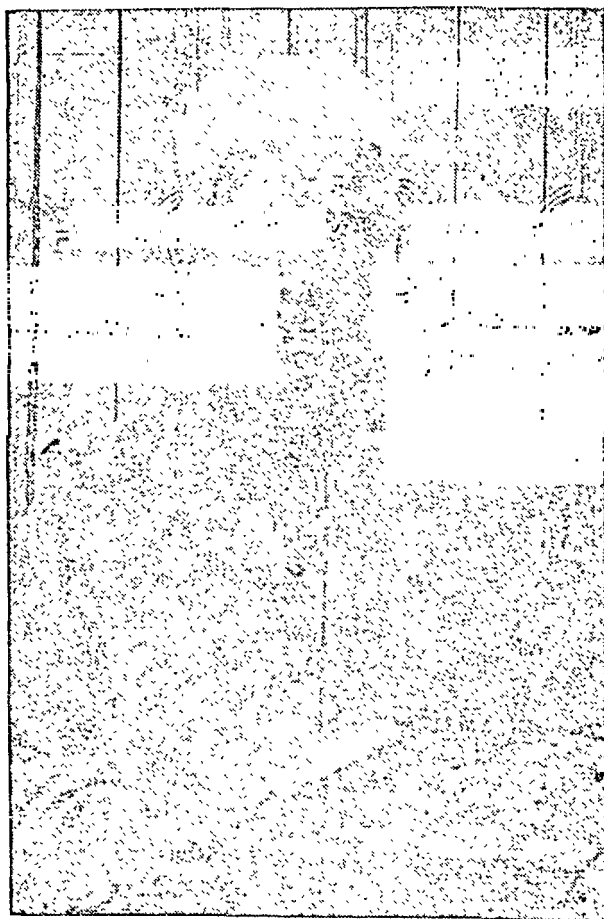
पूज्य पिता स्वर्गीय लाला सरजूप्रसादजी टंडन

को श्रद्धा तथा भक्ति-पूर्वक सादर समर्पित

लक्ष्मीनारायण टंडन 'प्रेमी'

[जन्म संवत् १९२०]　　　　[स्वर्गवास संवत् १९९०]

[जिनके साथ लेखक को बद्रिकाश्रम तथा भारत के अन्य
तीर्थ-स्थानों पर जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ]

परिचय

हिंदी-साहित्य में विवरणात्मक ग्रंथों की बहुत कमी है। कारण कदाचित् यह रहा है कि हिंदी-भाषी साहित्यिक कूप-मंडूक बने कल्पनात्मक संसार की सैर करने में रहे, और यात्रा करना व्यापारियों अथवा गृहस्थाश्रम से विरक्त अपढ़ बूढ़ों के हिस्से में रहा। साहित्यिक भक्ति-मार्गी और श्रृंगारी कविता अथवा आध्यात्मिक विषयों की खोज करते रहे। उन्हें विवरणात्मक विषयों पर लिखने की ओर न रुचि हुई, और न उसके लिये उन्हें आवश्यक अनुभव प्राप्त हुआ। जिन्होंने यात्राएँ कीं, उनमें अपने अनुभव और आनंद को क़लमबंद करने की योग्यता न थी। यों हिंदी-साहित्य के विवरणात्मक अंग का सैकड़ों वर्ष तक पर्याप्त पोषण न हो सका।

आधुनिक काल में आने-जाने की सुविधाओं के बढ़ने के कारण साहित्यिकों को सैर करने का मौक़ा मिला। परंतु हिंदी में समुचित विवरणात्मक साहित्य न होने के कारण सुंदर ढंग से यात्रा-विवरण के नमूने उनके सामने बाल्यकाल में नहीं आए। इस कारण यदि उनमें से कुछ विद्वान् विवरणात्मक साहित्य की सृष्टि कर सके, तो अँगरेज़ी-साहित्य के परिपुष्ट विवरणात्मक अंग के ढंग पर ही। यों तो भारतवर्ष यात्रियों का स्वर्ग है। कोई ऐसा भाग नहीं, जिस पर प्रकृति ने नैसर्गिक चित्र अंकित न किए हों। परंतु कश्मीर के नंगा पर्वत से भूटान के चुमलहाटी तक हिमालय के वक्षःस्थल पर के दृश्य तो अनुपम ही हैं। संयुक्त प्रांत प्राचीन काल से भारतीय संस्कृति का केंद्र रहा है, इसलिये

इस प्रांत के अंतर्गत हिमालय का जो भाग है, उसके साथ प्राकृतिक सौंदर्य के अतिरिक्त ऐतिहासिक और साहित्यिक महत्त्व की सुगंध है। प्राचीन काल में उत्तराखंड ही भारतीय आर्यों की विश्रांति-भूमि रहा है। यमुना से सरयू तक के मैदान पर भारतीय आर्य-संस्कृति के केंद्रित होने के कारण संयुक्त प्रांत के दक्षिण विंध्य पठार के कुछ भागों को भी ऐतिहासिक महत्त्व मिल गया है। इस प्रकार एक ऐसे ग्रंथ की आवश्यकता थी, जिसमें संयुक्त प्रांत के उत्तरीय और दक्षिणीय पहाड़ी भागों के दर्शनीय स्थानों का मनोरंजक वर्णन हो।

प्रस्तुत पुस्तक इस आवश्यकता को पूर्णरूपेण पूरा करती है। लक्ष्मीनारायणजी टंडन हिंदी और अँगरेज़ी के विद्वान् ही नहीं, हिंदी के होनहार कवि और अध्यापक भी हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि आप परले दर्जे के घुमक्कड़ हैं। जो कुछ आपने लिखा है, वह आपके अनुभव की चीज़ है। जिन-जिन पहाड़ी स्थानों का आपने वर्णन किया है, उन सबकी आपने सैर की है, उन्हें कलाकार की दृष्टि से देखा है, उनके फ़ोटो खींचे हैं। मतलब यह, जिस विषय पर आपने लिखा है, उसके आप पूरे अधिकारी हैं।

खेद है कि चिकना काग़ज़ न लगने के कारण पुस्तक में छपे चित्र यथेष्ट साफ़ और चित्ताकर्षक नहीं हैं। परंतु इस कमी के होते हुए भी पुस्तक नवयुवक विद्यार्थियों, अध्यापकों तथा धार्मिक गृहस्थों के लिये पठनीय है। जो सैर करना चाहते हों, उनके काम की तो यह पुस्तक है ही, जो पहाड़ी तीर्थों की यात्रा करना चाहते हों, उनके लिये भी यह बड़े काम की है।

टंडनजी कुछ समय से रोग-ग्रस्त हैं, परंतु ईश्वर की अनुकंपा से आपका उत्साह वही है, जो आपको लँगोटी पर फाग खेलकर भारत के तीर्थों तथा अन्य दर्शनीय स्थानों की सैर कराता रहा। यह पुस्तक उस समय छप रही है, जब आपको पलंग पर पड़े रहने की

आज्ञा है। ऐसी दशा में यदि कोई भूलें रह गई हों, तो व क्षम्य हैं। ईश्वर से प्रार्थना है कि आप शीघ्र स्वस्थ होकर अपनी सैरों का सिलसिला शुरू कर दें। आपसे हिंदी-साहित्य को बहुत कुछ आशा है।

कालीचरण-हाईस्कूल, लखनऊ
२० दिसंबर, १९४३

कालिदास कपूर
(एम्० ए०, एल्० टी०,
हेडमास्टर)

दो शब्द

'बालक पर माता-पिता का प्रभाव प्रत्यक्ष और परोक्ष, दोनो रूपों से पड़ता है'। इस सत्य अनुभव का मैं प्रत्यक्ष उदाहरण हूँ। मेरे पूज्य पिता स्वर्गीय लाला सरयूप्रसादजी टंडन धार्मिक प्रकृति के, शांत और भक्त पुरुष थे, जिनका अधिकतर समय पूजा-पाठ और तीर्थ-यात्राओं में व्यतीत हुआ। मुझे उनके साथ तीर्थ-स्थानों में किशोरावस्था ही से जाने का सौभाग्य और अवसर प्राप्त होता रहा। मेरे शिशु-हृदय पर उन यात्राओं का जो प्रभाव पड़ा, वह अमिट है। घुमक्कड़ी स्वभाव होने के साथ ही तीर्थ-स्थानों में जाने की सतत इच्छा मुझमें जाग्रत् हो गई। प्रकृति के प्रति जो अटूट प्रेम मेरे हृदय में है, वह भी मेरे पिताजी ही की देन है। अस्तु, मैं अवसर मिलने पर घर के बाहर निकल ही जाया करता हूँ। भिन्न-भिन्न अवसरों पर मैं भिन्न-भिन्न स्थानों में घूमने गया। मेरा स्वभाव है कि किसी नवीन स्थान पर जाने के पूर्व मैं वहाँ के विषय में कुछ ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहता हूँ, जिससे सुविधा-पूर्वक और एक विशेष क्रम से वहाँ घूमने का आनंद ले सकूँ। किंतु हिंदी-संसार में अभी यात्रा संबंधी साहित्य की बहुत कमी है। जिस प्रकार मुझे ऐसी पुस्तकें मिलने में कठिनाइयाँ पड़ीं, जो पथ-प्रदर्शक का काम देतीं, उसी प्रकार अन्य यात्रा-प्रेमियों को भी पड़ती होंगी। पत्र-पत्रिकाओं में बदरिकाश्रम आदि की यात्राओं पर छोटे-छोटे लेख तो निकलते ही रहते हैं, पुस्तकें भी लिखी गई हैं, किंतु मसूरी, नैनीताल आदि पर कोई भी सुंदर पुस्तक हिंदी में मुझे नहीं दिखाई दी। समय-समय पर

प्रांत का अधिकतर भाग मैदानी है, केवल उत्तरी-पश्चिमी भाग पहाड़ी है। मेरठ-कमिश्नरी के पाँच ज़िलों में केवल देहरादून ही पहाड़ी भाग है। इस ज़िले में चकरौता, कालसी, मसूरी, लंढौर और देहरादून आदि नगर हैं। टेहरी देशी रियासत है, और इसमें यमुनोत्तरी (१,६०० फ़ीट), टेहरी, गंगोत्तरी (२०,०३० फ़ीट), देवप्रयाग आदि नगर हैं। क्मायूँ-कमिश्नरी के तीनो ज़िले पहाड़ी हैं। (१) ज़िला गढ़वाल में केदारनाथ, बदरीनाथ, गुप्त काशी, रुद्रप्रयाग; श्रीनगर, पौड़ी, लैंसडौन, कर्णप्रयाग, नंदप्रयाग, नंदकोट, नंदादेवी (२५,६४० फ़ीट), दूनागिरि, जोशीमठ (६,१०७ फ़ीट), त्रिशूल, रामगढ़ आदि हैं। (२) ज़िला अल्मोड़ा में मीलम (११,१८० फ़ीट), बागेश्वर (३,१६६ फ़ीट), बैजनाथ, द्वाराहाट, रानीखेत (४,६८० फ़ीट), हवालबाग, अल्मोड़ा (५,४६४ फ़ीट), चंपावत, पिथौरागढ़, पिंडारी आदि स्थान हैं। (३) ज़िला नैनीताल में काशीपुर, रामनगर, काठगोदाम, हलद्वानी, ललकुआँ आदि हैं। यों तो सभी स्थान दर्शनीय हैं, और सभी कहीं यात्री आते-जाते रहते हैं, किंतु प्रस्तुत पुस्तक में उन्हीं स्थानों का वर्णन है, जहाँ अधिक यात्री प्रतिवर्ष धर्म-भाव से, स्वास्थ्य के विचार से या सैर-सपाटे और मनोविनोद के लिये जाते हैं। दक्षिण में (संयुक्त प्रांत के) बनारस-कमिश्नरी के पाँच ज़िलों में केवल ज़िला मिर्ज़ापुर ही पहाड़ी है, जिसके अंतर्गत चुनार, विंध्याचल और मिर्ज़ापुर आदि हैं। संयुक्त प्रांत के पठारी प्रदेश का मध्य और पश्चिमी भाग बुंदेलखंड कहलाता है। दक्षिण में विंध्याचल और कैमूर पर्वत की श्रेणियाँ फैली हुई हैं, और उत्तर में नंदादेवी, गंगोत्तरी, यमुनोत्तरी आदि की हिमालय पर्वत की श्रेणियाँ। देहरादून-ज़िले की ओर शिवालिक की पहाड़ियाँ हैं, जो पर्वतीय भाग का दक्षिणी छोर है, और जो समुद्र-तट से २,००० फ़ीट से ऊँची नहीं हैं। इन्हीं पहाड़ियों की असंबद्ध श्रेणियाँ रुड़की से हरिद्वार तक फैली हुई हैं, और

इन्हीं शिवालिक पहाड़ियों के बाद देहरादून की उपत्यकाएँ हैं, जिनके एक ओर शिवालिक और दूसरी ओर हिमगिरि की उच्च श्रेणियाँ हैं। देहरादून से पर्वतीय खंड उच्चतर से उच्चतम होते गए हैं—तेज़ी से। देहरादून चारो ओर पहाड़ियों से घिरा लगता है। देहरादून से मसूरी पहुँचते-पहुंचते हम लोग एकदम दो-ढाई हजार फ़ीट से आठ-दस हज़ार फ़ीट की ऊँचाई पर पहुँच जाते हैं। बढ़ती हुई ठंडक, बदलती हुई वनस्पति तथा शीतकाल के देवदारु आदि के वृक्ष इस बात की साक्षी देते हैं। इस ओर की दुनिया ही और है। निवासियों का रूप-रंग, क़द, व्यापार, पेशे, स्वभाव, रीति-रिवाज, रहन-सहन आदि सभी मैदान के निवासियों से भिन्न हैं। जिस पुरुष ने कभी पर्वतीय प्रदेश की सैर नहीं की, वह यह समझ ही नहीं सकता।

हिमालय का ढाल उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम की ओर है, जिसका प्रमाण युक्त प्रांत की बहती हुई नदियाँ हैं। उत्तर में १६,००० वर्गमील पहाड़ी भाग है, दक्षिण में पठारी भाग है। विंध्याचल की निचली पहाड़ियों और पठारी भूमि में झाड़ियाँ तथा गर्म पठारी भाग के छोटे वृक्ष हैं।

हिमालय पर्वत तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है—हिमालय का निचला मैदान की ओर का ढालू भाग, जो शिवालिक पहाड़ियाँ कहलाता है, पहला भाग है। पहले भाग के ऊपर का वह भाग, जो घने वृक्षों से ढका है, और जहाँ कुछ सुविधा-पूर्वक लोग यात्रा करते हैं, दूसरा भाग है। तीसरा भाग वह है, जिसमें बदरीनाथ, नंदादेवी आदि हिमाच्छादित पर्वत-शृंग हैं।

पूरे संयुक्त प्रांत के विषय में मुझे कुछ नहीं कहना है। केवल पर्वतीय भाग के विषय में मैंने कहा। संयुक्त प्रांत की नदियों और पर्वतों का एक नक़्शा प्रारंभ में दिया है।

मैं सुधा-संपादक श्रीपं० दुलारेलालजी का अनुगृहीत हूँ, जिन्होंने इस पुस्तक के लिये ब्लॉक दे दिए—केवल उन्हीं फ़ोटो के नहीं, जो मैंने

अपने लेखों के साथ 'सुधा' और 'बाल-विनोद' में छपने के समय दिए थे, वरन् वे ब्लॉक भी देने की कृपा की, जो उनकी पत्रिका में अन्य लेखों के साथ थे, जो कई वर्ष पूर्व उनकी 'सुधा' में निकल चुके थे।

लड़ाई का समय है—कागज़ की महँगी तो है ही, रुपया खर्चने पर भी किस कठिनता से कागज़ मिलता है, यह विद्वान् पाठकों को भली भाँति ज्ञात है। तो भी श्रीभार्गवजी ने ऐसे समय में पुस्तक छापकर अपने अटूट साहित्य-प्रेम का परिचय दिया है—यों तो व्यक्तिगत रूप से उनकी कृपा सदैव मेरे ऊपर रहती ही है। आर्ट पेपर न मिल सकने से ब्लॉक के फ़ोटो साफ़ नहीं आ सके हैं, इसके लिये पाठकगण क्षमा करें।

पुस्तक के संबंध में एक बात और कहना है। मैं पुस्तक का नाम 'संयुक्त प्रांत की पहाड़ी यात्राएँ एवं तीर्थ-स्थान' रखना चाहता था, किंतु ब्लॉक बनने में बहुत खर्च पड़ता है, इससे 'तीर्थ-स्थान'वाला भाग इसमें सम्मिलित नहीं किया गया है। किंतु बहुत शीघ्र ही पं० दुलारेलालजी भार्गव आपके सामने 'संयुक्त प्रांत के तीर्थ-स्थान'-शीर्षक दूसरी पुस्तक उपस्थित करेंगे।

अंत में मैं अपने मित्रवर श्रीप्रेमनारायणजी टंडन एम्० ए०, साहित्यरत्न और पंडित श्रीदत्तजी अवस्थी का आभारी हूँ, जो इस मेरी रोग की दशा में इस पुस्तक के संबंध में मेरी काफ़ी सहायता करते रहे हैं। भुवाली-सैनीटोरियम के मेडिकल सुपरिंटेंडेंट श्रीवाई० जी० श्रीखंडे बी० एस्-सी०, एम्० बी०, बी० एस्०, टी० डी० डी० (वेल्स) ने कृपा करके अपने अस्पताल के ६ ब्लॉक्स दिए। अतः उनका भी अनुगृहीत हूँ। मेरी पुस्तक की भूमिका श्रीयुत कालिदासजी कपूर ने लिखकर मेरा प्रोत्साहन किया है। उनके पितृ-तुल्य स्नेह से मैं सदा सिंचित हुआ हूँ, अतः धन्यवाद देने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। उन्हें तो ऐसे ही न-जाने कितने कष्ट दूँगा।

इस पुस्तक में आए हुए स्थानों के विषय में यदि कुछ और बातें पाठकगण मुझे बताएँगे, तो मैं उनका भी अनुगृहीत होऊँगा।

'प्रेमी'-कुटीर, पंजाबी टोला, लखनऊ
(जन्माष्टमी) बुधवार, संवत् १९९९ } लक्ष्मीनारायण टंडन 'प्रेमी'

द्वितीय संस्करण पर वक्तव्य

(कृतज्ञता-प्रकाश)

दो महीने से भी कम में प्रथम संस्करण बिक जायगा, और इतनी जल्दी द्वितीय संस्करण निकलेगा, इसकी तो मुझे आशा भी न थी। मैं हिंदी-पाठकों का कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने इस पुस्तक को अपनाकर मेरा उत्साह बढ़ाया। मैं उन विद्वान्, सहृदय पाठकों का भी आभारी हूँ, जिन्होंने अपनी सम्मतियाँ भेजने की कृपा की है तथा करेंगे।

नैनीताल
४-४-१९४४ } लक्ष्मीनारायण टंडन 'प्रेमी'

संयुक्त प्रांत की पहाड़ी यात्राएँ

साहित्यरत्न लक्ष्मीनारायण टंडन 'प्रेमी'
एम्० ए०
(लेखक)

विषय-सूची

पृष्ठ

चित्र-सूची

संयुक्त प्रांत की पहाड़ी यात्राएँ

संयुक्त प्रांत का (प्राकृतिक) नक्शा

यात्री खीलें, लैया, आटे की गोली आदि खिलाया करते हैं। घाट के चारों ओर ऊँचे-ऊँचे, पक्के भवन तथा देवमंदिर हैं। इस कुंड के बीच में मनसादेवी का मंदिर है, नहाते समय जिसकी परिक्रमा की जाती है।
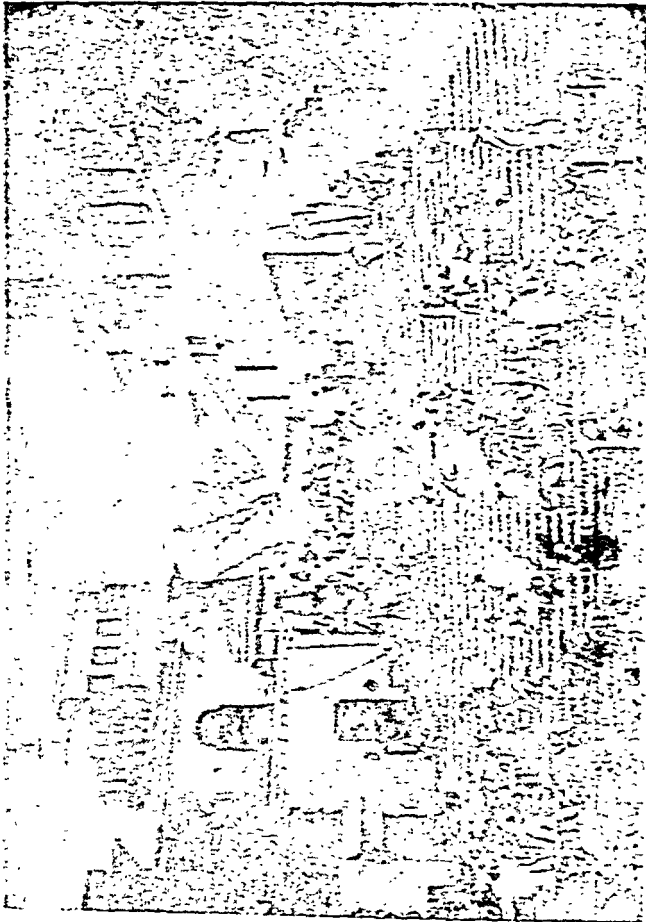
हर की पैड़ी—हरिद्वार

मैंने भी कपड़े उतारे, नहाया। पानी बदन को काटे देता था—पानी क्या था, पिघली बर्फ थी। दो-तीन गोते लगाने के बाद ही मेरी श्रद्धा

ने जवाब दे दिया, और मैं बाहर निकल आया। कहते हैं, ब्रह्माजी ने यहीं यज्ञ किया था, और इसी से यह स्थान अति पवित्र है। स्नान करने के पश्चात् घाट पर ही स्थित श्रीगंगाजी के मंदिर में दर्शन किए। घाट पर कई छोटे-छोटे मंदिर हैं, जिनमें गंगाजी, गंगेश्वर शिव, शकेश्वर शिव, गायत्री, बदरीनाथ, लक्ष्मीनारायण, शिव, राम, लक्ष्मण, जानकी और हनुमान् आदि की मूर्तियाँ हैं। इन्हें देखकर दूर तक फैले हुए लंबे-चौड़े घाट पर घूमते रहे। वहाँ की चहल-पहल देखकर अमीनाबाद के बाज़ार की सुध आ जाती है। कहीं व्याख्यान हो रहा है, कहीं कथा हो रही है, कहीं घंटा बज रहा है, कहीं आरती हो रही है, कहीं साधु-महात्मा तथा भक्तजनों की भीड़ है, कहीं सांसारिक स्त्री-पुरुषों की। अनेक दूकानदार, खोंचेवाले, फूलवाले आदि आपको घूमते मिलेंगे। भिखमंगों की भी यहाँ कमी नहीं। इस स्थान पर इतनी आत्मिक प्रसन्नता तथा शांति और संतोष प्राप्त होता है कि मनुष्य कल्पना के संसार में विचरण करने लगता है। अस्तु।

यहाँ घूम-घामकर प्लेटफ़ार्म गए। अपूर्व दृश्य है—हज़ारों नर-नारी स्नान कर रहे हैं, सैकड़ों गंगाजी की शोभा देख रहे हैं, पचासों पूजा-पाठ कर रहे हैं। हिंदू-धर्म मानो प्रत्यक्ष रूप धारण कर यहाँ विराजमान हो। पश्चात् हम लोग धर्मशाले लौटे। घाट के निकट ही, कुछ दूर पर, यहाँ का मुख्य बाज़ार है, जो काफ़ी लंबा-चौड़ा है, और जिसमें प्रायः सभी वस्तुएँ मिल जाती हैं। हाँ, यहाँ की भोजन की दूकानें गंदी अवश्य हैं। यहाँ पंजाबियों का बाहुल्य है, और उनमें प्रायः गंदगी रहती है। यहाँ लस्सी का प्रचार बहुत है। बाज़ार घूमे। एक दूकान पक्के भोजन की अवश्य है, जहाँ बहुत उम्दा और साफ़ मीठा-नमकीन, दूध-दही, पूरी-तरकारी, सभी चीज़ें मिल जाती हैं। यह मथुरा के किसी पंडे की है। उस दूकान को पाकर बड़ी प्रसन्नता हुई। भोजन किया, और फिर धर्मशाले आए।

सायंकाल को फिर घूमने गए। हरि की पैड़ी से कुछ ही दूर पर 'कुशावर्त'-नामक घाट है। यह भी सुंदर बना है, और यहाँ विशेषकर पिंड-दान के लिये लोग आते हैं। इसके नामकरण की कथा भी बड़ी विचित्र है। कहते हैं, दत्तात्रेयजी जब तपस्या कर रहे थे, उस समय उनकी कुशा आदि पूजा की सामग्री गंगाजी के आवर्त (भँवर) में उस समय तक घूमती रही, जब तक उनकी पूजा पूरी न हुई। इसी से इसका यह नाम पड़ा। पास ही श्रवण-घाट और विष्णु-घाट आदि हैं। कुशावर्त के निकट ही श्रवणनाथ महादेव का मंदिर है। इससे थोड़ी दूर पर श्री-गंगाजी का मंदिर है।

सायंकाल और रात्रि के समय प्लेटफ़ार्म, संपूर्ण घाट और हरि की पैड़ी का दृश्य देखने ही वाला होता है। हज़ारों की संख्या में लोग आते और अपनी-अपनी चटाइयां और दरियां बिछाकर प्लेटफ़ार्म पर बैठ जाते हैं। उस समय गंगाजी की शोभा अपूर्व होती है। फूलों के दोनों में आरती रखकर या फुलझड़ियां लगाकर सहस्रों की संख्या में लोग गंगाजी में प्रवाहित करते हैं, वे बहते हुए अद्‌भुत सौंदर्य का सृजन करते हैं। कल-कलनादिनी भागीरथी अपने वक्षःस्थल पर श्रद्धालु भक्तों की भेंटों को लिए हुए आनंद-पूर्वक बहती रहती है। वहाँ बैठकर उठने को जी नहीं चाहता। उस अलौकिक दृश्य को लोग नौ-दस बजे रात्रि तक देखा करते हैं। वहीं लोग भोजन करते हैं। गंगाजी के किनारे भोजन करने और गंगाजी की लोल लहरें देखने में जो आनंद प्राप्त होता है, उसे केवल हृदय ही अनुभव कर सकता है। हम लोग इस घाट पर बैठे थे, और उस पार शेर दहाड़ रहा था।

दूसरे दिन विल्वकेश्वर महादेव के दर्शन करने गए। यहाँ बेल के पेड़ों की अधिकता थी। इस स्थान का भी धार्मिक महत्त्व अधिक है। विल्वकेश्वर पर्वत के पीछे गौरी-कुंड है। निकट ही महर्षि ऋचीक का आश्रम और एक गुफा में दुर्गादेवी की मूर्ति है।

सायंकाल रेल की पटरी पार कर एक ऊँची पहाड़ी पर स्थित मनसादेवी के मंदिर गए। बड़ी विकट चढ़ाई है। देवीजी के मंदिर से गंगाजी और नगर का दृश्य बहुत सुंदर दिखलाई देता है। यहाँ से गंगा और बाँध का दृश्य दिखलाई देता है। गंगाजी यहाँ कई धाराओं में बँट गई हैं। यहाँ से उस पार कजली-वन भी दिखाई देता है, जो शेर, हाथी आदि की खान हैं। वहाँ के पुजारी ने कहा—"हम लोग रात्रि को यहाँ नहीं रहते—शेर-चीते के आने का भय रहता है।" यहाँ पर्वत की उपत्यका में बहुत नीचे पर एक मंदिर बना है, और सूरज-कुंड है। बड़ा भयानक मार्ग है। दूर पर दो-एक खोहें हैं, जिन्हें देखकर डर लगता है। एक बहुत छोटा पानी का झरना भी बह रहा था। मैंने मनसा-देवी के मंदिर से कुछ दूर पर एक छप्पर और वहाँ से नीचे खड्ड में एक घोड़ी को चरते देखा, और उसी की सहायता से सूरज-कुंड का रास्ता समझ लिया। एक मारवाड़ी सज्जन भी मनसादेवी से साथ हो लिए थे। वह बहुत डरते रहे। कहते थे—"यदि मुझे पता होता, इतना चलना होगा, इतना बीहड़ रास्ता होगा, तो कभी न आता। धीरे-धीरे चलो।" हम लोग रास्ते-भर सेठजी से हँसते रहे कि "अब की आइएगा, तो जान का बीमा करवा लीजिएगा।"

तीसरे दिन हम लोग ताँगे से कनखल गए। यहाँ इक्के हैं ही नहीं, केवल ताँगे हैं, और बड़े सस्ते। यह गंगाजी के दक्षिणी किनारे पर बसा है, और हरिद्वार से तीन मील है। पहले मायापुर की गंगाजी की नहर का पुल पार किया। मायापुर किसी समय वैभव-पूर्ण नगर था। किंतु अब तो भग्नावशेष ही उसकी प्राचीनता और महत्त्व की साक्षी देते हैं। गंगा की नहर भी इंजीनियरिंग का एक सुंदर उदाहरण है। यहाँ भी घनी और काफ़ी बड़ी बस्ती है। विशाल भवन और मंदिर हैं। बड़ा बाज़ार है। यहाँ अनेक मठधारियों के मठ और अखाड़े हैं। मार्ग में गच का मंदिर, व्यास-मंदिर और हरियौला-मंदिर ताँगे से उतरकर देखा। सब मंदिर

बहुत सुंदर हैं, और नए ह बने मालूम पड़ते हैं। विशेषकर हरियाला-मंदिर बहुत सुंदर है। यहाँ भी बहुत-से पक्के घाट हैं, किंतु उनमें वह चहल-पहल और रौनक कहाँ, जो हरिद्वार में है। राजघाट यहाँ का प्रसिद्ध घाट है। यहाँ की दर्शनीय वस्तुओं में लंढौरवाली रानी की छतरी और घाट भी है। राजघाट के निकट ही दक्षप्रजापति का मंदिर, नीलकेश्वर महादेव, सती-कुंड, हनुमानजी की मूर्ति आदि हैं। सुंदर और पक्के चबूतरे पर सती-कुंड है। यहाँ से लगभग एक फर्लांग की दूरी पर एक और मंदिर और बाग है। कनखल में गंगा और नीलधारा का संगम है। यहाँ बड़ा तीव्र बहाव है। लहरें एक दूसरे से टकराती, होड़ और नाद करती बहती हैं। गंगाजी का दृश्य यहाँ इतना आकर्षक है कि उठने की इच्छा ही नहीं होती। कनखल पवित्र भूमि है। सनत्कुमार ने यहीं तप किया था। दक्षप्रजापति ने यहीं यज्ञ किया था। सती ने यहीं अपना शरीर भस्म किया था।

यहाँ से हम लोग गुरुकुल-काँगड़ी गए। पहले ऑफ़िस गए, और वहाँ के अध्यक्ष से आश्रम देखने की इच्छा प्रकट की। वह सौजन्य के अवतार थे। बड़े प्रेम और आदर से बैठाया, और वहीं के एक ब्रह्मचारी (विद्यार्थी) को साथ कर दिया। वहाँ के विद्यार्थियों के मुख पर तेज और भोलापन होता है। उनकी पोशाक है एक कमीज़ और हाफ़ पैंट। उनकी वेश-भूषा और भोजन आदि में बहुत सादगी होती है। काँगड़ी में छात्रालय और पढ़ने के कमरे देखे। एक बड़े कमरे में बहुत छोटे-छोटे लड़के एक साथ पढ़ाए जा रहे थे। वहाँ के पढ़ाने का ढंग बड़ा चित्ताकर्षक और आदर्श है। फिर छात्रों के खेल के मैदान, वाटर वर्क्स, हवन-स्थान और रसोई-घर आदि देखकर वहाँ से चल दिए। उस सात्त्विक स्थान का प्रभाव मनुष्य की अंतरात्मा पर चिरस्थायी पड़ता है।

भारतवर्ष में कई ऐसी संस्थाएँ हैं, जहाँ भारत की प्राचीन सभ्यता और संस्कृति की विचार-धारा को प्रधानता देकर शिक्षा देने की परिपाटी है।

इस शिक्षा-पद्धति में प्राचीनता और नवीनता का सराहनीय सम्मिश्रण है। वैदिक और संस्कृत-साहित्य के साथ-ही-साथ अर्थशास्त्र, राजनीति, इतिहास, विज्ञान, गणित और अँगरेज़ी आदि की भी शिक्षा दी जाती है। २४ वर्ष की आयु तक ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करते हुए विद्यार्थी अतीत भारत के धुँधले चित्र को फिर से नेत्रों के सामने रखते हैं। स्वामी श्रद्धानंदजी ने वर्तमान शिक्षा-प्रणाली से असंतुष्ट होकर प्राचीन समय की 'गरुकुल पद्धति' के अनुसार शिक्षा देने की बात सोची। ब्रह्मचर्य का

गुरुकुल के छात्र व्यायाम कर रहे हैं।

विद्यार्थी-जीवन में पालन, नगर की वर्तमान सभ्यता से पूर्ण विषैले वातावरण से दूर, प्राचीन लुप्त तथा प्राप्त साहित्य का अन्वेषण और मानसिक, शारीरिक, आध्यात्मिक एवं मस्तिष्क-संबंधी आदि उद्देश्यों की पूर्ति इस संस्था से होती है। बिजनौर के श्रीअमानसिंह ने अपना गाँव काँगड़ी इस हेतु दिया, और सन् १९०२ में इस संस्था का बीजारोपण किया, तथा

आश्रम-जीवन का स्वाद विद्यार्थीगण लेने लगे। १९०८ से कॉलेज-विभाग खुला। इसके पूर्व स्कूल-विभाग ही था। शिक्षा का माध्यम हिंदी ही रहा। अनेक अमूल्य पुस्तकें हिंदी में संस्था की ओर से छपीं। सन् १९२१ से 'विश्व-विद्यालय' का रूप इस संस्था ने लिया, और आर्ट-कॉलेज, वेद-कॉलेज, आयुर्वेद-कॉलेज और गर्ल्स कॉलेज (चार कॉलेज) खुले। धीरे-धीरे संस्था के भवन बनते जा रहे थे, और परिषद्, कार्यकारिणी सभा और शिक्षा-पटल, विद्या-सभा आदि का जन्म और कार्य आवश्यकतानुसार होता जाता था। पहले तो यह संस्था गंगाजी के उस पार थी, पर १९२४ में जब गंगा-नदी की बाढ़ ने अनेक भवनों को क्षति पहुँचाई, तब १९३० में हरिद्वार से ३ मील पर, गंगाजी के इसी पार, गंगा की नहर के पास, यह संस्था हटा ली गई।
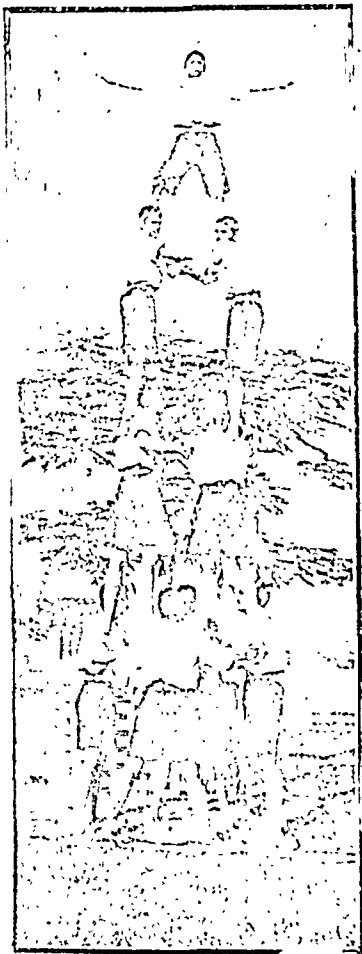
छात्रों का व्यायाम-प्रदर्शन

इस संस्था के प्राचीन स्थान में तो अब खेती-बारी और बाग़बानी होती है, और नवीन स्थान में शिक्षा के लिये नवीन भवनों का

निर्माण हुआ है। लगभग १५०० विद्यार्थी १४ वर्ष वहाँ निवास करके शिक्षा प्राप्त करते हैं। केवल छुट्टियों में ही उन्हें घर जाने की
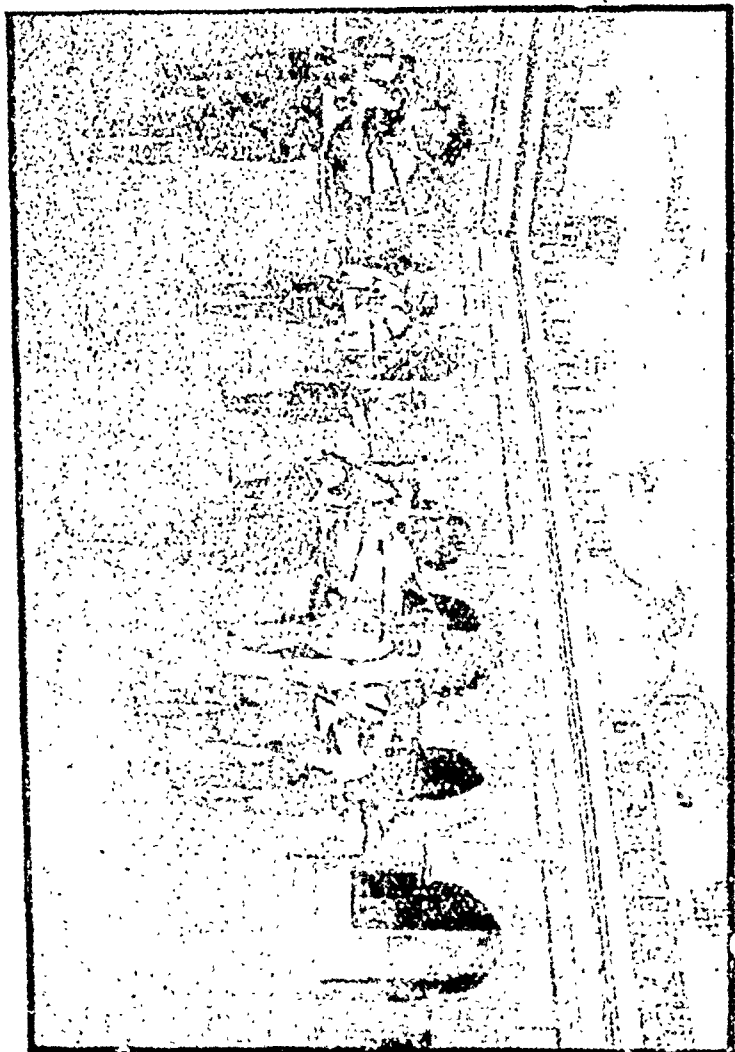
गुरुकुल के विद्यार्थी मैच खेल रहे हैं।

आज्ञा है, बीच में नहीं। पहले ५ वर्ष २०) मासिक, फिर ५ वर्ष २५) मासिक, फिर ४ वर्ष ३०) मासिक खाना, कपड़ा, बिस्तर, पुस्तकों आदि का खर्च देना पड़ता है—पढ़ाई निःशुल्क है। इस प्रकार सादगी, मितव्ययता

और चरित्र-निर्माण के आदर्श की पूर्ति प्रकृति के सुंदर दृश्यों और सात्त्विक वातावरण के बीच में होती है। संस्था के पास ४,००० बीघा भूमि, १५ लाख के नए भवन और प्रायः सवा लाख के पुराने संस्था-संबंधी भवन हैं। श्रीजुगुलकिशोर बिरला के दान से बना 'वेद-मंदिर', 'श्री-श्रद्धानंद-मेडिकल-मिशन-हॉस्पिटल' आदि बड़े 'इनडोर' और 'आउट डोर' रोगियों के अस्पताल, हवन तथा प्रार्थना के स्थान, 'होस्टल्स', 'जिमना-ज़ियम', खेलने के मैदान, यात्रियों के लिये धर्मशालाएँ, बड़े-बड़े हाल आदि स्थान हैं। बिजली, बंबा, गोशाला, तेल, कागज़ और अनाज आदि के लिये मशीनें, 'वर्कशाप', 'प्रिंटिंग-प्रेस', लड्डू-विभाग, दवाखाना आदि यहाँ हैं। फल, फूल, अनाज, तरकारी आदि की खेती, घी, मक्खन, दूध आदि का प्रबंध सब इस संस्था का निजी है। संस्था के पास लगभग साढ़े आठ लाख का 'परमानेंट फंड' है। संस्था का प्रबंध गवर्नर, चैंसलर, वाइस चैंसलर, आचार्य तथा विभिन्न कार्यकारिणी सभाओं द्वारा होता है।

हिंदी के क्षेत्र में गुरुकुल विश्वविद्यालय काँगड़ी का कार्य

यह बात निर्विवाद रूप से कही जा सकती है कि आज भी समस्त भारतवर्ष में गुरुकुल कांगड़ी ही एकमात्र ऐसी शिक्षा-संस्था है, जहां उच्चतम शिक्षा का माध्यम हिंदी है। गुरुकुल ने आज से ४० वर्ष पूर्व रसायन, भौतिकी, कृषि शास्त्र, विद्युत्-शास्त्र, मनोविज्ञान, विकासवाद, अर्थ-शास्त्र तथा इतिहास आदि आधुनिक विषयों के लिये समुपयुक्त, सुंदर एवं सुगम पारिभाषिक शब्दों का निर्माण करके विद्यालय तथा महाविद्यालय-विभागों के लिये उत्तमोत्तम पाठ्य-पुस्तकें तैयार कीं, और उन्हें अपने पाठ्यक्रम में स्थान दिया। यह देखते हुए कि आज भी देश में अधिकतर संख्या ऐसे ही शिक्षा-विशारदों की है, जो हिंदी को शिक्षा का माध्यम बनाने की बात को अक्रियात्मक या उपहासास्पद समझते हैं, तथा एक भी सरकारी विश्व-विद्यालय ऐसा नहीं, जहाँ हिंदी द्वारा उच्च शिक्षा दी जाती हो—गुरुकुल

का कार्य अत्यंत साहस-पूर्ण, मौलिक तथा अद्वितीय है। इस दिशा में बढ़नेवालों के लिये गुरुकुल ने अनुकरणीय दृष्टांत उपस्थित किया है।

हिंदी-भाषा को व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध, भाव-प्रकाशन के लिये नूतन शब्द-कोष से सदा संपन्न तथा इतर प्रांतीय भाषाओं से अविच्छिन्न रखने के लिये उसे मूल स्रोत संस्कृत से संबद्ध रखना अपरिहार्य है। इस सत्य को गुरुकुल के संचालक भली भाँति जानते थे, तभी उन्होंने अपने पाठ्यक्रम को ऐसा बनाया है कि उसमें संस्कृत का उतना ज्ञान जितना कि हिंदी के उच्चतम अध्ययन के लिये अत्यावश्यक है—सबको अवश्य करवा दिया जाता है।

आज से वर्षों पूर्व, जब बच्चों को हिंदी प्रारंभ कराने के लिये उत्तम पाठावलियों का प्रायः अभाव ही था—गुरुकुल ने अपनी पाठावलियाँ प्रकाशित कर इस क्षेत्र में भी हिंदी की प्रशंसनीय सेवा की।

गुरुकुल के स्नातकों ने हिंदी में उच्च कोटि का साहित्य निर्माण कर मातृभाषा के साहित्य-कोष को अमूल्य रत्नों से भरने के साथ-साथ अपने आपको भी यशस्वी बनाया है। गुरुकुल अब तक चार बार 'मंगलाप्रसाद-पारितोषिक' प्राप्त कर चुका है। हिंदी-पत्रकार-जगत में गुरुकुल के स्नातकों का विशेष स्थान है। अभी अपने यहाँ हिंदी-पत्रकार-परीक्षा का आयोजन कर गुरुकुल ने फिर अपनी मार्गप्रदर्शकता का परिचय दिया है।

श्रीसूर्यकुमारी - ग्रंथमाला तथा स्वाध्याय-मंजरी में भी ऐसे उत्कृष्ट कोटि के ग्रंथों का प्रकाशन हुआ है, जो विद्वत्ता-पूर्ण होते हुए भी सर्वप्रिय हैं। हिंदी-साहित्य-सेवा का यह कार्य गुरुकुल निरंतर करता चला जा रहा है।

मार्ग में ऋषिकुल-कांगड़ी पड़ता है। यह भी दर्शनीय स्थान है। इसे देखकर हम लोग धर्मशाला लौटे।

सायंकाल पंजाबी क्षेत्र गए। यहाँ पंजाबियों की बस्ती अधिक है। पंजाबी स्त्रियां सुंदर और बहुत स्वस्थ होती हैं। उनका पहनावा उन्हें और भी चुस्त बनाता है। किंतु एक बात कुछ खटकनेवाली है। यहाँ

कुछ स्त्रियाँ निधड़क नंगी नहाती हैं। अब तो यह रिवाज बहुत कम हो गया है, और परमात्मा ने चाहा, तो यह कुप्रथा बहुत शीघ्र दूर हो जायगी।

चौथे दिन प्रातःकाल हम लोग चंडीदेवी (नील-पर्वत) चल दिए। हमारे कुछ साथी तो जाने को तैयार ही न थे। एक सज्जन के कहने पर कि वहाँ गंगा के बढ़ने से मार्ग भयानक हो गया है, और जानवर (शेर) का भी डर है, ये लोग भड़क गए थे। बड़ी कठिनता से मैं उन्हें राज़ी कर सका। पहले तो ताँगा करके मायापुर की गंगा की नहर का पुल पार किया। वहाँ उतरकर एक लकड़ी का बना छोटा पुल पार करना पड़ा। पानी पुल के ऊपर से होकर बह रहा था। पानी कठिनता से एक या दो इंच ही ऊँचा पुल पर होगा, किंतु उसमें इतना बहाव था कि पैर नहीं टिकते थे। हम लोग एक क़दम जब ख़ूब जमा लेते थे, तब दूसरा धीरे से उठाकर रखते थे। यदि ज़रा भी पैर फिसल जाय, तो आदमी की हड्डी-पसली का पता न चले, क्योंकि पुल के नीचे अगाध जल था, और नदी के बीच-बीच में छिपी या प्रकट चट्टानें। राम-राम करके पुल पार किया, तो एक मील बालू पर चलना पड़ा, तब कहीं नाव पर पहुँचे। नाव छूटने ही वाली थी, पर हम लोगों को दूर से देखकर मल्लाह रुके रहे। कहीं गंगा का पानी और कहीं सूखी बालू पार करके नाव तक पहुँचे। नाव बहुत आगे बढ़ाकर छोड़ते हैं, तब कहीं वह बहकर अपने गंतव्य स्थान पर (उस पार) लगती है। बीच में बहुत ही तीव्र धारा है। वहाँ एक बड़ी मज़ेदार बात देखी। वहाँ के निवासी पीपों को एक साथ बाँधकर बेड़ा बना लेते हैं, या सूखी लौकी आदि की सहायता से गंगाजी पार कर लेते हैं।

नाव से उतरकर, घुटने-घुटने पानी मँझाकर बालू और पथरीली पृथ्वी पार करने में हम लोगों को पंद्रह मिनट लगे, तब नील-पर्वत के ठीक नीचे हम लोग पहुँच गए। कामराज की काली देवी के दर्शन करके चढ़ाई शुरू की गई। इतनी खड़ी चढ़ाई है कि लोगों का कहना है,

यदि चंडीदेवी कोई हो आवे, तो समझ ले कि वह बदरिकाश्रम जा सकता है। रास्ते में कोई झरना न था—प्यास लग रही थी, पर करते क्या। चलते चले जाइए, चढ़ाई का अंत ही नहीं होता। चारो ओर आकाश-छूती, घनी वृक्षावली थी। उस नैसर्गिक भूमि के सन्नाटे और निस्तब्धता में पक्षियों का मधुर कलरव कानों में अमृत डाल रहा था। न आदमी न आदमज़ाद उस मार्ग में, जिससे मार्ग पूछा जाता। थोड़ी दूर चलने के पश्चात् हमारी पगडंडी दो भागों में विभाजित हो गई। अब प्रश्न यह उठा कि कौन-सी पगडंडी ग्रहण की जाय। भगवान् का नाम लेकर एक पगडंडी पर चले। थोड़ी दूर के बाद फिर पगडंडी दो भागों में विभाजित हो गई। हम लोग बहुत डर रहे थे कि यदि मार्ग भूल गए, तो जीवन की ख़ैर नहीं। हम लोग केवल चार आदमी थे, जिनमें एक १४ वर्ष का लड़का भी था। नाव के अन्य मुसाफ़िरों को हम लोगों ने इसलिये छोड़ दिया कि उनके साथ चिल्ल-पों में देर भी लगती, और स्वतंत्रता भी न रहती।

हम लोगों ने यह निश्चय किया कि कुछ एक पगडंडी से चलें, और कुछ दूसरी से, देखें, भाग्य कहाँ ले जाता है। यदि आध घंटा चलने के पश्चात् भी चंडीदेवी की कोई टोह न लगी, तो दोनो पार्टियाँ इसी स्थान पर वापस आ जायँगी। थोड़ी दूर चलने के पश्चात् दोनो पगडंडियाँ फिर एक हो गईं। अब हम लोगों की जान में जान आई, और समझे कि मुख्य पगडंडी एक ही है, बाक़ी उसकी शाखाएँ हैं, जो अलग होतीं और फिर मिलती रहती हैं। थोड़ा और आगे बढ़ने के पश्चात् एक स्थान पर महादेवजी की मूर्ति दिखाई दी एक चबूतरे पर, जिस पर ताज़े फूल आदि चढ़े थे। अब हम लोगों के जी में जी आ गया कि इस स्थान में लोग आते-जाते रहते हैं। थोड़ा और बढ़ने के पश्चात् कुछ मनुष्यों की बोली-सी ऊपर से सुनाई देने लगी। अब हम लोगों को निश्चय हो गया कि ऊपर देवी का मंदिर है। थोड़ी दूर चलने के पश्चात् हम लोग

चंडीदेवी के मंदिर में पहुँच गए। वहाँ भी फूल-बताशा बेचनेवालों और मंदिर के पंडों को देखकर आश्चर्य-मिश्रित प्रसन्नता हुई। लोग इतनी दूर से केवल पेट के लिये ही आते हैं। और वह भी कितनी क्षीण
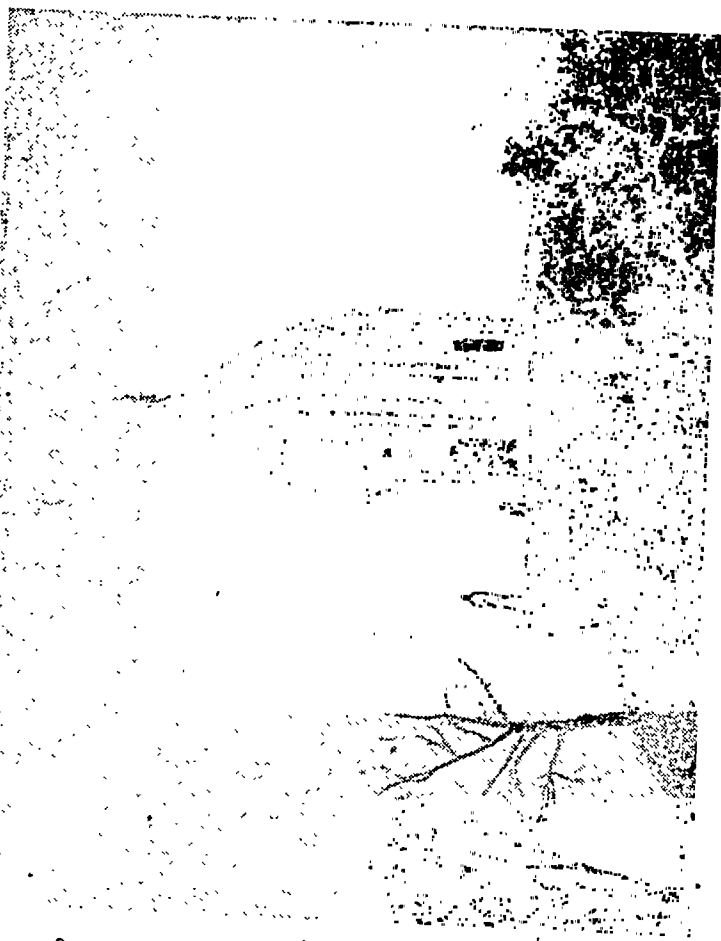
हरिद्वार में चंडीदेवी का मंदिर

आशा की रज्जु में बँधकर! जब मेला आदि होता है, तब तो यात्रियों का आना-जाना लगा ही रहता होगा, किंतु अन्य दिनों में कहीं दो-चार यात्री दिन-भर में आ जाते होंगे।

हाथ-मुँह धोया, सुस्ताए और मंदिर में गए, जो काफ़ी ऊँचे चबूतरे पर काफ़ी सिड्डियाँ चढ़ने के बाद मिलता है। दर्शन किए, और परिक्रमा की। वहाँ से हरिद्वार आदि का दृश्य इतना अधिक मनोहर दिखाई देता है कि मार्ग का सारा कष्ट और थकावट लुप्त हो जाती है, और हृदय ब्रह्मानंद का अनुभव करता है। इतनी ठंडी और सुंदर हवा चलती है कि तबियत मस्त हो जाती है। वहाँ से थोड़ी दूर अंजनीदेवी हैं, उनके दर्शन किए। वहाँ से एक पगडंडी कदली-वन को जाती थी, उसे देखा।

चंडीदेवी तक पहुँचने के दो मार्ग हैं। हम लोग एक मार्ग से आए, और सोचा, अब दूसरे मार्ग से उतरें, जिसमें परिक्रमा पूरी हो जाय। हम लोगों ने दो बड़ी त्रुटियाँ की थीं—एक तो थर्मस बाटिल और भोजन साथ नहीं लाए थे, और दूसरे, एक पथ-प्रदर्शक साथ नहीं लिया था। प्रत्येक नवीन यात्री को अपनी सुविधा के लिये इन दोनो वस्तुओं का आयोजन पहले से ही करना चाहिए।

हम लोग दूसरे मार्ग से उतरने लगे। बहुत दूर पर एक झरना बहता दिखलाई दिया। इस ओर चट्टानें खुली हुई हैं, वृक्ष ज़्यादा घने इस ओर नहीं हैं। हम लोग ज़ल्दी पहुँचने के फेर में और इस पूर्व-धारणा के अनुसार कि अंत में तो सब पगडंडियाँ एक हो ही जाती हैं, मुख्य मार्ग से भटक गए। फल यह हुआ कि एक ऐसे स्थान पर पहुँचे, जहाँ से पाँच-छ फ़ीट की निचाई पर भूमि थी, और वह भी बिलकुल समकोण बनाती हुई। अब नीचे कैसे पहुँचा जाय। पगडंडी लगभग २ फ़ीट चौड़ी होगी, और एक ओर हज़ारों फ़ीट नीचे गड्ढे। मैंने सोचा, यदि दीवार से चिपककर मैं नीचे खिसकूँ (Slip करूँ), तो पहुँच सकता हूँ। भाग्य-वश हवा का झोंका नहीं चल रहा था। मैंने आँखें बंद कीं, और धड़कते हुए हृदय से भगवान् का स्मरण करता हुआ नीचे खिसका, और सही-सलामत भूमि पर खड़ा हो गया। मेरी प्रसन्नता का अंत नहीं था, किंतु मेरे साथियों का विचित्र हाल था। मेरा उदाहरण ग्रहण करने और

दोहराने का साहस उनमें न था। खैर, किसी प्रकार राम-राम करके हमारे एक-एक साथी नीचे आए, वह भी उस समय, जब लड़का पहले नीचे उतर आया। मेरी विचित्र दशा थी—मैं सोच रहा था, यदि ये लोग नीचे न उतर सके, तो मेरे लिये ऊपर चढ़ना तो असंभव ही होगा। ऐसी जानलेवा मुसीबत तो जीवन में कभी नहीं पड़ी थी।

इसके पश्चात् मुख्य पगडंडी मिल गई, और हम लोग पहाड़ी के नीचे उतर आए। नीचे एक मंदिर और आश्रम था। एक कलकल करता हुआ झरना, जो हम लोगों ने ऊपर से देखा था, महादेवजी की मूर्ति के निकट से होकर बह रहा था। गौरीशंकरजी के दर्शन करके हम लोग गंगाजी की ओर चले। गंगाजी तक पहुँचने के पूर्व जितना कष्ट हम लोगों को हुआ, उतना जीवन में कभी नहीं हुआ। यों तो मुझे प्रकृति के बीच में घूमने का शौक़ है ही, और इसी कारण मुझे अनेक खतरे और मुसीबतें उठाने का अवसर भी मिल चुका है, किंतु इस बार तो हम लोग अपने जीवन से निराश ही हो चुके थे। पहले तो कुछ पानी मँझाया, फिर एक दलदल पार करना पड़ा। हम लोगों के पैर दलदल में घुसे जाते थे। बड़े कष्ट से उसे पार किया। फिर एक सघन जंगल पार करना पड़ा, जो इतना बड़ा और घना था कि एक पूरी सेना छिप जाय, और पता न चले। हम लोग डर रहे थे कि कहीं कोई जानवर न आ जाय, या कहीं मार्ग न भूल जायँ। वहाँ सूर्य की धूप तक नहीं आती—जी घबराने लगा। उसके पश्चात् मैदान आया, जहाँ बालू-ही-बालू दिखाई दी। उसके पश्चात् फिर पेड़ मिले, जो कम ऊँचे और घने थे, और वहाँ झाड़ियाँ भी थीं। कुछ दूर बाद पगडंडी दो ओर बँट गई थी। हम लोग दाहनी ओर चले। लगभग आध मील चलने के पश्चात् एक ऐसे स्थान पर पहुँचे, जहाँ एक बड़ा लंबा-चौड़ा कुंड था। उसकी थाह लेने के लिये दो लंबी-लंबी वृक्ष की शाखाएँ बाँधकर पानी में डालीं, पर गहराई का पता न चला, अतः केवल तैरकर पार करना ही

संभव था। पर मेरे साथी तैरना जानते न थे, और मैं जानता था, तो भी मेरा साहस उस कुंड को पार करने का न होता था। कुंड से बिलकुल समकोण बनाते हुए पहाड़ खड़े थे, अतः थल के मार्ग से उस पार पहुँचना भी असंभव था। लाचार होकर फिर उस स्थान को वापस गए, जहाँ से दो ओर मार्ग गए थे।

अब बाएँ हाथवाली पगडंडी पकड़ी। थोड़ी दूर चलने के पश्चात् देखा कि बीच में पानी की धारा बह रही है—पचीस-तीस फ़ीट चौड़ी। अब क्या किया जाय? यदि यह भी गहरी हुई, तो? प्रथम तो यह सोचना कि लौटकर फिर गौरीशंकरजी पहुँचें, और पहाड़ चढ़कर चंडीदेवी जायँ, और फिर जिस ओर से आए थे; उस ओर से लौट जायँ, ठीक नहीं था; क्योंकि ऐसा करने में कम-से-कम चार-पाँच घंटे लगते, और इस समय १३, २ बजा था। रात्रि को पहाड़ पर चढ़ना ख़तरे से पूर्ण ही नहीं, वरन् ठीक भी नहीं है। मैदान तो है नहीं कि सपाट सड़क है, लोगों से पूछते-पूछते पहुँच जायँगे। फिर गौरीशंकर तक ही पहुँचना नामुमकिन था, क्योंकि मार्ग का पता न था। दूसरी बात यह हो सकती थी कि भूखे-प्यासे, खुले मैदान में, बिना ओढ़ने-बिछाने के, जानवरों से भरे इस स्थान पर, पेड़ पर रात बिताई जाती, और प्रातःकाल जैसा होता, देखा जाता। हम लोग निराश हो चुके थे। एकआध तो रुआँसे भी हो गए थे। पाठकगण सरलता-पूर्वक हम लोगों के उस समय की हृदय की अवस्था का अनुमान कर सकते हैं। "मरता क्या न करता।" मैंने अपने साथियों से कहा—"भाई! तुम लोग तो बैठो, मैं देखता हूँ कि पार जा सकता हूँ या नहीं।"

एक लंबी-मोटी पेड़ की डाल ली। पानी में उतरा। पानी बरफ़ से अधिक ठंडा था, और पहाड़ी झरनों और नदियों का प्रवाह कितना अधिक होता है, यह पाठकगण भली भाँति जानते हैं। आगे डंडे को रखकर पानी की थाह लेता। डंडा जमा देने के पश्चात् क़दम उठाता।

कमर तक पानी आ चुका था। पैर उठे जाते थे। डर लगता था कि यदि बहे, तो सीधे गंगाजी में पहुँच जायँगे, और फिर यमलोक। ऐसा लगता, मानो पानी में कोई छिपा है और पैर घसीटने ही वाला है। मैंने निश्चय कर लिया था कि यदि तनिक भी और अधिक गहराई हुई, तो वापस लौट जाऊँगा। आधी दूर पहुँचा, फिर आगे बढ़ा। कहीं कमर तक पानी, कहीं और नीचा, कहीं ऊँचा! खैर, किसी प्रकार उस पार पहुँचा। भगवान् को जिस सच्चे हृदय से उस दिन स्मरण किया, मुझे विश्वास है, उसके पूर्व वैसा कभी नहीं किया। अब फिर प्रश्न हुआ अपने साथियों को पार लाने का। मेरा मन फिर उस पार जाने को न होता था, पर करता क्या। फिर मौत का सामना किया। मैंने अपने साथियों से कह दिया—"प्रत्येक मनुष्य तीन टाँगों की सहायता से बढ़े (दो प्राकृतिक, एक डंडा)। यदि एक भी बहा, तो सब मरेंगे।" लड़का बीच में किया गया। परमात्मा ने सहायता की—उस पार आए। थोड़ी देर सब बेदम होकर लेटे रहे। फिर भगवान् को हृदय से धन्यवाद दिया, और चंडीदेवी से प्रार्थना की—"महारानी, बुलाना तो बार-बार, पर ऐसी कठिन परीक्षा न लेना। हम लोग फ़ेल हो जायँगे।" बालू का मैदान पार कर नाव के पास पहुँचे। मल्लाह से जब मैंने पूरा क़िस्सा सुनाया, तो उसने कहा—"बाबू! आप रास्ता भूल गए थे, नहीं तो इतना बीहड़ रास्ता है नहीं। आप लोग भी तो बिना पंडों के अकेले ही चल दिए!"

उस दिन मुझे समझ पड़ा कि पंडे लाख भूखे गिद्ध की तरह यात्रियों को नोच-खसोट लेते हों, किंतु हमारे पूर्वजों ने इन्हें दान-पुण्य देना इसलिये निश्चित कर दिया था कि ये नवीन नगर या गाँव में पथ-प्रदर्शक का काम भली भाँति करके यात्रियों को सुविधा और सुख पहुँचा सकते हैं। किंतु अब तो सब अपना-अपना ध्येय भूल बैठे हैं, बेचारे पंडों को ही दोष क्यों दिया जाय। अस्तु। गंगा पार की, और धर्मशाला आए। ऐसी घटना-पूर्ण चंडीदेवी की यात्रा रही, जिसे कभी भूलना मेरे लिये असंभव

है । महादेवजी के नील-नामक एक गण के यहाँ तपस्या करने के कारण इसका नाम नील-पर्वत पड़ा । नीलधारा भी उसी के नाम पर है ।

अब हरिद्वार के अन्य मुख्य-मुख्य दर्शनीय स्थानों का संक्षेप में वर्णन करता हूँ—

(१) आसादेवी—रेलवे-लाइन के दूसरी ओर एक पहाड़ी पर स्थित हैं ।

(२) मायादेवी—यह मंदिर गंगा के निकट है ।

(३) भैरवजी का मंदिर—मायादेवी के निकट है ।

(४) अष्टभुजी शिव का मंदिर—मायादेवी के निकट है ।

(५) ज्वालापुर—हरिद्वार से चार-पाँच मील दूर है । यहाँ पंडों की बस्ती अधिक है । यहाँ से दो-तीन मील पर रानीपुर का पुल भी दर्शनीय है ।

भीमगोड़ा—छठे दिन हम लोग ताँगे से लक्ष्मण-झूला चले । ताँगे से जाने से कई सुविधाएँ रहती हैं, जो रेल द्वारा प्राप्त नहीं हो सकतीं । सर्वप्रथम तो मार्ग की शोभा आप भली भाँति अवलोकन कर सकते हैं । दूसरे, मार्ग में जितने भी पवित्र स्थान पड़ते हैं, आप उनका दर्शन कर सकते हैं । । पहले तो चौबीस अवतार का मंदिर पड़ता है । इससे आगे बढ़ने पर भीमगोड़ा (हरिद्वार से प्रायः ३ मील) । पहाड़ी के नीचे एक मंदिर है । आगे एक चबूतरा है, और एक पक्का कुंड । कहते हैं, भीम के पैर रखने से इस स्थान में कुंड हो गया ।

सत्यनारायण—यहाँ से चलकर सत्यनारायण के मंदिर पर रुके । बड़े ज़ोर का पानी बरसा । मंदिर एक कुंड के बीच में बना है, अतः मंदिर तक पहुँचने के लिये एक पुल-सा है । मंदिर छोटा है । यहाँ से थोड़ी दूर पर एक झरना है ।

हृषीकेश—यहाँ से बढ़े, तो हृषीकेश होते हुए पहले लक्ष्मण-झूले पहुँचे । टेढ़े-मेढ़े, ऊँच-नीचे, कँकरीले-पथरीले रास्ते, एक ओर ऊँचे-ऊँचे पहाड़, एक ओर गहरे गड्ढे, हर ओर लहलहाते हुए जंगल, दूर पर नीचे 'घ-घ-घ' करती हुई गंगा आदि का दृश्य, हरी-हरी घास, चारों

ओर फैली हुई हरियाली। दूर से नरेंद्रनगर देखा। इच्छा वहाँ जाने की थी, पर कुछ कारण-वश न जा सके। लक्ष्मण-झूला देखा। अब तो लोहे के
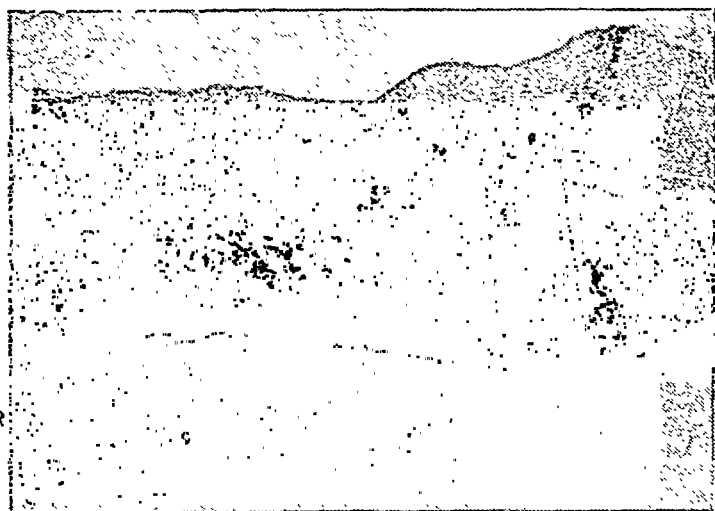
लक्ष्मण-झूले का पुल

रस्सों का बना है, परंतु चलने पर अब भी हिलता है। किंतु जब मैं अपने पिताजी के साथ बदरीनारायण, केदारनाथ, गंगोत्तरी और यमुनोत्तरी गया था, तब पुल न था। मुनि की रेती देखी, कंडी-झप्पान देखे, ठहरने की चट्टियाँ देखीं, बदरिकाश्रम जाते हुए पथिक देखे। लक्ष्मण-झूले पर एक देहाती पुरुष और स्त्री चदरे का एक-एक छोर पकड़े चले जा रहे थे। चदरे के अंदर बच्चा था। वे बदरिकाश्रम जा रहे थे।

उस पार गंगा-तट पर ही एक मंदिर है, वहाँ दर्शन किए। निकट ही एक बड़े बंद कमरे में एक बड़े तेजस्वी और स्वस्थ महात्मा बैठे थे, उनके दर्शन किए। फिर स्वर्गाश्रम घूमे। इसका जैसा नाम है, वैसा ही यह है भी। यहाँ के मुख्य-मुख्य स्थान देखे। यहाँ लोग अपने नाम से रुपया देकर आम के पेड़ लगवा जाते हैं। श्रद्धालु भक्त काली कमलीवाले बाबा

को, जो हो सकता है, भेंट चढ़ाते हैं। कमलीवाले बाबा का ज़िक्र फिर कभी करेंगे। एक ऋषि को देखा, जो सदा खड़े ही रहकर तपस्या करते हैं। वैसे ही सोते और वैसे ही सब काम करते हैं। उनका पैर फूल
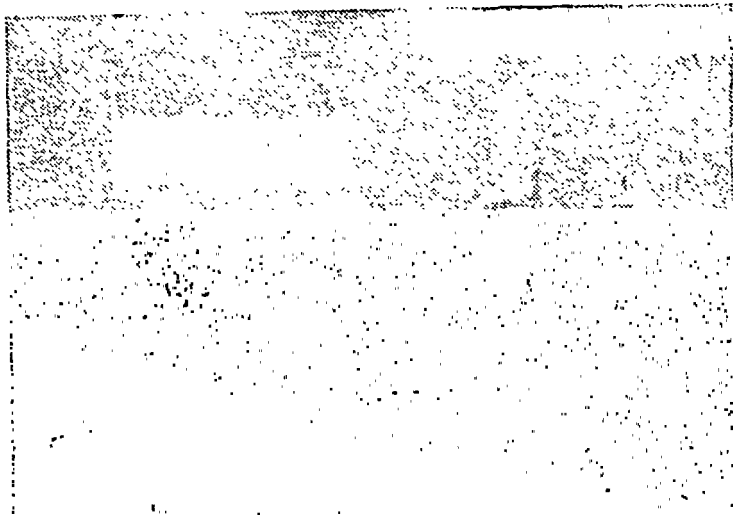
स्वर्गाश्रम का दृश्य

आया था। सीता-कुंड और गरुड़-कुंड देखा। उसके प चात् बालू पार करके गंगा-तट पर आए। उस पार जाने को नाव मिलती है, जो कमली-वाले बाबा की ओर से है। उतराई नहीं देना पड़ती। यहाँ गंगाजी कम चौड़ी हैं, पर बहुत गहरी हैं। जल मटीला और बहाव तेज़ है। नाव छूटने ही वाली थी, अतः बालू पर तेज़ दौड़कर नाव पकड़ी, और पार आए। लक्ष्मण-झूले में लक्ष्मणजी का मंदिर बहुत ऊँचे पर बहुत-सी सीढ़ियाँ चढ़ने पर, पड़ता है। ध्रुव-कुंड और चंद्रशेखर महादेव आदि भी दर्शनीय हैं। यहाँ पक्के घाट नहीं हैं। यहाँ से ताँगे पर बैठकर हृषी-केश पहुँचे। भरतजी का मंदिर यहाँ मुख्य है। वाराह भगवान्, गंगा-घाट पर राम-जानकी का मंदिर. कुब्जाम्रक-कुंड, जिसमें एक झरना भी है, कैलास-आश्रम, शंकराचार्य की गद्दी आदि मुख्य हैं। ध्रुव-घाट भी

बड़ा सुंदर है । यहाँ भी प्रातः-सायं गंगा-तट का दृश्य बड़ा सुंदर होता है । असंख्य मछलियाँ यहाँ हैं, और उन्हें लोग आटे की गोलियाँ खिलाते रहते हैं ।
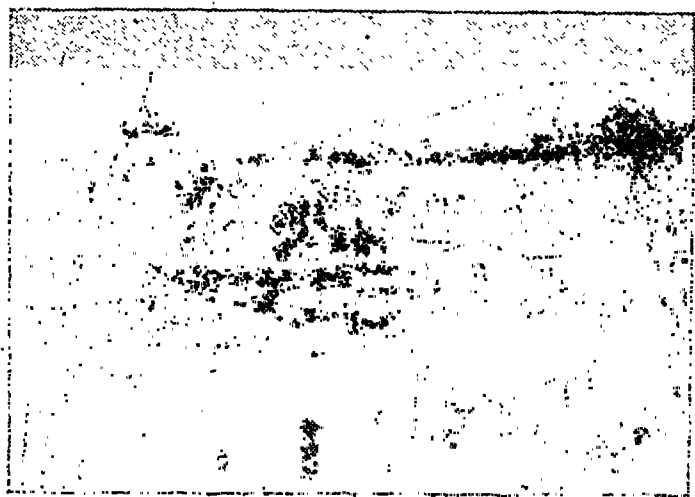
हृषीकेश में भरतजी का शिखरदार मंदिर

गरुड़-चट्टी—लक्ष्मण-झूले से प्रायः तीन मील पर गरुड़-चट्टी है । मार्ग गंगा के किनारे होकर है, जो बहुत आकर्षक और आह्लादकारी है । यह स्थान अत्यंत सुंदर है । यहाँ गरुड़जी का मंदिर है । निकट ही 'गरुड़-कुंड' नामक एक कुंड है । यहाँ बाग बहुत-से हैं । यहाँ का अपूर्व प्राकृतिक दृश्य देखकर प्रायः लोग हरिद्वार वापस चले जाते हैं ।

हरिद्वार में पचासों धर्मशालाएँ हैं । यात्री भी तो यहाँ सदा बने ही रहते हैं । भारत की सप्त-पुरियों में एक यह भी है । इसे गंगा-द्वार भी कहते हैं । यह भारत का अति प्राचीन धार्मिक नगर है । यहाँ गंगा का माहात्म्य अत्यधिक है । यह हरि (विष्णु) द्वार भी कहलाता है । यहाँ मच्छड़ बहुत हैं । सबसे विशेष बात यहाँ की यह है कि यहाँ के कुओं का पानी

ऐसा मीठा होता है, जैसे मिसरी और ऐसा ठंडा होता है, जैसे गली बर्फ़। हरिद्वार में मेले बहुत होते हैं। हर अमावस्या और पूर्णिमा को यहाँ स्नान का माहात्म्य है। मेष की संक्रांति, गंगा-दशहरा और सोमवती अमावस्या को विशेष रूप से मेला लगता है। प्रत्येक छ वर्ष के पश्चात्

हृषीकेश में श्रीराम-जानकी का मंदिर

अर्धकुंभ और बारह वर्ष के पश्चात कुंभ का मेला पड़ता है, जिसमें कई लाख मनुष्य आते हैं। हरिद्वार केवल धर्म का ही नहीं, शिक्षा का भी केंद्र है—ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम तथा गुरुकुल-विश्वविद्यालय का तो वर्णन हो ही चुका है, ज्वालापुर-महाविद्यालय भी यहाँ की एक प्रसिद्ध शिक्षा-संस्था है। हरिद्वार ज़िला सहारनपुर के अंतर्गत है।

दो दिन के पश्चात् हम लोग हरिद्वार लौट आए। दोपहर के समय वहाँ के एरोड्रोम गए, और हवाई जहाज़ पर उड़े। हवाई जहाज़ से हरिद्वार का पूर्ण दृश्य दिखाई देता है। गंगाजी नहीं, मालूम होता है, नाली बह रही है। आदमी कठिनता से एक सेंटीमीटर के दिखाई देते

हरिद्वार से यमुनोत्तरी
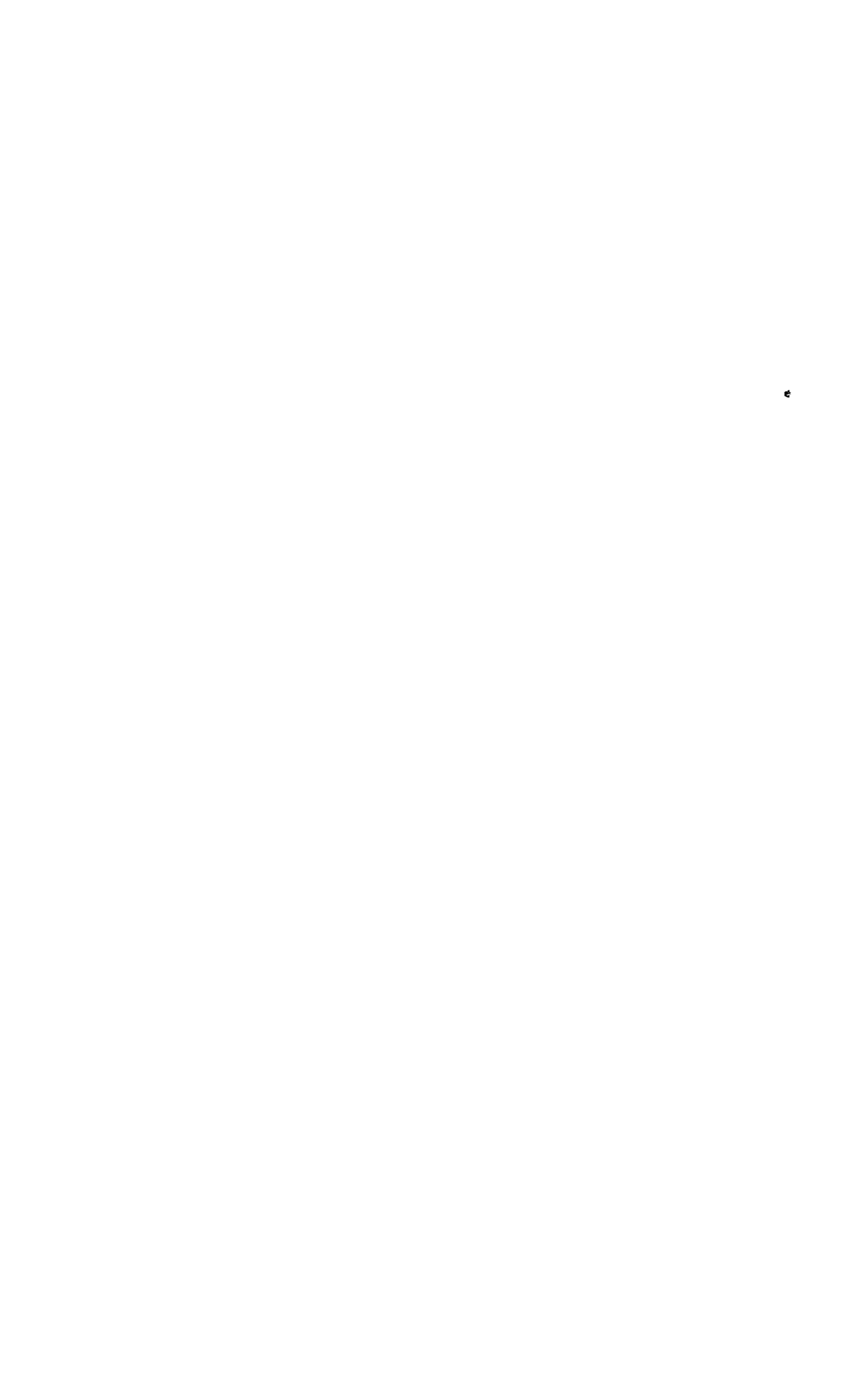
बचपन की स्मृतियाँ कितनी मधुर होती हैं, इसे कौन नहीं जानता। अपने बचपन की साधारण-से-साधारण बातें याद करके मनुष्य का हृदय गद्गद हो जाता है। उस समय का खेलना, पढ़ना और छोटी-छोटी घटनाएँ भी बहुत महत्त्व-पूर्ण और भावी जीवन के लिये लुभावनी होती हैं। साथ ही बालक के हृदय पर जो नक़्शा उस उम्र में बन जाता है, जो अमिट प्रभाव उस समय पड़ जाता है, वह जीवन-भर रहता है। बालकों की प्रवृत्ति और प्रकृति का बहुत कुछ दारोमदार उनकी बचपन की बातों पर होता है। मुझे प्रकृति से जो इतना ज़्यादा प्रेम है, मेरा यात्राओं में जो इतना मन लगता है, तीर्थ-स्थानों की ओर जो मेरा इतना ज़्यादा अनुराग है, और कष्ट सहन करने का जो इतना अभ्यास मुझे हो गया है, उसका बहुत कुछ कारण है मेरा बचपन। मेरे स्वर्गीय पिता लाला सरयूप्रसादजी टंडन बड़े धर्मात्मा पुरुष थे। उनका जीवन पूजा-पाठ में ही बीता। वह प्रायः तीर्थ-यात्राएँ किया करते थे, और माताजी की मेरे बचपन में ही मृत्यु हो जाने के कारण मैं भी सदा उनके साथ रहता।

विवरण की दृष्टि से संभव है, यह पुस्तक बहुत बढ़ी-चढ़ी न हो (और ऐसा होना स्वाभाविक भी है, क्योंकि इन बड़े तीर्थ-स्थानों का पूरा वर्णन एक छोटे-से लेख में नहीं किया जा सकता। एक-एक तीर्थ-स्थान पर अलग-अलग पुस्तकें लिखी जा सकती हैं, और लिखी गई हैं), किंतु इसका महत्त्व मेरे जीवन के लिये महान् है। मेरा उद्देश्य भी इसके लिखने का स्पष्ट है। इसके द्वारा बदरिकाश्रम जानेवाले यात्रियों को थोड़ी-बहुत सहायता मिल सकती और उनका मनोरंजन हो सकता है। यह लेख परिचयात्मक है। इन स्थानों का पूरा ज्ञान प्राप्त करने के

लिये काफ़ी तादाद में पुस्तकें छप चुकी हैं, और उनकी सहायता ली जा सकती है।

बचपन में प्रकृति की हरएक चीज़ में एक निरालेपन, ताज़गी, विचित्रता और ब्रह्मानंद का जो अनुभव होता है, तथा जो प्रभाव हृदय और बुद्धि पर पड़ता है, वह उसी चीज़ को बड़ी उम्र में देखने से नहीं पड़ता, यह भुक्तभोगी भली भाँति जान सकते हैं। बालक के हृदय में सात्त्विकता का पूरा निवास रहता है—समालोचना करने की प्रवृत्ति तथा ज्ञान की कमी भी इसका एक मुख्य कारण हो सकती है।

हम लोग रात को लखनऊ से ई० आइ० आर० से चले, और सबेरे हरिद्वार पहुँचे। चार-पाँच दिन वहाँ रहे, और बदरिकाश्रम जाने का प्रबंध आदि करते रहे। अच्छे दिन हम लोगों ने वहाँ से प्रस्थान किया।

श्रीबदरीनारायण की यात्रा बहुत कठिन समझी जाती है—है भी और यात्राओं से ज़्यादा मुश्किल। हरिद्वार तक, वरन् लक्ष्मण-झूले तक तो यह यात्रा सब यात्राओं के समान ही है, पर लक्ष्मण-झूले से पैदल चलना होता है। (अब तो श्रीनगर तक मोटर भी गई है।) कुछ धार्मिक पुरुष तो हरिद्वार से ही पैदल चलना शुरू करते हैं। हृषीकेश तक पक्की सड़क गई है—मोटरों, ताँगों तथा पैदल चलनेवालों के लिये। हृषीकेश से लक्ष्मण-झूला होकर, पैदल का मार्ग काटकर बदरीनारायण तक क़रीब ८ फ़ीट चौड़ा बनाया गया है। एक सड़क १८ फ़ीट चौड़ी लक्ष्मण-झूले के इसी पार से गंगा के प्रवाह से दक्षिण किनारे पर देव-प्रयाग और श्रीनगर तक गई है। इस सड़क से मोटर पर यात्रा होती है। जिन्हें देवप्रयाग या श्रीनगर तक मोटर से जाना हो, उन्हें चाहिए कि वे एक दिन लक्ष्मण-झूला तक पैदल यात्रा करें, और हृषीकेश लौटते समय स्वर्गाश्रम, जो सचमुच स्वर्ग ही के समान है, ज़रूर देखें। हृषी-केश फिर लौटने का मतलब यह है कि मोटर हृषीकेश ही से मिलते हैं।

लक्ष्मण-झूला पार करके गंगा के एक तरफ़ पहाड़ में बने ८-८ फ़ीट के चौड़े मार्ग में पैदल यात्री यात्रा करते हैं, और विना झूला पार किए ही
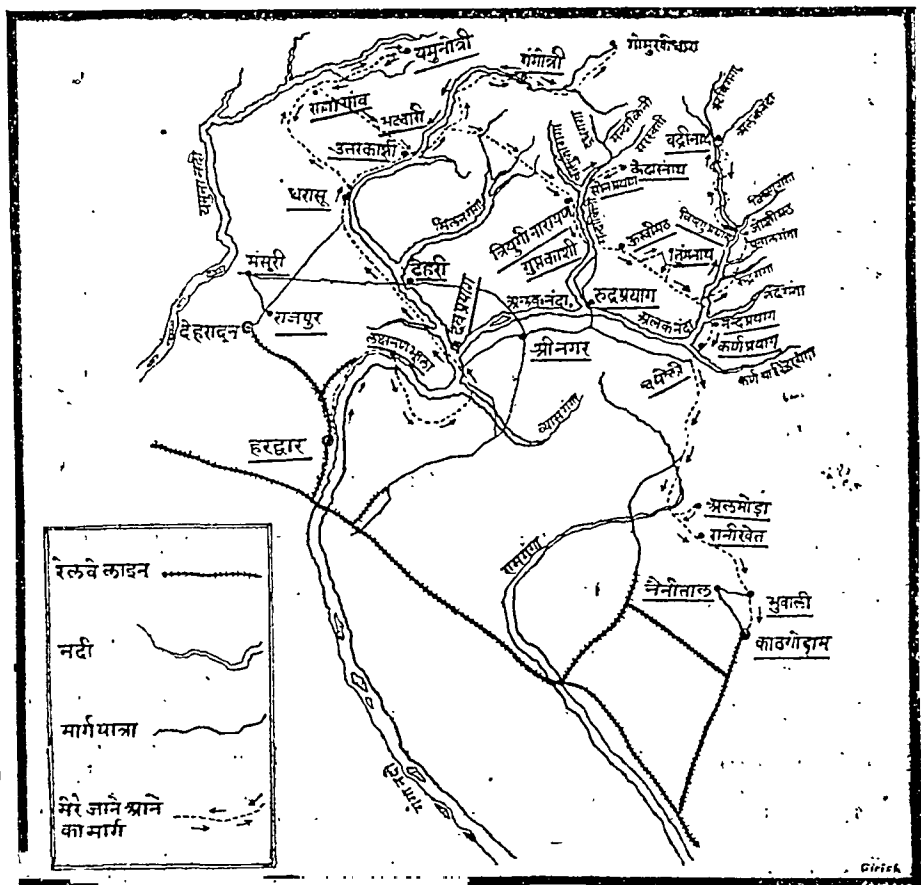
यात्रा-मार्ग का नक़्शा

१८ फ़ीट चौड़ी सड़क से, जो टेहरी राज्य के प्रबंध से गंगा के दक्षिण तरफ़ के पहाड़ में काटकर बनाई गई है, मोटर के यात्री यात्रा करते हैं। बीच में कहीं सैकड़ों फ़ीट नीचे (२५-३० फ़ीट से कम तो कहीं है ही नहीं) भागीरथी गंगा बहती है। पैदलवालों को मोटर के यात्री दिखाई देते हैं, और मोटरवालों को पैदल यात्री।

ये दोनो ही, पैदल और मोटरों के, पर्वत के मार्ग शुरू से लेकर कंधे तक ऊँचे-नीचे बने हैं। कहने का मतलब यह कि चाहे जितना ऊँचे चढ़ जाओ, पहाड़ की चोटी न मिलेगी, चाहे जितना नीचे उतर जाओ, गंगा को ४०-५० फ़ीट नीचे ही बहती पाओगे। इधर-उधर पहाड़, बीच में गंगा—कहीं सैकड़ों फ़ीट और कहीं ४०-५० फ़ीट नीचे बहती हैं। मोटर पर जाने से मोटर के ऊँचे-नीचे चढ़ते-उतरते बड़ा भय मालूम होता होगा। जैसे पहाड़ टेढ़े-मेढ़े हैं, उसी तरह मार्ग भी चक्कर-दार और सैकड़ों फ़ीट ऊँचा-नीचा है। एक ही क़तार में जाते हुए दो आदमी एक १०० फ़ीट ऊँचे पर जा रहा है, तो दूसरा १०० फ़ीट नीचे।

अब मैं संक्षेप में हरिद्वार से यात्रा का आरंभ, स्थानों के नाम देते हुए, करता हूँ।

हरिद्वार से ताँगे से चले। एक मील पर भीम-गोड़ा-चट्टी और फिर ५½ मील पर सत्यनारायण-चट्टी पड़ी। यहाँ से ६½ मील पर रामनगर और १ मील पर हृषीकेश और ३ मील पर लक्ष्मण-झूला है। लक्ष्मण-झूले तक तो ताँगे पर आए, फिर स्वर्गाश्रम आदि देखकर २ मील पर गरुड़-चट्टी गए। गरुड़-चट्टी का वर्णन हो चुका है। कुली आदि तो हम लोगों ने लक्ष्मण-झूले ही से कर लिया था। दाँडी, कंडी या घोड़े द्वारा यात्रा होती है। दाँडी की यात्रा सुखद होती है (खुली हुई एक पालकी-सी सवारी को चार मनुष्य उठाते हैं), पर ख़र्च बहुत होता है। कंडी में (एक मोढ़ानुमा सवारी होती है, जिसे पहाड़ी अपनी पीठ पर लादकर ले चलते हैं। ऊपर आदमी बैठा होता है) कम ख़र्च होता है, पर तकलीफ़ ज़्यादा होती है। हम सब लोग तो पैदल यात्रा कर रहे थे। यहाँ ऐसा क़ायदा है कि कुली बहुत सवेरे ही यात्रियों को जगा देते हैं। आप उन्हें असबाब बाँधकर दे दीजिए, और यह बता दीजिए कि वे किस चट्टी पर चलकर रुकें। वे उस स्थान पर आपसे पहले पहुँच जायँगे, और बैठने-भर की जगह

साफ़ कर लेंगे। पहाड़ी ईमानदार होते हैं, साथ ही लक्ष्मण-झूले में ही लिखा-पढ़ी हो जाती है। और, यदि कोई भी कुली मार्ग में किसी तरह की बदमाशी करे, तो उसकी रिपोर्ट की जा सकती है। बोझ ढोने की मज़दूरी आपकी यात्रा की लंबाई, आपके बोझे की तौल और 'सीज़न' पर रहती है। आप उस दिन कुलियों को चवन्नी देने के लिये ज़रूर मजबूर होंगे, जिस दिन आप कहीं विशेष रूप से दो-एक दिन ठहरने की इच्छा करें। यों तो हर रोज़ इनाम के बहाने वे लोग कुछ-न-कुछ ले ही लेते हैं, पर आपकी ख़ुशी से।

सबेरे हम लोग गरुड़-चट्टी से चले। २ मील पर फ़ुलवाड़ी-चट्टी है। यहाँ से सीढ़ीनुमा बने खेत दूर पर बड़े सुंदर लगते हैं। एक पुल हिमावती का पार करना पड़ता है, और ३ मील पर गूलर-चट्टी है। फिर चढ़ाई है। यहाँ से फिर १½ मील पर महादेव सैण-चट्टी है। यहाँ से पहाड़ की चढ़ाई शुरू होती और बड़ी बीजनी-चट्टी के बाद ख़त्म होती है। महादेव सैण-चट्टी पर एक विशेष घटना हुई। सुना था, यहाँ २-३ मील पर, एक पहाड़ी पर, महादेवजी का मंदिर है—बड़ा सुंदर स्थान है। वहाँ हममें से २-३ आदमी गए, किंतु मंदिर तक न पहुँच सके। मार्ग भूल गए, और पहाड़ियों के बीच चक्कर काटना पड़ा। पहाड़ में मार्ग भूल जाना कितना भयानक होता है, यह भुक्तभोगी ही जान सकते हैं। नगर का मार्ग थोड़े ही है कि भूल गए, तो कुछ चक्कर पड़ जायगा। पहाड़ की ऊँची-नीची, खाईं-खड्डवाली, पथरीली भूमि में मार्ग भूलना—जहाँ आदमी न आदमज़ाद, जिससे पूछ सको, और न कोई बाहर निकलने का उपाय ही। यहाँ से ½ मील पर नई मोहन-चट्टी है। यहाँ रात में ठहरने का सुबीता है। २ मील पर छोटी बीजनी-चट्टी आई, और साथ ही कड़ी चढ़ाई भी, और फिर ½ मील के बाद बड़ी बीजनी-चट्टी। ३ मील पर न्योड़ खाल-चट्टी और ३ मील पर कुंड-चट्टी आती है। यहाँ से उतार शुरू होता है, और गंगा के निकट ३ मील पर

बंदरमेल-चट्टी है, फिर ३ मील पर महादेव-चट्टी। यहाँ शिवजी का मंदिर है।

हरिद्वार से बदरिकाश्रम तक सरकारी मील के पत्थर लगे हैं, इसलिये दूरी का पता मिलता रहता है, और यात्रियों को बड़ा ढारस भी। मार्ग का दृश्य बहुत सुंदर होता है, पर शीघ्र ही अपने निर्दिष्ट स्थान पर पहुँचने के फेर में लोग आँखों से देखते और बढ़ते चले जाते हैं। फिर हर ओर दृश्य-ही-दृश्य है, इसलिये तबियत भी कुछ भरी-सी रहती है। महादेव-चट्टी पर शिवजी का मंदिर भी है। २१/२ मील चलकर ओखलाघाट-चट्टी और १ मील पर सिमाला-चट्टी पड़ती है। यहाँ एक मंदिर और एक झरना है। यहाँ से २ मील पर खंडा-चट्टी और १ मील पर कांडो-चट्टी है। इस मार्ग में घुमावदार रास्ता है— फिर ऊँचाई और फिर निचाई। रास्ते-भर फलों के पेड़ दिखाई देते हैं— चकैया आड़ू, आम, केला आदि। हम और हमारी बड़ी बहन खूब मार्ग-भर में, जहाँ पा सकते, फल तोड़कर खाते चलते।

पिताजी की आँख बचाकर यह चोरी करनी पड़ती, क्योंकि यदि वह देख लेते, तो बकन भी पड़ती, और फल भी छीनकर फेंक दिए जाते। वह समझाते—"जंगली फल खाने से बीमार हो जाओगे।" हम लोग भी समझते, ठीक है, किंतु फल देखते ही लार टपकने लगती। फल का लोभ बीमारी के डर को दबा लेता। (मार्ग में लगे हुए जंगली फल और पहाड़ी अँबिया तथा अनार कभी न खाने चाहिए। इससे आदमी बीमार हो जाता है।) सचमुच मेरे बदन-भर में फुड़ियाँ निकल आईं—शरीर सड़-सा गया। काफ़ी कष्ट रहा, किंतु जैसे आप ही फुड़ियाँ आईं, वैसे ही बिना कहे चली भी गईं। परमात्मा की कृपा यह रही कि मेरे पैर में फुड़िया नहीं निकली, किंतु मेरी बहन ने यह बात भी दूर कर दी—उनका पैर पक गया। किंतु वाह री उनकी हिम्मत—दिन-भर चलना और रात को कभी-कभी हाय-हाय करना! २-४ दिन के लिये उनके

लिये कंडी भी कर दी गई। अंत में उनका पैर ठीक हो गया। कहावत प्रसिद्ध है—"बच्चों के पैरों में शक्ति होती है।" हम लोग थकते ही न थे—यह बचपन का तक़ाज़ा था, फिर नवीन वस्तुएँ देखने का उत्साह भी। लड़कों के लिये तो प्रत्येक वस्तु नई होती है, और उन्हें साधारण-से-साधारण वस्तु भी बहुत चित्ताकर्षक मालूम होती है। उसका कारण है—कम वस्तुएँ देखने के कारण उनका तुलनात्मक ज्ञान कम होता है, और समालोचना तो बच्चे कर ही नहीं सकते। दूसरा कारण होता है उनके हृदय की पवित्रता और सत्यता, जैसा मैं पहले कह चुका हूँ।

कांडी-चट्टी में गोपाल-मंदिर देखने के बाद चले। यहाँ एक झरना भी है। फलों के पेड़—केला, अनार, आम, नींबू आदि—इस ओर अधिक हैं। चट्टी अच्छी है। १ मील पर भैरोखाल-चट्टी है, जहाँ श्रीशुकदेव और गणेशजी के मंदिर हैं। यहीं पुल से व्यास-गंगा पार करनी पड़ती हैं। फूलों के पेड़ और पौधे बहुत हैं। यहाँ भागीरथी और व्यास-गंगा का संगम है। २ मील पर **व्यास-घाट-चट्टी** (उस पार) है। यहाँ व्यास-मंदिर, राम-घाट और साखी-गोपाल-मंदिर हैं। ३½ मील पर छालड़ी और २ मील पर उमरासू-चट्टी है। यहाँ एक झरना है। २ मील पर **सौड़(बीछू)-चट्टी** है। लोगों ने बहुत डरा दिया था कि यहाँ बिच्छू बहुत हैं, पर भगवान् की कृपा से एक भी बिच्छू छत से चट्टी में नहीं गिरा, जैसा लोग कहते थे। यहाँ से २ मील पर देवप्रयाग है।

देवप्रयाग—हरिद्वार से देवप्रयाग ५९ मील है। मोटर ३-४ घंटे में देवप्रयाग पहुँच जाती है। देवप्रयाग प्रधान स्थान है। यहाँ अलकनंदा और भागीरथी का संगम है। एक झूलेदार लोहे का पुल पार करके संगम पड़ता है तथा बस्ती में पहुँचते हैं। यहाँ एक ओर से अलकनंदा बदरीनारायण से आई है, और दूसरी ओर से पहाड़ काटती हुई भागीरथी। १०० फ़ीट नीचे उतरने पर संगम मिलता है। ऐसे झूलेवाले कई पुल

बदरिकाश्रम जाते समय रास्ते में पड़ते हैं। घाट पर राम-मंदिर है, जो, कहा जाता है, जगद्गुरु शंकराचार्य ने स्थापित किया है। यहाँ का दृश्य बहुत ही सुहावना है। यहाँ पंडों के मकान बहुत हैं। अलकनंदा के दोनो ओर काफ़ी बड़ी बस्ती है। यहाँ श्राद्ध, मुंडन आदि भी यात्री करते हैं। दोनो पहाड़ों के बीच में यह बस्ती है। पहाड़ होने के कारण एक मकान ऊँचे पर है, तो एक नीचे पर। पहाड़ों के बीच में होने के कारण समतल भूमि यहाँ नहीं मिलती, इसलिये बस्ती गिचपिच है। इन मार्गों में कहीं-कहीं पनचक्कियाँ भी चलती दिखाई देती हैं।

झरनों की यहाँ कमी नहीं। कहीं-कहीं झरने बड़ी तेज़ी से चलते हैं, कहीं-कहीं छोटी नहरों के समान बड़े वेग से बहते दिखाई देते हैं। वहाँ के निवासी अपनी चक्की चलाने के अनुकूल इनका बहाव काटकर बनाते हैं। जहाँ से बहाव ले जाते हैं, वहाँ एक डंडा लगाते हैं, जिसमें नीचे के भाग में लोहे की कुछ ज़ंजीरों में पंख-से लगे होते हैं। उस डंडे के पंखों के तरफ़वाली, नीचे की नोक के नीचे, जो शायद लोहे की बनी हो—मैं समझता हूँ, डंडा भी लोहे का होता होगा—एक ओखली-सी बनाते हैं (शायद वह भी लोहे की होती हो)। उसी ओखली में डंडा इस तरह पहनाते हैं कि जब जल-प्रवाह पंखों में लगे, तो डंडा घूमने लगे। फिर डंडा ऊपर निकालकर उस स्थान को तख़्ते आदि से पाट लेते हैं। एक चक्की का पिल, जिसका डंडे से लगाव नहीं होता, ऊपर डंडे में कर देते हैं, जो डंडे के साथ घूम-घूमकर आटा पीसा करता है।

पहाड़ी यात्राओं में झरनों की शोभा विशेष होती है, इसलिये झरनों के बारे में भी कुछ कहना है। अक्सर ऐसा भी होता है कि मीलों झरने पड़ते ही नहीं। पर ज़्यादातर झरने पड़ते रहते हैं, या नदी के आस-पास होकर मार्ग जाता है। हमारे पुरखों ने यह धाम और इस धाम जाने का मार्ग ऐसा बनाया है, जिससे हिमालय के प्राकृतिक दृश्यों का पूरा ज्ञान इस ओर से जानेवाले यात्रियों को हो जाय।

हाँ, तो कुछ झरनों का पानी गंदा होता है, और कुछ का खराव। जगह-जगह उन झरनों का पानी पीने से भी यात्री को पेचिश हो जाती है। उस पानी में पत्थर के बहुत बारीक कण मिले होते हैं, जो पेट में जाकर नुक़सान करते हैं। इस पहाड़ी यात्रा से आकर अक्सर लोग बीमार पड़ जाते हैं। इसका कारण एक तो यह कि यहाँ पानी की चक्की का पिसा आटा खाने को मिलता है, और, कहते हैं, यहाँ का कच्चा पत्थर भी आटे के साथ कुछ पिस जाता है। दूसरे, घी तथा नाज का बहुत दिनी या खराब होना भी एक कारण हो सकता है। दूध ज़रूर यहाँ अच्छा मिलता है, लेकिन कुछ महँगा। तरकारियों, खासकर हरी तरकारियों, की भी यहाँ कमी रहती है। बहुधा आलू ही सब कहीं मिलते हैं। कहीं-कहीं लोग दूध के दाम नहीं लेते। एक बार पिताजी मेरे लिये दूध लेने एक गाँव गए। वहाँ के गाँव के माने हैं ८-१० घरों की बस्ती। हरएक चट्टी पर दूध नहीं मिलता। वहाँ के एक पहाड़ी ने कहा—"लड़के के लिये दूध ले लीजिए, पर दाम न लेंगे। लड़का जैसे आपका, वैसे हमारा।"

मैं बीमारी के कारण बता रहा था। लोग चलते रहते हैं, और रास्ते में झरना पड़ा कि उन्होंने प्यास बुझाई। न सुस्ताते हैं, न कुछ पहले खाते हैं। यह बुरा है। पहले तो कुछ थोड़ा-सा खाकर पानी पीना चाहिए, फिर पानी थिरा लेना चाहिए, जिससे मिट्टी के कण बैठ जायँ, और कुछ सुस्ताकर पीना चाहिए। पिताजी हम लोगों के खाने के लिये कुछ-न-कुछ ज़रूर बाँध लेते थे। हम लोग रास्ते-भर खाते चलते थे। इससे तबियत भी लगी रहती थी, और इधर-उधर का पानी पीने से विशेष हानि न होती थी। पिस्ता, बादाम, किशमिश, मुनक्के आदि मेवा ज़रूर साथ ले लेना चाहिए।

यहाँ से दो मार्ग हैं—एक तो वह, जो सीधा बदरीनाथजी जाता है, और दूसरा वह, जो गंगोत्तरी जाता है। हम लोगों को गंगोत्तरी

जाना था, इसलिये भागीरथी का पुल पार करके दूसरा मार्ग पकड़ा। अलकनंदा के बाएँ ओर का (बदरिकाश्रम का) मार्ग छूटा, और उन यात्रियों का साथ भी, जो सीधे बदरिकाश्रम जा रहे थे।

चढ़ाई यहां से शुरू होती है। ४ मील के बाद **खोबे-गाँव**, १ मील पर **धोलार-घाट का झरना** जो स्नान के लिये उपयुक्त स्थान है, और २ मील पर **बिडकोट-चट्टी** है। मार्ग कठिन है, पर प्राकृतिक दृश्यों की कमी नहीं। इस ओर गुलाब आदि फूलों तथा अखरोट, चीड़, देवदारु आदि के पेड़ बहुत मिलते हैं। ८ मील के बाद **खरसाड़-चट्टी** है। यहां रात को ११ मील चलने के बाद विश्राम किया। यहां पानी काफ़ी नीचे से लाना पड़ता है। १ मील पर **नागो**, ४ मील पर **कैंथोली** और ५ मील पर **खाली-चट्टी** है। कोटेश्वर होते हुए दूसरे दिन रात को **बंडरिया-चट्टी** पर ठहरे। यहां से ८ मील पर कमार्ग और ६ मील पर टेहरी राजधानी है। प्रायः १२ मील चलकर **टेहरी (या गणेश-प्रयाग)** में ठहरे। ३ मील ऊपर चढ़ाई पर महाराज का भवन (प्रतापनगर) है। यहां श्रीबदरीनाथ और श्रीकेदारनाथ के मंदिर हैं। भागीरथी और मिलन-गंगा का संगम है। नगर में जाने के लिये लोहे का झूला है। यहाँ अच्छी बस्ती है। रमणीक स्थान है। टेहरी से पांच मील पर सराई-चट्टी है। **सराई-चट्टी** से २ मील आगे चलकर ठहरे। ७½ मील आज चले। यहां से ५½ मील पर **पीपल-चट्टी** और ६ मील पर **भल्डियाना** है। ६ मील चलकर ठहरे। यहां अच्छी धर्मशाला है, और वह सड़क भी मिलती है, जिससे होकर मसूरी होते हुए लोग गंगोत्तरी जाते हैं। इस ओर का मार्ग कठिन है। चट्टियों भी ज़रा-ज़रा दूर पर हैं। कहीं-कहीं पानी की भी क़िल्लत है। एक और विशेषता इस मार्ग में यह है कि काली कमलीवाले बाबा की ओर से इस मार्ग की ख़ास-ख़ास सब चट्टियों और स्थानों पर प्रबंध है, जिससे ग़रीब-अमीर, सबको सुविधा हो सकती है।

यहाँ से ३ मील पर छाम-गाँव, २ मील पर नगून-गाँव और ५ मील पर धरासू-चट्टी है। दस मील चलकर यहाँ ठहरे। यहाँ काली

धरासू के पास हमारे मार्ग का एक दृश्य

कमलीवाले बाबा की धर्मशाला है। साँपों का डर इस ओर बहुत है। गंगाजी के किनारे-किनारे पुल पार करके चलना पड़ता है। इस ओर का दृश्य बड़ा लुभावना है। नीचे धड़धड़ाती हुई गंगा और ऊपर पेड़ों से

ढकी पहाड़ों की चोटियाँ। कहीं-कहीं दूर बरफ़ से ढकी चोटियाँ दिखाई देती हैं। कहीं-कहीं नीचे सीढ़ियों की भाँति बने खेत थे। बड़ा सुहावना दृश्य था। आमले के पेड़ इस ओर बहुत हैं। यहाँ से फिर दो मार्ग हो गए हैं—दाहनी ओर गंगोत्तरी का मार्ग है, और बाईं ओर यमुनोत्तरी का। हम लोगों को पहले यमुनोत्तरी जाना था, इससे हम लोग बाईं ओर चले।

३ मील पर कल्याणी, ५ मील पर कुंभडाँड़ी-चट्टी, ३ मील पर सिलक्यारा। पास ही एक झरना है। १४ मील चलकर यहाँ ठहरे। फिर कठिन चढ़ाई है। ४ मील पर राँड़ी का डाँड़ा है। इस ओर जांगोरा, साठो, आलू आदि की खेती होती है। ८ मील पर गंगाणानी-चट्टी पड़ी। प्राकृतिक दृश्य यहाँ का बड़ा लुभावना है। सिलक्यारी से मार्ग ख़राब है—५ मील पर राँड़ी की कठिन चढ़ाई है—प्रायः ८,००० फ़ीट ऊँची। मार्ग में पानी की कमी है। २ मील पर उडाल-गाँव है, जहाँ एक झरना है। २ मील पर सिमली-चट्टी और २ मील यमुना के किनारे-किनारे चलने पर गंगाणानी है। यहाँ रात को ठहरे। यहाँ का प्राकृतिक दृश्य बड़ा सुंदर है। मक्खियाँ यहाँ बहुत हैं। यमुना-नदी यहाँ बहुत तेज़ बहती है। फिर ६ मील पर यमुना कुयनोर-चट्टी है। यह सुंदर स्थान है। बड़ी बेढब चढ़ाई और उतार तथा घने जंगलों और पथरीले मार्ग के बाद ४ मील पर ओजरी-चट्टी, ३ मील पर राना-गाँव, ३ मील पर हनुमान्-चट्टी है। १४½ मील चलकर आज यहाँ ठहरे। ४ मील आगे ख़रसाली-चट्टी है। यहाँ शनि देवता का एक मंदिर है। आगे ४ मील के विकट मार्ग के बाद यमुनोत्तरी है।

यहाँ हम लोग २-३ दिन रहे। यहाँ यमुनाजी का मंदिर है। गरम पानी के कई कुंड हैं, जिनमें अग्नि-कुंड, गौरी-कुंड और सूर्य-कुंड आदि मुख्य हैं। यहाँ सरदी बहुत ज़्यादा पड़ती है। आते समय मार्ग में भी कहीं कहीं बर्फ़ मिलती है—कभी-कभी ऊपर से भी गिरती है। मार्ग में

भी बड़ी सरदी पड़ती है। लकड़ी यहाँ नहीं मिलती—नीचे से आती है, इसलिये महँगी पड़ती है। यमुनाजी की मूर्ति तो विशाल है, पर मंदिर छोटा है। यहाँ मैं और मेरी बहन दिन-भर गरम पानी के कुंड में नहाते। पहलेपहल जब हम लोग नहाने गए, तो पानी में उठता हुआ धुआँ देखकर हिम्मत न पड़ी। फिर ज़रा-सा पैर डाला, तो पानी गरम अदहन-सा था। एक बूढ़े बाबाजी, जो स्नान करके देह पोंछ रहे थे, हम लोगों की शायद मनोभावना समझ गए। उन्होंने कहा—"बच्चा, नहा लो, कोई डर नहीं। अभी डर लगता है, फिर जलोगे नहीं।"

हम लोगों ने कहा —" बाबाजी! पहले आप उतरिए, तो हम लोग नहाएँ।"

बच्चे तो हम लोग थे ही। बाबाजी ने कहा—"बच्चा, हम तो नहा चुके, नहीं तो नहा लेते।"

तब बहन ने कहा—"तो बाबाजी, हम लोग भी नहीं नहाएँगे।"

बाबाजी ने हँसकर कहा—"अच्छा बच्चा, नहाते हैं।" और, एक-दो और दर्शकों की ओर घूमकर उन्होंने कहा—"बच्चे भगवान् के अवतार हैं।"

वह पानी में उतरे, और हम लोग भी। यह घटना तो मामूली है। उस समय मैं इसका महत्त्व न समझ सका था, किंतु आज जब मैं उस घटना को सोचता हूँ, तो उस पुण्य भूमि के साधु और यहाँ के साधुओं का भेद समझ पाता हूँ।

फिर तो हम लोग बराबर नहाते या आलू लेकर, पुटकिया में बाँध-कर, पानी में डाल देते। कुछ समय बाद आलू गल-से जाते, और हम लोग नमक के साथ तप्त कुंड के अधगले आलू खाया करते। कैसे स्वर्गीय दिन थे वे!

यहाँ एक विशेष बात हुई, जिसे मेरे स्वर्गीय पिता बार-बार कहते थे। एक दिन रात के कोई सात बजे होंगे। पिताजी अपनी चट्टी में बैठे थे।

हम लोग यमुनोत्तरी से गंगोत्तरी चले। यहाँ से १० मील पर राणा-गाँव है। रात एक मंदिर में ठहरे। यहाँ से ७ मील पर कुश्नोर, १० मील पर उपरिकोट और ७ मील पर उत्तर-काशी है। गंगाजी के मणि-कर्णिका-घाट पर विश्वनाथजी का तथा कई और छोटे-छोटे मंदिर हैं। लक्षेश्वर महादेव का मंदिर है। यहाँ डाकखाना, पुलिस-स्टेशन, औषधा-लय आदि सब हैं। इसके आस-पास की भूमि वारणावत कहलाती है। कहते हैं, यहीं पांडवों को जलाने के लिये लाक्षागृह बनवाया गया था।

यहाँ से १½ मील पर नगाणी-चट्टी (असी गंगा और भागीरथी का संगम) और ८ मील पर मुनेरी-चट्टी है। रात को यहाँ ठहरे। यहाँ झरनों का प्राकृतिक दृश्य बहुत सुंदर है। दिन में मक्खियाँ बहुत दिक़ करती हैं।

यहाँ से ८ मील पर भटवारी-चट्टी है। यह एक अच्छा नगर-सा है। यहाँ भास्केश्वर महादेव का प्राचीन मंदिर और बड़ी बस्ती है। जयपुर के महाराज का अंबिकेश्वर का मंदिर है। एक मंदिर में एक त्रिशूल और एक फरसा भी है, जो परशुरामजी का कहा जाता है। अनेक मठ, मंदिर और पाठशालाएँ हैं। रात को यहाँ ठहरे।

१० मील पर गंगणानी-चट्टी है। यह बड़ा सुंदर स्थान है। यहाँ एक झरना बहुत ऊँचाई से गिरता है। गंगाजी के उस ओर एक गरम पानी का कुंड है, जो ऋषि-कुंड कहलाता है। इस ओर अखरोट के पेड़ भी हैं। रात को यहाँ विश्राम किया। इसके आगे सुंदर पहाड़ी दृश्य है।

५ मील पर राणा-चट्टी और ४ मील पर सूकी-चट्टी है। इसके पहले ही सोन-गंगा और भागीरथी का संगम पड़ता है। यह स्थान बहुत सुंदर है। यहाँ से दूर पर, ऊँचाई पर, पहाड़ी हिस्से में बर्फ़ दिखलाई पड़ती है।

यहाँ से १ मील पर झाला-चट्टी और ४ मील पर हरसिल-चट्टी है। यहाँ श्रीलक्ष्मीनारायण का मंदिर है। यह स्थान श्याम-प्रयाग भी

कहलाता है। यहीं भोटिए लोग तिब्बत से आकर ठहरते हैं। कई छोटी-छोटी नदियों का भागीरथी से संगम है। यहाँ गंगा बहुत तेज़ बहती हैं। बहुत नीचे, गंगा के पास, एक बड़ा मैदान-सा है। यहाँ का
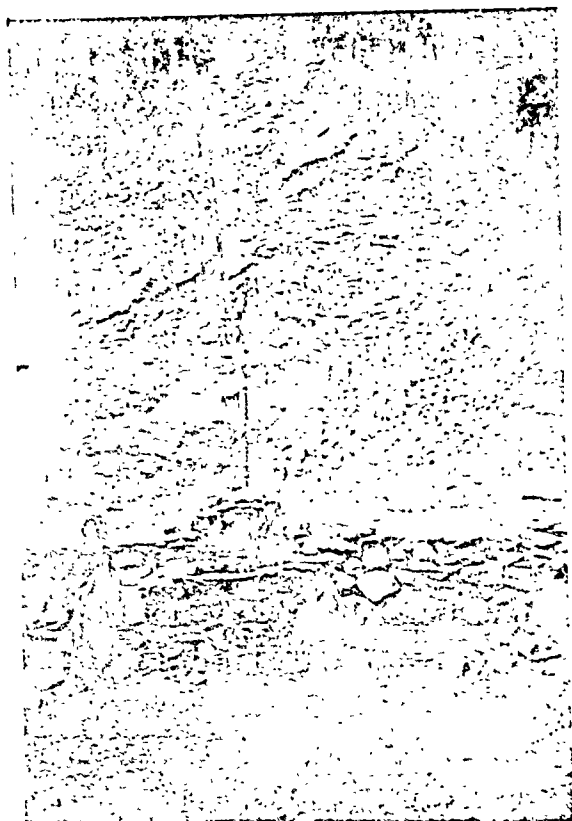
वाँगोरा-गाँव के तिब्बतियों की देवी का स्थान

दृश्य देखकर डर लगता है। यहाँ श्याम-गंगा का पुल—पुल क्या है, नदी के आर-पार दो बड़े पेड़ डाल दिए गए हैं, जो पुल का काम करते हैं—है। यहाँ से वाँगोरा-गाँव पहुँचे। इस ओर तिब्बतियों की

बस्ती है। यहाँ एक देवी का मंदिर है। इसके बाद ही हरसिल पड़ता है। यहाँ देवदारु के पेड़ बहुत हैं। इस स्थान का दृश्य बहुत सुंदर है।

२ मील पर धराली-चट्टी है। यहाँ एक शिव-मंदिर है। पास ही जह्नु मुनि और मार्कंडेय ऋषि का आश्रम भी है। जाड़े के दिनों में गंगोत्तरी से यहीं गंगाजी की मूर्ति ले आते हैं, और यहीं उन दिनों पूजा होती है, जब गंगोत्तरी और उस तक पहुँचने का मार्ग बर्फ़ से ढक जाता है। यहाँ सुरा गाय बहुत मिलती हैं। इनकी पूँछ घोड़े की तरह होती है, और बाल रीछ की तरह घने। यहाँ पंडों की बस्ती बहुत है। यह बस्ती धराली के उस पार है, जिसे मुखवामठ कहते हैं। यहाँ लकड़ी चीरने के कारखाने जंगल में बहुत हैं। लकड़ी नदी में बहा दी जाती है।

यहाँ से ७ मील पर भैरव-घाटी-चट्टी पड़ती है। यहाँ एक बड़ा लोहे का पुल बना है। दृश्य बड़ा भयावना है। चढ़ाई बिलकुल सीधी है। एक गरम कुंड और एक भैरवजी का मंदिर है।

यहाँ से ५ मील पर गंगोत्तरी है। इस मार्ग में बहुत ज़्यादा सरदी पड़ती है। रास्ते में लड़के-लड़कियाँ तथा स्त्रियाँ तागा और सुई बहुत माँगती हैं। यह स्थान बहुत सुहावना है। जयपुर-महाराज का बनवाया गंगाजी का मंदिर है। दो पर्वतों के बीच में, बीच की सकरी घाटी में, गंगाजी के बाईं ओर गंगाजी का छोटा मंदिर है। गंगाजी के उस पार जाने के लिये एक पुल बना है। यहाँ भागीरथी का केदार-गंगा से संगम है। गंगा का जल इतना ठंडा है कि नहाने से शरीर सुन्न हो जाता और ऐंठ-सा जाता है। गंगा-मूर्ति के निकट ही यमुना, सरस्वती, भागीरथ और श्रीशंकराचार्य की मूर्तियाँ हैं। यहाँ गंगा का पाट काफ़ी बड़ा है, और पानी इतना ठंडा कि हड्डी तक काँप जाय। यहाँ भागीरथी शिला पर पिंड-दान किया जाता है। देवदारु आदि के पेड़ इस ओर बहुत हैं।

मसूरी से उत्तर-काशी सीधे मार्ग से ६४ मील है। कुछ लोग मुआरखोल से सीधे मार्ग से न जाकर बाएँ हाथ जाती हुई एक पगडंडी से जाते हैं,

गौरी-कुंड
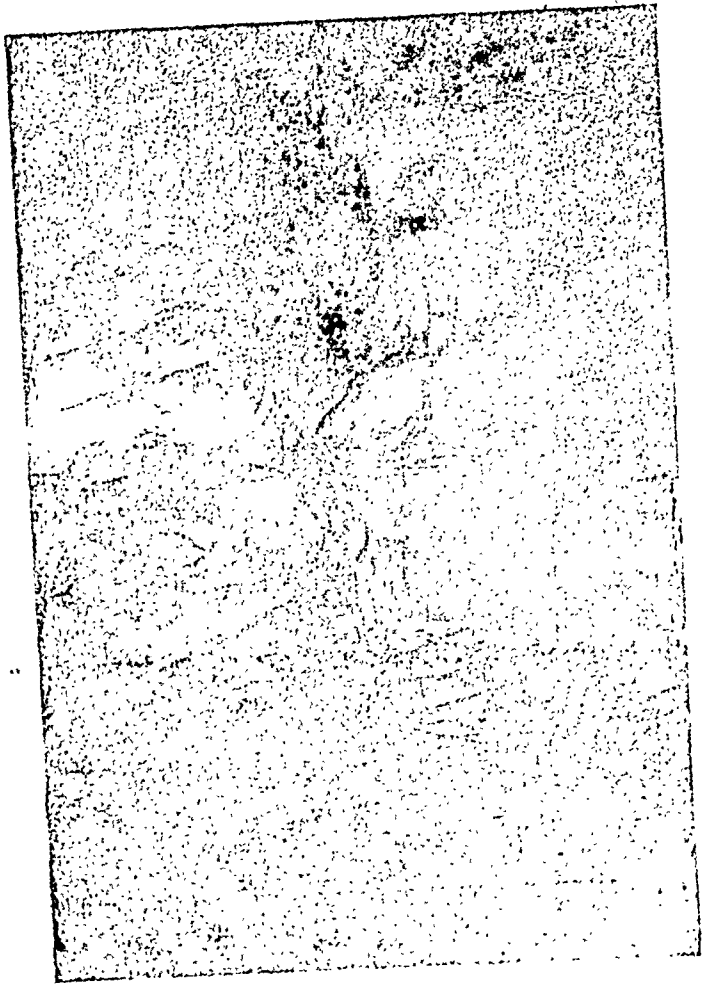
जो भवाना होते हुए धरासू पहुँचाती है। पर यह मार्ग ठीक नहीं है, यद्यपि इससे १४ मील का फ़र्क़ सीधे मार्ग से (कम) पड़ता है। एक पगडंडी ऐसी ही तयाड़ से धरासू जाती है। इससे और मुख्य मार्ग से ८ मील (कम) का अंतर पड़ता है। पर ये दोनो मार्ग निर्जन और

कठिन उतार-चढ़ाव के अनुपयुक्त हैं। कुछ लोग गंगोत्तरी नरेंद्रनगर होते हुए जाते हैं। हृषीकेश से नरेंद्रनगर ६ मील, फकोह ११ मील, नजानी १० मील, चंगा ५ मील, टिहरी १२ मील है। टिहरी से उत्तर-काशी ४४ मील है, जिसका वर्णन हो ही चुका है। पर यह मार्ग सिर्फ़ फक्कड़ और घुमक्कड़ यात्री ही पसंद करते हैं। देवप्रयाग (और मसूरीवाला मार्ग उससे कम)वाला मार्ग अधिक प्रचलित है।

गंगोत्तरी आते समय मार्ग में दो विशेष उल्लेखनीय घटनाएँ हुईं। एक दिन बड़े ज़ोर का पानी बरस रहा था। इत्तिफ़ाक़ से सारे साथी आगे-पीछे हो चुके थे। पानी कहता था, आज ही बरसूँगा। पानी-ही-पानी था—पगडंडी दिखाई न देती थी। पिताजी, मैं और मेरी बहन, केवल तीन प्राणी एक साथ थे। शाम होने ही वाली थी। प्रलय के बादल छाए थे, और अँधेरा भी हो गया था। पिताजी मार्ग भूल गए। कुछ समय बाद पानी तो हल्का पड़ गया, लेकिन अँधेरा बढ़ता गया। हम लोग इधर-उधर भटकने लगे। पिताजी बहुत निराश हो गए। अंत में यही तय हुआ कि अगर थोड़ी देर और मार्ग ढूँढ़े न मिला, तो रात को यहीं रुकना ज़्यादा अच्छा होगा, नहीं तो यदि कहीं गिर पड़े, तो जान जायगी। पर गंगोत्तरी की सरदी और खुला मैदान। पिताजी के पास सिर्फ़ एक ऊनी चदरा था। न खाने को पास, न और कपड़ा। या तो रात को ठिठुरकर मर जायँगे, या संभव है, कोई जानवर खा जाय। मार्ग न मिला। पिताजी रुआसे-से बैठ गए। बहन से कहा—"इसे (मुझे—लेखक को) तो धोती बिछाकर, चदरा उढ़ाकर सुला ही देंगे। हमारा-तुम्हारा ईश्वर मालिक है।"

इतने ही में एक कुत्ता दिखलाई दिया। उस सुनसान जगह में उसे देखकर पिताजी को बहुत ख़ुशी हुई, अचरज भी कम न हुआ। कुत्ता हम लोगों के पास आ गया, और अपनी मूक भाषा में जैसे कुछ कहना चाहता हो। पिताजी ने कहा—"ऐसा जान पड़ता है, मानो स्वयं भैरवजी

आए हैं । चलो, इनके पीछे-पीछे चलें । देखें, यह कहाँ जाते हैं ।"

कुत्ता आगे-आगे दौड़ता, और जब ज्यादा आगे निकल जाता, तो रुक जाता, और हम लोगों की ओर देखता, मानो हमारी राह देखता हो। हम लोगों के पास आ जाने पर वह फिर आगे बढ़ता । होते-होते वह ठीक उस चट्टी के पास आ गया—भगवान् जाने किस मार्ग से होता हुआ, जहाँ हम लोगों के साथी रुके थे । सबके घबराए हुए चेहरे खिल गए । लेकिन चट्टी के पास आते ही न-जाने वह कहाँ ग़ायब हो गया । जब पिताजी ने सबको यह घटना बतलाई, तो एक बाबाजी ने, जो वहीं टिके थे, कहा—"सचमुच वह भैरवजी ही थे । नहीं तो बच्चा, ऐसे स्थान में, ऐसे समय कुत्ता कहाँ । बड़े भाग्यवान् हो, तुम्हें भैरवजी के दर्शन हुए ।"

भैरव-घाटी-चट्टी और गंगोत्तरी के बीच एक दुर्घटना भी हुई । गंगाजी के किनारे-किनारे हम लोग पगडंडी पर जा रहे थे । घ-घ-घ करती हुई गंगा हज़ारों फ़ीट नीचे बहुत तेज़ बह रही थीं—बिलकुल खड़ी चट्टानों के नीचे । इत्तिफ़ाक़ से मेरी बहन का पैर फिसला । मैं उनकी उँगली पकड़े था । वह गंगाजी की ओर गिरीं, और मैं भी । लेकिन ८-१० फ़ीट नीचे एक चबूतरा-सा बना था—कठिनता से १½-२ गज़ चौड़ा होगा, और नीचे वे ही खड़ी चट्टानें और गंगा । बहन नीचे हुईं, और मैं उनकी छाती पर । हम लोगों के ज़रा खरोंच भी नहीं लगी । लेकिन अगर एक भी हवा का झोंका चल जाता या हम लोग एक फ़ीट भी आगे बढ़कर गिरते, तो सीधे गंगाजी में जाते । पर जिसकी ज़िंदगी है, उसे कौन मार सकता है ? बड़ी कठिनता से और बहुत डरते-डरते हम लोग ऊपर किए गए । गंगोत्तरी पहुँचने पर जब यह घटना वहाँ के लोगों को सुनाई गई, तो उन्होंने कहा—"उस ओर का मार्ग इतना अधिक भयानक है कि वहाँ नीचे चबूतरा-सा कहाँ ? तेरे बच्चों को तो स्वयं गरुड़ भगवान् ने अपने पंखों पर रोक लिया ।"

गंगोत्तरी के दो-तीन दिन के निवास में इन घटनाओं का ज़िक्र बराबर होता रहा।

यहाँ से १०-१२ मील पर गोमुखी धारा है। कुछ दूर तक इस मार्ग में हम लोग भी गए, पर ठीक गोमुखी धारा तक नहीं पहुँचे। मार्ग बहुत बीहड़, डरावना और कठिन है। ठंड का तो कुछ हाल ही न पूछिए। अस्तु। थोड़ी दूर जाकर हम लोग लौट आए। यहाँ चारों ओर बर्फ़-ही-बर्फ़ है। देवदारु, हारचा, थुनेर और भोजपत्र के पेड़ भी हैं। यहाँ से केदारनाथ की यात्रा शुरू होती है। गंगोत्तरी से भटवारी तक तो उधर से जाना पड़ता है, जिधर से आए थे। भटवारी से दूसरा मार्ग लेते हैं।

भटवारी से हम लोग आगे बढ़े। पहले एक पुल पार किया। २½ मील पर सौड़-गाँव पड़ा। फिर लगभग ७ मील पर सियाली-चट्टी पड़ी। इस ओर बड़ी कड़ी चढ़ाई है। यहाँ भी मक्खियाँ बहुत हैं। फिर लगातार जंगल-ही-जंगल चलना पड़ता है। ६ मील पर घुन्नू-चट्टी है। यहाँ बड़ी सीलन है। पानी नहीं मिलता। एक झरना है। ठंडक बहुत है। एक धर्मशाला भी है।

यहाँ से ४ मील पर बेलक की चढ़ाई मिली, जो इस ओर सबसे ऊँची कही जाती है। यहाँ भी बहुत ठंडक होती है। इस ओर जंगल-ही-जंगल है। ६ मील पर गंगराणा-चट्टी है। पास ही झरना है। यहाँ विश्राम किया। यहाँ से ४ मील का भयानक उतार है। कहीं पानी बरस जाय, तो फिसलाहट की न पूछिए। उस समय न चलना चाहिए। फिर २ मील की चढ़ाई के बाद झाला-चट्टी है। मार्ग जंगल का है।

यहाँ से ५ मील पर बूढ़ा केदार है। यहाँ धर्म-नदी और बाल-गंगा का संगम है। एक शिव-मंदिर है, जो बहुत पुराना है। यहाँ रात को विश्राम किया। फिर उतार-चढ़ाव की ४ मील की भयानक यात्रा के बाद भैरव-चट्टी है। यहाँ भैरव और हनुमान्‌जी का मंदिर है। मार्ग जंगल से होकर है।

३ मील के बाद भोर-चट्टी है। यहाँ भी भयानक मक्खियाँ होती हैं। जंगल-चट्टी के बाद ५-मील पर धुत्तू या गुत्तु-चट्टी है। यह स्थान भृगु-गंगा के किनारे है। यहाँ विश्राम किया। इस ओर मार्ग में बर्फ़ भी पड़ती है, और चढ़ाई भी। भयानक चढ़ाई और जंगलों से होकर मार्ग है। १ मील पर गोपाल-चट्टी, ७ मील पर दो फुंद-चट्टी – कड़ी चढ़ाई है। ३ मील पर पवाँली-चट्टी है। यहाँ जाड़ा अधिक पड़ता है। यहाँ रात को विश्राम किया। यहाँ से ६ मील पर मेगूँ-चट्टी है। मार्ग बहुत ख़राब है,

और भूल जाने पर डर रहता है। इस ओर बर्फ़ भी पड़ती है। इसे 'मेगू का माड़ा-चट्टी' भी कहते हैं। यहाँ भी काफ़ी ठंडक थी। विश्राम किया। ५ मील पर त्रियुगी नारायण हैं। मार्ग का दृश्य अत्यंत सुंदर और लताओं तथा फूलों से भरा है। यहाँ विष्णुजी का मंदिर तथा कई और छोटे मंदिर और कुंड हैं। मंदिर के अंदर सभा-मंडप है, जहाँ धूनी जलती हुई दिखलाई देती है। कहते हैं, त्रेतायुग से यह धूनी जल रही है। और, यहीं शिव-पार्वती का विवाह हुआ था। यहाँ भी मक्खियाँ बहुत हैं। ब्रह्म-कुंड, रुद्र-कुंड, विष्णु-कुंड, सरस्वती-कुंड आदि मंदिर के पास ही हैं, जो प्राचीन हैं। मंदिर के बीच में हवन-कुंड है। यहाँ अच्छी बस्ती है। यहाँ से यात्रा का मार्ग बहुत अच्छा हो जाता है। २½ मील के बाद सोन-प्रयाग है, जहाँ वासुकी गंगा और मंदाकिनी का संगम है। फिर १ मील के बाद सिरकटा गणेश-चट्टी है। यहाँ गणेशजी का मंदिर है। शिवजी ने यहीं गणेशजी का सिर काटकर हाथी का मस्तक लगाया था।

यहाँ से २ मील पर गौरी-कुंड है। यहाँ गरम और ठंडे जल के कई कुंड हैं। दो मंदिर भी हैं—एक शिव-पार्वती का और दूसरा कृष्णजी का। यहाँ से १ मील पर चोर-पटिया भैरव-चट्टी है। जैसे जगन्नाथपुरी जाने के बाद यदि यात्री 'साक्षी गोपाल' साक्षी देने न जाय, तो यात्रा का फल नहीं होता, वैसे ही यहाँ यदि भैरवजी पर वस्त्र न चढ़ाया जाय तो, कहते हैं, यात्रा का फल नहीं होता। ये सब पंडों के पुजवाने के ढंग हैं।

यहाँ से १ मील पर आमूर या जंगल-चट्टी है। कुछ दूर पर 'भीमशिला' है, जहाँ भीमसेन की मूर्ति है। २ मील पर रायवाड़ा-चट्टी है। ३½ मील पर मंदाकिनी गंगा का पुल पार करके श्रीकेदारनाथजी हैं। पुल के पास गंगाजी का मंदिर है। इस ओर मार्ग में बर्फ़ भी पड़ती है। सरदी केदारनाथजी में बहुत होती है।

यहाँ केदारनाथजी की मूर्ति नहीं है। इसके बारे में एक पौराणिक कथा है। एक बार श्रीकेदारनाथजी भैंसे का रूप धारण किए पर्वत पर घूम रहे थे। भीमसेनजी ने उन पर गदा चला दी। बेचारे पृथ्वी में धँस गए। अगला धड़ पशुपतिनाथ के नाम से नैपाल पहुँच गया, पिछला श्रीकेदारनाथ जी हैं। यह द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से हैं। मंदिर में एक बड़ा घी का दीपक चौबीसों घंटे जलता है।

मंदिर के सामने एक बहुत बड़ा नंदी है। फिर गणेशजी हैं। उसके बाद मंदिर में आते हैं। एक कमरा पार करने के बाद एक बड़ा भारी शिवलिंग पड़ता है, जिसका घेरा प्रायः १० फीट और उँचाई २½ फीट होगी। लिंग पर सर्प, त्रिशूल आदि के चिह्न हैं। और पंडों का कहना है, उस पर चारो वेद अंकित हैं। बरामदे में चारो ओर द्रौपदी, कुंती, पार्वती, लक्ष्मी तथा पाँचों पांडवों आदि की मूर्तियाँ हैं। परिक्रमा में कई कुंड पड़ते हैं। जैसे अमृत-कुंड, ईशान-कुंड, हंस-कुंड, रेतस्-कुंड, उदर-कुंड आदि। ये ठंडे जल के कुंड हैं। इस ओर कभी-कभी बर्फ़ पर चलना पड़ता है, जिससे पैर सुन्न हो जाते हैं। यहाँ भी केदारनाथजी की पूजा ६ महीने ऊखीमठ में होती है (जब यह मार्ग जाड़े में बर्फ़ से ढक जाता है)। यहाँ कई और छोटे-छोटे मंदिर हैं। यहाँ कई नदियों—मंदाकिनी, सरस्वती और दूध-गंगा—का संगम भी है। यहाँ 'भैरवझाँप' वह स्थान है, जहाँ पहले मोक्ष की आशा में फाँदकर लोग प्राण-विसर्जन करते थे। यहाँ आस-पास और देखने योग्य स्थान ये हैं—'भगवान् का बाग,' 'चोरबाड़ी ताल' (यह बहुत मनोहर स्थान है), ब्रह्म-गुफा आदि। १०-१२ मील पर वासुकी-ताल भी है।

केदारनाथजी समुद्र की सतह से ११,५०० फ़ीट की ऊँचाई पर हैं। मंदिर के एक मील पहले से ही चौरस भूमि मिलने लगती है। इसी भूमि पर केदारनाथजी की बस्ती है। केदारनाथजी से कुछ दूर पहले

बड़े-बड़े मैदान हैं । मंदिर बस्ती के एकदम पीछे है। मुख्य मंदिर के ठीक पीछे ऊँचा पर्वत है, जिससे वहाँ की शोभा बहुत बढ़ जाती है। भूगोल में हम हल्की हवा (Rarified air) के बारे में पढ़ चुके हैं । यहाँ उसका कुछ अनुभव किया जा सकता है। इधर लकड़ी बड़ी महँगी है, क्योंकि केदारनाथजी के आस-पास ३-४ मील तक कुछ पैदा नहीं होता । हाँ, एक खास तरह की घास और पौधे ज़रूर मार्ग में आस-पास उगते हैं, जिनसे कमज़ोर और बूढ़े यात्री कभी-कभी बेहोश-से हो जाते हैं ।

मंदिर से ३-४ फ़र्लांग की दूरी पर वह स्थान है, जहाँ से मंदाकिनी निकली है, लेकिन असली निकलने की जगह तो बर्फ़ से ढकी होने के कारण दिखाई नहीं देती । एक बहुत बड़ा शिलाखंड है, जिसके नीचे से बहुत तेज़ी के साथ बहता हुआ जल ज़रूर दिखलाई देता है ।

यहाँ १५-२० धर्मशालाएँ हैं । कार्त्तिक की पूर्णिमा के बाद केदारनाथजी की पंचमुखी चल मूर्ति रावलजी ऊखीमठ ले जाते हैं, जहाँ ६ महीने पूजा होती है ।

केदारनाथ से बदरीनाथ

हम लोग दो दिन केदारनाथजी में रहकर बदरीनाथजी चले। सोन-प्रयाग तक उसी राह से लौटे। सोन-प्रयाग से २ मील पर रामपुर-चट्टी और २ मील पर बादल-चट्टी है। यहाँ का दृश्य बड़ा मनोमोहक है।
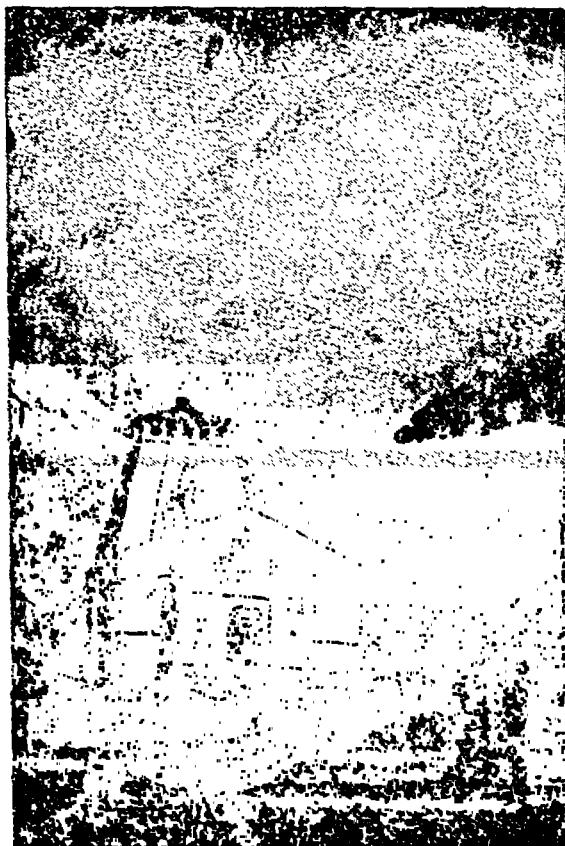
श्रीकेदारनाथजी का मंदिर

३ मील पर फाटा-चट्टी है। यहाँ विश्राम किया। १ मील पर 'शक्ति मंदिर माई का भूला'-चट्टी है। यहाँ दुर्गाजी का एक मंदिर है। यहीं

महिषासुर का वध हुआ था। २ मील पर नारायण कोटी या व्योंज-चट्टी है। यहाँ कई पुराने मंदिर और कुंड हैं—जैसे सत्यनारायण, वीरभद्रेश्वर महादेव, भैंसासुर आदि। यहां से २ मील पर मोतादेवी, १ मील पर नालाचट्टी और १½ मील पर गुप्त काशी है। गुप्त काशी में हस्तिकुंड से गंगा और गोमुख से यमुना की धारा निकलती है। विश्वेश्वर भगवान् का मंदिर है। सामने गरुड़जी का मंदिर है। पास ही गौरी और पार्वती की मूर्तियाँ भी हैं। एक मंदिर अर्धनारीश्वर महादेव का है। २ मील की कठिन चढ़ाई के बाद ऊखीमठ है। यहाँ कई श्रेष्ठ मंदिर हैं। यह बहुत पुराना और पौराणिक स्थान है। यहीं ऊषा-अनिरुद्ध का विवाह हुआ था। यहाँ जल की कुछ कमी है। यहाँ अस्पताल, डाकखाना, पुलिस-चौकी, काली कमलीवालों की धर्मशाला आदि हैं। मंदिर में पंचमुखी श्रीकेदारनाथ का सोने का मुकुट है। सामने रावलजी की गद्दी है। महाराज मानधाता की मूर्ति है। और ओंकारेश्वर महादेव हैं। पार्वती की मूर्ति है। ऊषाजी का भी मंदिर है। अगल-बगल में तारा, सीता, द्रौपदी आदि की मूर्तियाँ हैं। केवल एक बात और बताना है। जाते समय जो चढ़ाइयाँ थीं, वे अब ढाल बन गई थीं। १½ मील लगातार उतरने के बाद मंदाकिनी के तट पर पहुँचकर उस पार गए। वहाँ की १½ मील की खड़ी चढ़ाई के बाद ऊषीमठ पहुँचे।

यहाँ से ३ मील पर ब्रह्म या गणेश-चट्टी है, और २ मील पर दुर्गा-चट्टी, जहाँ दुर्गाजी की मूर्ति है। ३ मील पर पोथीवासा-चट्टी है, फिर भयानक जंगल के बाद ३ मील पर, बनिया-चट्टी है। बनिया-चट्टी पहुँचने के पहले ४ मील की कड़ी चढ़ाई और घने जंगल पड़ते हैं। अखरोट, आड़ू, चीड़, देवदारु, खरसू, भोजपत्र आदि के पेड़ बहुत हैं। यह स्थान बहुत रमणीय है। बाबा कमलीवालों की धर्मशाला है। यहाँ से २ मील की बहुत कड़ी चढ़ाई के बाद १४,००० फ़ीट पर तुंगनाथ हैं। यहाँ बर्फ़ नहीं थी। इस ओर पानी की कमी है। पुलकना-चट्टी

पर अवश्य जल मिल जाता है। वनिया-चट्टी से १ मील डबल चिट्टा-चट्टी, २ मील के बाद चोपटा-चट्टी और ३ मील पर तुंगनाथ-चट्टी है, जिसका वर्णन ऊपर हो चुका है। यहाँ अमृत-कुंड में गंगा की धारा पहाड़ से आती हुई गिरती है। बड़ी कड़ी चढ़ाई के बाद मंदिर पहुँचते हैं। यहाँ कई और मंदिर भी हैं। सामने बर्फ से ढकी हुई पहाड़ों की चोटियों की बहार खूब है। यहाँ से बड़ा लंबा उतार है। ३½ मील बाद भीमद्वार-चट्टी है, जहाँ से श्रीबदरीनारायण का रास्ता मिल जाता है। ३ मील पर पाँगर वासा-चट्टी और ४ मील पर मंडल-चट्टी है। यहाँ से २ मील पर सिरोला-चट्टी और २½ मील पर वैतरणी-कुंड-चट्टी है। दो छोटे मंदिर हैं। लक्ष्मीनारायण और शंकरजी के दर्शन किए। एक झरना भी है। ½ मील पर गोपेश्वर-चट्टी है। यहाँ शिवजी का बड़ा मंदिर है। प्रदक्षिणा में गणेश, परशुराम, पार्वती, गरुड़ आदि के मंदिर हैं। यहाँ विष्णु-मंदिर अधिकता से मिलते हैं, शिव-मंदिर नहीं। मंडल-चट्टी से लेकर यहाँ तक देवदारु, चीड़, केला, नारंगी-फल आदि के पेड़ तथा धान के खेत बराबर दिखाई देते हैं। यहाँ से ३ मील के बाद चामोली या लाल साँगा-चट्टी है, जो बहुत सुंदर तथा सुविधा-जनक स्थान है। हरिद्वार से सीधे बदरीनाथ आनेवाले जो कर्ण-प्रयाग और नंद-प्रयाग होते हुए आते हैं, उनकी सड़क यहीं केदारनाथवाली सड़क से मिलती है। यह अलकनंदा पर बसा है। यहाँ पुलिस-स्टेशन, अस्पताल, डाकखाना तथा पक्के घर हैं। स्थान सुंदर है, पर मच्छड़ और डाँस बहुत हैं। यहाँ के बाद पेड़ों की कमी होने लगती है। यहाँ अलकनंदा झूले से पार करनी पड़ती है। २ मील बाद मठ-चट्टी, २ मील पर सिया-सैण-चट्टी, १ मील पर हाट-चट्टी, २ मील पर पीपल-कोटी-चट्टी है। यह स्थान अच्छा है। यहाँ कई दूकानें हैं। ४ मील पर गरुड़-गंगा-चट्टी है। यहाँ से मक्खियों तथा मच्छड़ों की कमी हो जाती है। यहाँ गरुड़जी का मंदिर है, और गरुड़-गंगा का अलकनंदा से संगम। पुल के ऊपर

एक छोटी-सी मठिया है, जिसमें गरुड़जी की मूर्ति है। २ मील पर टंगणा-चट्टी, २ मील पर पाताल गंगा-चट्टी, २ मील पर गुलाब-कोटी-चट्टी है। यहाँ लक्ष्मीनारायणजी का मंदिर है। २ मील पर कुमार या हेलंग-चट्टी है। यहाँ का दृश्य अच्छा है, और स्थान स्वच्छ। २ मील पर खनोटी-चट्टी, १ मील पर झड़कुला-चट्टी, २ मील पर संघघाट-चट्टी और १ मील पर प्रसिद्ध **जोशीमठ** है। केदारनाथ आदि की भाँति जाड़े में छ महीने बदरीनारायण की मूर्ति भी यहाँ रहती है। यहाँ नर-नारायण के तथा और कई मंदिर हैं। परिक्रमा में द्रौपदी और गरुड़ भगवान् की मूर्ति पड़ती है। सामने एक छोटे मंदिर में दुर्गा और गणेश की मूर्तियाँ हैं। मंदिर श्रीशंकराचार्यजी का बनवाया कहा जाता है। यहाँ कई कुंड हैं। नरसिंह-धारा और दंड-धारा में नहाने का माहात्म्य है। यहाँ कई झरने हैं। बस्ती और बाज़ार अच्छा है। यहाँ से कैलास को भी सीधा मार्ग जाता है।

यहाँ से २ मील बाद **विष्णु-प्रयाग** है, जहाँ विष्णु-गंगा और अलकनंदा का संगम है। बदरीनाथ की चढ़ाई यहीं से शुरू होती है। अलकनंदा पुल से पार की जाती है। इधर पक्की चट्टानें हैं, इससे सड़कें बनाना सरल नहीं। यात्री पुल से उस पार जाकर फिर सड़क पर से जाते हैं। आकाश-गंगा तथा अन्य कई छोटी नदियाँ अलकनंदा में मिली हैं। चारो ओर ऊँचे-ऊँचे पहाड़ हैं। यहाँ विष्णुजी का मंदिर है। १ मील पर बल्दोड़ा-चट्टी, ४ मील पर घाट-चट्टी और २ मील पर **पांडुकेश्वर-चट्टी** है। यहाँ योग-बदरी और वासुदेवजी के मंदिर हैं। यह चट्टी गंगा-तट पर बसी है। पांडव यहाँ कुछ दिन रहे थे। उनके लिखे ४ ताम्र-पत्र हैं, तथा खेलने की चौपड़ बनी है। यहाँ से वह पहाड़ दिखाई देता है, जहाँ पांडवों ने जुआ खेला था। कुछ यात्री वहाँ जाते भी हैं, पर मार्ग बहुत खराब है। पांडुकेश्वर से हनुमान्-चट्टी तक बहुत उतार-चढ़ाववाला और खराब मार्ग है। सड़क अलकनंदा से ५०-६० फ़ीट ऊँचाई पर है। यहाँ

सैनिटोरियम-भवन के एक हिस्से का दृश्य
(भवाली-सैनिटोरियम)

से १ मील पर शेष-धारा, १ मील पर विनीक या गणेश-चट्टी और १ मील पर लामबगड़-चट्टी। लामबगड़ से १ मील चलकर अलकनंदा का पुल पार करना पड़ता है। पुल ख़राब है, और मार्ग भयानक। अलकनंदा का जल बड़े ज़ोर से बहता है। हनुमान्-चट्टी के निकट घृत-गंगा अलकनंदा से मिलती हैं। ३ मील पर हनुमान-चट्टी है। यहाँ से पास ही वैखानस-तीर्थ है। ३ मील पर कांचन-गंगा और १ मील पर कुबेर-शिला है। इस ओर का यह पूरा मार्ग ही अलकनंदा के किनारे-किनारे है। यहाँ से मार्ग बहुत ऊँचा-नीचा होता है। गणेश-मंदिर और कुबेर-शिला बदरीनाथ पहुँचने के पहले ही पड़ जाती है। कुबेर-शिला से बदरीनाथ के दर्शन होने लगते हैं। हनुमान्-चट्टी से ५ मील बदरीनाथ हैं। हनुमान्-चट्टी से बदरीनाथ की सड़क ख़राब है। सरदी बढ़ जाती है। इस ओर वृक्षों की भी कमी है। यह विचार कि हम बदरीनाथ के इतने निकट आ गए हैं, यात्रियों के हृदय में एक अवर्णनीय उल्लास भर देता है। मार्ग ऊँचा-नीचा, ख़राब है। कहीं-कहीं बर्फ़ पर भी चलना पड़ता है। कष्ट देनेवाला मार्ग जैसे काटे नहीं कटता। सोचते हैं; किसी तरह मार्ग कटे, और अपना अंतिम लक्ष्य, जिसके लिये २॥ महीने से चल रहे हैं, आ जाय, और हमारा जीवन धन्य हो।

दोपहर के पहले ही हम लोग बदरीनाथ पहुँच गए—तपस्या पूर्ण हुई। हनुमान्-चट्टी से ही भक्त 'श्रीबदरीविशाल की जय' के नारों से आकाश गुँजाने लगते हैं। ऐसा करें भी क्यों नहीं। २, २॥ महीने की कठिन यात्रा और कष्टों के बाद बड़े भाग्य से बदरीनाथ के दर्शन हुए हैं। बस्ती यहाँ की घनी है, जो अलकनंदा के तट पर है। यहाँ अस्पताल, डाकख़ाना, थाना, पुस्तकालय, पक्के और ऊँचे-ऊँचे मकान, सभी हैं। बाज़ार बड़ा है, और ज़रूरत की सभी चीज़ें मिल जाती हैं— हाँ, काफ़ी महँगी अवश्य। पुरी के दोनो ओर पहाड़ हैं, जो नर-नारायण कहलाते हैं। यहाँ भी केदारनाथजी की भाँति दिया जलाकर, पूजा करके छ महीने

पट बंद रहते हैं। संक्रांति पर फिर पट खुलते हैं, तो दिया जलता हुआ पाया जाता है। यह भगवान् की माया है। मंदिर छोटा है। भगवान् की मूर्ति लगभग हाथ-भर की लंबी होगी, जो काले पत्थर की है। मूर्ति बहुत पुरानी और पद्मासन लगाए चाँदी के सिंहासन पर विराजमान है, जो श्रीशंकराचार्यजी द्वारा स्थापित कही जाती है। इनके दाहनी ओर कुबेर, उद्धव, गणेश, गरुड़ और बाईं ओर नर-नारायण की मूर्तियाँ हैं। निकट ही घंटाकर्ण हैं, जो क्षेत्रपाल कहलाते हैं। पंडे कहते हैं, यहाँ १० मन चावल का भोग लगाकर प्रसाद यात्रियों को बाँटा जाता है। यह स्थान बहुत सुंदर है। यह स्वाभाविक है कि यहां चीज़ें महँगी हों, क्योंकि हरिद्वार से बदरीनाथ काफ़ी दूर है, और यहां तक बकरियों पर लादकर सामान लाया जाता है, न-जाने कितनी कठिनाइयों से। यहां सरदी बहुत पड़ती है, पर बदरीनाथ का मंदिर गंगोत्तरी और केदारनाथ से कम ऊँचे पर है। सीढ़ी चढ़कर मंदिर का फाटक पड़ता है। सुंदर फाटक के सामने ही एक छोटे चबूतरे पर गरुड़ भगवान् की मूर्ति है। मंदिर में अंजनीकुमार की विशाल मूर्ति है। प्रसाद-घर के पास लक्ष्मीजी का मंदिर है। पास ही श्रीशंकराचार्य की गद्दी है। श्रीशंकराचार्य की चाँदी की मूर्ति भी है। भगवान् के दर्शन—सवेरे करीब ८॥ बजे निर्वाण और आरती के दर्शन, १ बजे से ४ बजे सायंकाल तक शृंगार के दर्शन और ६ बजे भोग के दर्शन। यहां भी तप्त कुंड हैं। यहां के और पवित्र स्थान ये हैं—ऋषि-गंगा, नारद-शिला (इसके नीचे नारद-कुंड, ब्रह्म-कुंड, गौरी-कुंड, सूर्य-कुंड आदि हैं), गरुड़-शिला, नृसिंह-शिला, वाराह-शिला, मार्कंडेय शिला, अलकनंदा और ऋषि-गंगा का संगम, प्रह्लाद-धारा, कूर्म-धारा। ब्रह्म-शिला में पिंड-दान होता है।

यहाँ से २ मील पर वसु-धारा है। बदरीनारायण से वसु-धारा जाने के मार्ग में भीमसेन ने नदी पर एक पत्थर रख दिया था, जो पुल का काम देता है। वहाँ एक गाँव भी है। कहते हैं, वहीं पहाड़ पर श्यामकर्ण

घोड़े के दर्शन होते हैं। वसु-धारा का मार्ग पथरीला और कष्ट देनेवाला है। सैकड़ों फ़ीट ऊपर से गिरती हुई धारा के छींटे भी दूर तक जाते हैं। यहाँ कोई विशेष देखने योग्य वस्तु नहीं। मार्ग में केशव-प्रयाग पड़ता है, जहाँ अलकनंदा और सरस्वती का संगम है। वसु-धारा से सत्य-पथ, अलकापुरी और कैलास आदि को सड़कें गई हैं। मार्ग अगम्य है। यहाँ भी हल्की वायु का आनंद मिलता है। कहते हैं, वर्णसंकर संतान पर वसु-धारा के छींटे नहीं पड़ते, और मनुष्यों पर पड़ते हैं। हम सब वसु-धारा तक गए।

भगवान् के मंदिर में भी ऊँच-नीच और ग़रीब-अमीर का विचार किया जाता है। जो वहाँ के पंडों को दक्षिणा दे सकता है, उसे आसानी से दर्शन हो जाते हैं, अन्यथा पंडों और सिपाहियों के धक्के खाने पड़ते हैं। तीन दिन हम लोग यहाँ रहकर लौट पड़े। जब तक बदरीनाथ नहीं पहुँचे थे, तब तक तो थकावट को उत्साह दबा लेता था, किंतु अब, लौटते समय, बड़ी जल्दी पड़ी थी। यात्री थके, ऊबे और शीघ्र घर पहुँचने के उत्सुक होते हैं।

बदरीनाथ से चामोली तक तो उसी मार्ग से आए। लौटते समय ढाल-ही-ढाल पड़ता है। विष्णु-प्रयाग से जोशीमठ तक २ मील की और पाताल-गंगा से पौन मील की केवल दो चढ़ाइयाँ हैं। जोशीमठ से २ फ़र्लांग हटकर सिंहघाट-चट्टी और चामोली से २ मील मठ-चट्टी में ठहरे। स्थान बड़े सुविधा-जनक और उत्तम हैं। चामोली के आगे मंदाकिनी और अलकनंदा का संगम है। यह स्थान बड़ा है। यहाँ पं० महेशानंद शर्मा का एक शिलाजीत का कारखाना भी है। ज्यों-ज्यों नीचे आते जाते हैं, पहाड़ छोटे होते जाते हैं, और वनस्पति अच्छी होती जाती है, चीड़ के पेड़ बढ़ते जाते हैं। झरने भी पग-पग पर मिलते हैं। मार्ग का दृश्य बड़ा मनोमुग्धकारी है। चामोली से २½ मील पर कोयल-चट्टी, २ मील पर पैठाना-चट्टी और ३ मील पर नंद-

प्रयाग है। यहाँ नंद तथा गोपाल का मंदिर है, और अलकनंदा तथा नंद-गंगा का संगम। यहाँ से ३ मील पर सोनला-चट्टी, १॥ मील पर हाड़ाकोटी और १॥ मील पर लंगासू-चट्टी है। स्थान अच्छा है, पर गरमी बहुत पड़ती है। २ मील पर जैकंडी-चट्टी, २ मील पर जमद-चट्टी और ४ मील पर कर्ण-प्रयाग है। यहाँ कर्ण-गंगा और अलकनंदा का संगम है। यहाँ कर्ण का मंदिर है। एक उमादेवी का मंदिर है। कर्ण-प्रयाग के आगे एक पीपल का पेड़ पड़ता है, जिसे पार करते ही पाँचों प्रयागों (नंद-प्रयाग, रुद्र-प्रयाग, सोन-प्रयाग, देव-प्रयाग और कर्ण-प्रयाग) आदि की यात्रा पूरी हो जाती है। ३॥ मील पर सेमली, १॥ मील पर भटोली, ४॥ मील पर आदि बद्री-चट्टी है। यहाँ एक मंदिर है। ४॥ मील पर जोका पानी, २ मील पर दिवाली खाल-चट्टी, १ मील पर काली भट्टी, ३ मील पर गोविंद-चट्टी, १॥ मील पर चुनार घाट और ५ मील पर मेलचौरी है। ३ मील पर सेमल खेत, ५ मील पर चौ-खुटिया, ३॥ मील पर ग्वाली, ५ मील पर चित्रेश्वर-चट्टी, ३ मील पर द्वारा-हाट, ३ मील पर चंडेश्वर, ५ मील पर बगुलिया-पोखर और ७ मील पर मझखाली-चट्टी है। लौटते समय नई चीज़ें देखने तथा भक्ति में कुछ ढीलापन-सा आ जाता है। यहाँ से एक सड़क अलमोड़ा को गई है, और दूसरी रानीखेत को। हम लोग अलमोड़ा भी गए।

अलमोड़ा से भुवाली मोटर-लॉरी पर भी आ सकते हैं, और पैदल के मार्ग से भी घुमक्कड़ यात्री आते हैं। पैदल चलने के रास्ते दो हैं। पहला मार्ग इस प्रकार है— अलमोड़ा से ५ मील घुराड़ी, ४ मील प्यूड़ा, ४ मील नथुवाखान, ४ मील रामगढ़ और ८ मील पर भुवाली है। इस मार्ग से अलमोड़ा से भुवाली २५-२६ मील पड़ता है। रामगढ़ से भुवाली आने में पहले ४ मील उतार और फिर ४ मील चढ़ाव के हैं। केवल प्यूड़ा ही कुछ बड़ी चट्टी है, जहाँ डाक-बँगला भी है। अलमोड़ा से भुवाली का दूसरा पैदल मार्ग यों है—अलमोड़ा से १ मील टोल, २ मील

लोधिया मल्ला १ मील लोधिया तल्ला, ४ मील धुराड़ी (यहाँ दोनो मार्ग मिलकर फिर अलग हो जाते हैं), ४ मील पानधार, ४ मील शीतला, २ मील मुक्तेश्वर है। मुक्तेश्वर से ४ मील नथुवाखान है, और नथुवाखान से भुवाली तक वही मार्ग है। रामगढ़ और मुक्तेश्वर वड़ी चट्टियाँ या पड़ाव हैं। अल्मोड़ा से मुक्तेश्वर १४ मील है। भुवाली से काठगोदाम मोटर-लॉरी जाती है, और पैदल का भी मार्ग है। पैदल के मार्ग से भुवाली से ३ मील खारसाल, १ मील भीमताल, १ मील म्हाड़ागाँव, ३ मील मड़ुवागाड़ा, १ मील चंददेवी, २ मील रानीबाग़, १ काठगोदाम है। मार्ग १४-१५ मील का है। लॉरी के मार्ग से भुवाली से १ मील भुवाली-सैनाटोरियम, २ मील भूमियाधार, ३ मील गेटिया मोटर-स्टेशन, १ मील गेटिया-सैनाटोरियम, २ मील वीरचट्टी, २ मील जूलीकोट (यह मोटर-स्टेशन है। डाकख़ाना भी यहाँ है), ४ मील वेलुवाखान, ३ मील भेडी पखान, १ मील रानीवाग़ और १ मील काठगोदाम है। मोटर-मार्ग से काठगोदाम प्रायः २१ मील है।

कुछ फुटकर बातें लिखकर मैं यह वर्णन समाप्त करता हूँ। इस यात्रा में लगभग ३ महीने लगे। मेरे और मेरी वहन के तो खरोंचा तक नहीं लगा। हाँ, वहाँ से आकर पिताजी इतने अधिक वीमार हुए कि पृथ्वी ही पर उतार लिए गए, पर वाद में अच्छे हो गए।

हम लोग देव-प्रयाग से गंगोत्तरी चले गए थे, इसलिये जो मुख्य-मुख्य चट्टियाँ रह गई हैं, उनके नाम मैं दिए देता हूँ। जो यात्री केवल केदारनाथ-वदरीनाथ जाना चाहते हैं, वे अलकनंदा-नदी के इसी पार चलते हैं।

देव-प्रयाग से यमुनोत्तरी ६६ मील, देव-प्रयाग से गोमुखी-धारा १४५ मील, गंगोत्तरी १३५ मील, देव-प्रयाग से केदारनाथ ६३ मील और देव-प्रयाग से हरिद्वार ५६ मील है।

देव-प्रयाग से विद्याकोटी ३ मील, सीताकोटी ३ मील, रानीवाग़-चट्टी

३ मील। यहाँ अलकनंदा और खांडव-नदी का संगम है। यहीं अर्जुन ने तप करके शिव से पाशुपत अस्त्र प्राप्त किया था। यहा से मील रामपुर-चट्टी, ३ मील दिगोली-चट्टी, २ मील विल्वकेदार-चट्टी है। यहाँ शिवजी का मंदिर है। यहाँ से २ मील कमलेश्वर और १ मील पर श्रीनगर या शिव-प्रयाग है। गढ़वाल का यह सबसे बड़ा और पुराना नगर अलकनंदा के किनारे है। दुर्गाजी ने यहीं शुंभ-निशुंभ-वध किया था। डाकखाना, अस्पताल, तारघर, पुलिस-चौकी आदि सब यहाँ हैं। कमलेश्वर शिव का मंदिर भी है। यहाँ से ४ मील सुकरता और ३॥ मील भट्टीसेरा-चट्टी है। यहाँ से १॥ मील छांतीखाल-चट्टी, २ मील खाकरा-चट्टी, २॥ मील नरकोट-चट्टी, १ मील पंच भाइयों की चट्टी और २॥ मील गुलाबराय-चट्टी है। यहाँ से २ मील पर रुद्र-प्रयाग है। यहाँ अलकनंदा और मंदाकिनी का संगम है। रुद्रकेश्वर महादेव का मंदिर और उसमें ताड़केश्वर गोपालेश्वर और अन्नपूर्णादेवी की मूर्तियाँ हैं। केदारनाथ जानेवाले, यात्रियों को अलकनंदा का झूले का पुल पार करके मंदाकिनी के किनारे-किनारे जाना पड़ता है। यह बड़ी चट्टी है। डाकखाना, अस्पताल, तारघर आदि सब यहाँ हैं। यहाँ से ४॥ मील छतोली, १॥ मील तिलवाड़ा-चट्टी, १ मील रामपुर और २॥ मील अगस्त्य मुनि-चट्टी है। यहाँ अगस्त्य-मुनि का मंदिर है। यहीं अगस्त्य-जी ने तपस्या की थी। ३ मील पर छोटा नारायण-मंदिर, २ मील पर सौड़, १½ मील चंद्रापुरी, ३ मील भीरी, ३ मील कुंड और ३ मील पर गुप्त काशी है।

कुछ यात्री, जो केवल बदरीनारायण ही जाना चाहते हैं (केदारनाथ नहीं जाना चाहते), रुद्र-प्रयाग से कर्ण-प्रयाग तक जाते हैं—मंदाकिनी के किनारे-किनारे। कर्ण-प्रयाग से बदरीनाथ की यात्रा का तो वर्णन हो ही चुका है। रुद्र-प्रयाग से ५½ मील पर रतोड़ा या रनौडा, २ मील पर शिवानंदी (यहाँ च्यवन ऋषि ने तपस्या की थी) बड़ी चट्टी है। ४ मील

पर कमेड़ा और ४ मील पर चटवा पीपल और २½ मील पर कर्ण-प्रयाग है।

जिसका वर्णन प्रस्तुत लेख में किया ही जा चुका है।

[इसी प्रसंग में गुप्तकाशी से केदारनाथ और केदारनाथ से बदरीनारायण का वर्णन हो ही चुका है।]

नीचे लिखी दूरी एक स्थान से दूसरे स्थान की है—

हरिद्वार से यमुनोत्तरी	१५८ मील
यमुनोत्तरी से गंगोत्तरी	१३० मील
गंगोत्तरी से केदारनाथ	१३३ मील
केदारनाथ से बदरीनाथ	१०६ मील
बदरीनाथ से काठगोदाम	१७५ मील
योग	७०५ मील

श्रीबदरीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्तरी और यमुनोत्तरी की यात्रा में लगभग २½, ३ महीने लग जाते हैं। पैदल चलना पड़ता है। मार्ग में नगरों की सुविधा कहाँ कि आवश्यकता की सभी वस्तुएँ मिल जायँ। मनुष्य-शरीर को अस्वस्थ होते कितनी देर लगती है। पहाड़ का पानी, खाने के अच्छे पदार्थों की क़िल्लत और महँगी आदि ऐसे कारण हैं, जिनका यात्रियों को पहले ही से प्रबंध कर लेना चाहिए। दवा, कपड़े, हाथ की घड़ी, फ़ोटो कैमरा, मसाला, साबुन-तेल आदि, बर्तन, काफ़ी रुपया, छाता, लकड़ी आदि चीज़ें ज़रूरी हैं। यात्रियों की सुविधा के लिये कुछ चीज़ें लिखी जाती हैं—

(१) कपड़ा आदि—२ ऊनी कंबल ओढ़ने - बिछाने को, वर्षा से चीज़ें बचाने के लिये मोमी कपड़ा, ऊनी मोज़ा, गर्म और ठंडे, दोनों तरह के कपड़े और कपड़े का झोला।

(२) साबुन-तेल आदि—सिर और कपड़े में लगाने का एक दर्जन साबुन, लालटेन, टॉर्च, मोमबत्ती (१ ग्रुस) और दियासलाई (३ दर्जन)।

(३) लकड़ी- छाता आदि—लकड़ी, छाता और पहाड़ पर पहनने लायक़ रबड़ के तल्ले के जूते।

(४) बर्तन आदि—थर्मस वा टिन, हल्की टीन या किरमिच की बाल्टी और डोरी (कुएँ तो मार्ग में हैं नहीं, पर डोरी की आवश्यकता बहुधा बहुत नीचे बहता हुआ गंगाजल भरने के लिये होती है), एक ट्रंक का गिलास, १ लोटा, अलमोनियम या फूल के हल्के बर्तन (यों तो हर चट्टी पर बर्तन मिल जाते हैं, पर प्रायः गंदे होते हैं) और स्प्रिट-लैंप।

(५) मसाला आदि—पान का मसाला, इलायची, सुपारी, कत्था, चूना, चाय, दाल और तरकारियों के लिये सब मसाले पिसे हुए, सूखी मेवा (बादाम, किशमिश, मिसरी, छुहारा, पिस्ता आदि) और कपूर, चंदन आदि पूजा का सामान (सामान तो वहाँ भी मिलता है, पर बहुत महँगा)।

(६) रुपया—यथाशक्ति तथा आवश्यकता के अनुसार। मार्ग में अस्वस्थ हो जाने पर लाचारी में डाँड़ी-कंडी आदि करना पड़ता है, पंडों की दक्षिणा, दान-पुण्य, कुलियों की मज़दूरी तथा बीमारी आदि अनजाने ख़र्चों के लिये। प्रायः २०० या २५० रुपया प्रति मनुष्य।

(७) दवाएँ—टिंचर, स्प्रिट, हैज़ा, पेचिश, बुख़ार आदि की दवा, हाज़मे का चूरन, पेपरमिंट, अमृतधारा, फिटकरी आदि तथा अपनी सुविधा और आवश्यकता के अनुसार और दवाएँ।

नोट—स्वर्ग-आश्रम में बाबा कमलीवाले कुछ दवाएँ यात्रियों को देते हैं। बदरिकाश्रम के यात्रियों को उनसे मिलकर अवश्य लाभ उठाना चाहिए।

देहरादून

संसार परिवर्तनशील है। समय वस्तुओं के रूपों को बनाया-बिगाड़ा करता है। भारतवर्ष के प्रायः सभी स्थानों को काल-चक्र ऊपर भी ले जा चुका है, और नीचे भी गिरा चुका है। देहरादून नगर के विषय में भी कुछ ऐसा ही कहा जा सकता है।

पाँच-छः दिन हरिद्वार में रहने के पश्चात् मैं ६ बजे सुबह की गाड़ी से देहरादून चल दिया, और लगभग १½ घंटे में वहाँ पहुँच गया। एक धर्मशाला में सामान रक्खा, और चाचा पंजाबी (इसी नाम से वह प्रसिद्ध है) के यहाँ भोजन किया। ताँगा करके १२-१५ पर घूमने चल दिया। पहले टपकेश्वर महादेव गया। यह बड़ा ही रमणीक स्थान है।

टपकेश्वर महादेव (देहरादून)

ताँगा थोड़ी दूर पर ठहर जाता है। लगभग १-२ˎ फ़र्लांग पैदल चलकर एक पहाड़ी पर आया। एक छोटी पहाड़ी काटकर उसमें मंदिर बनाया गया है। शिवजी की मूर्ति बड़ी विशाल है। कई एक प्राकृतिक खोहें और सिर पर लटकती हुई लंबी-चौड़ी चट्टानें हैं, जो छत का काम देती हैं। ऐसे सुरक्षित स्थानों में साधु निवास करते हैं। मंदिर के नीचे ही एक झरना बह रहा है। उस दृश्य का वर्णन कठिन है। मैंने उस पार जाकर एक फ़ोटो ली (पानी घुटने-घुटने तक भी नहीं, पर बहाव बहुत तेज़ था)। बहुत-से लोग उसमें नहा रहे थे। प्राकृतिक सीढ़ियाँ-सी वहाँ बनी हैं। उसे देखने के पश्चात् हम गुच्छू-पानी (Robert's cave) गए। कन्या-गुरुकुल से राजपुर-रोड होते हुए जाइए। २ मील के बाद खाई पड़ेगी। बहुत ऊपर से नीचे उतरिए—मैदान पहले ही पार कर चुकना होता है। बहते हुए झरनों का दृश्य ऊपर से देखने में बहुत अच्छा लगता है। अनेक धाराएँ इधर-उधर से आकर अंत में एक हो जाती हैं। प्रायः एक मील चलना पड़ा। मार्ग में जानूवन ग्राम पड़ता है और एक शिव-मंदिर भी। छावनी की ओर से भी मार्ग है। मैं इसी ओर से आया था। गंतव्य स्थान पर पैदल पहुँचकर अत्यधिक सुख होता है। इस स्थान के चारो ओर पहाड़ियाँ हैं, और बीच में बहुत विस्तृत और खुला हुआ स्थान। वहां से झरना निकलते और बहते देखा। यह बहुत ही रमणीक स्थान है। यहाँ की पृथ्वी को ज़रा-सा छड़ी से खोदिए, पानी निकल आवेगा। यह झरना पहाड़ी के ऊपर से कलकल करता असंख्य छोटी-छोटी धाराओं में नीचे बहता है। चारो ओर घने वृक्षों से आच्छादित यह स्थान बड़ा शांति-प्रद और सुषमा एवं सौंदर्य का घर-सा है। पहाड़ी पर छोटे-छोटे एक-दो मंदिर भी दिखाई दिए। गुच्छू-पानी का बाह्य रूप देखकर चित्त प्रसन्न हो जाता है, किंतु यदि किसी ने उसका अंतर—उसके अंदर का रूप न देखा, तो उसने प्रकृति का सच्चा रूप ही नहीं देखा।

विस्मय, हर्ष, भय और महत्ता-मिश्रित भावनाओं से पूर्ण हृदय लेकर प्रकृति को नाना रूप में देखने के लिये अंदर घुसने का साहस करना

गुच्छू-पानी का बाह्य दृश्य (घाटी से बाहर)
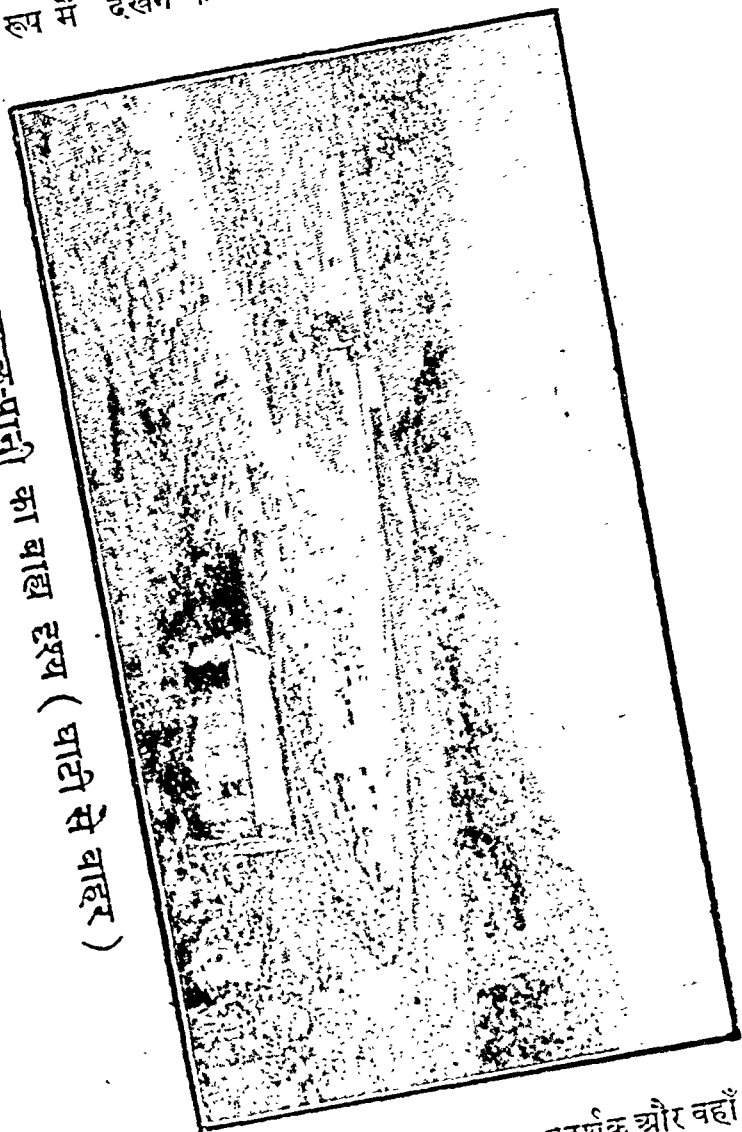
पड़ता है। वह भी उस समय, जब कोई पथ-प्रदर्शक और वहाँ का ही कोई निवासी साथ हो। हम लोग चार आदमी थे, अकेले होते, तो कदाचित भीतर भी न जाते। चारो ओर वृक्षावलियाँ, सघन कुंजें तथा दोनो ओर

खड़ी पर्वत-श्रेणियाँ हैं। पानी सकरे मार्ग से नीचे बहता है। कहीं-कहीं तो झरने की चौड़ाई फ़ीट या डेढ़ फ़ीट ही थी। पानी शीतल, निर्मल और मीठा है, और निरंतर कलकल ध्वनि से अपने निर्दिष्ट मार्ग से
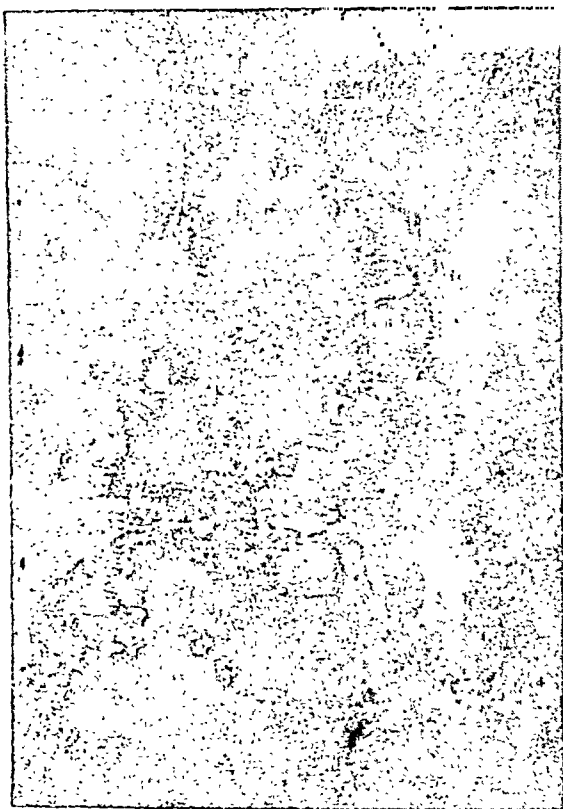
गुच्छू-पानी

बहता ही रहता है। उस वृक्षाच्छादित पर्वत-कंदरा की गहरी, शीतल छाया में आपको बैठना पड़ता है—बड़ी सावधानी के साथ—कभी इधर-उधर कगारों और पहाड़ी चट्टानों को इधर-से-उधर नाँघकर और कभी

धोती उठाकर पानी में छप-छप करते हुए, कभी-कभी घुटने-घुटने; कभी कमर और कभी घुटने से कम पानी में। सूर्य की किरणों का प्रवेश कहीं-कहीं ही उस स्थान में हो सकता है। कहीं-कहीं सूर्य की किरणें आती हैं, नहीं तो वही सुखद छाया। घाटी के अंदर चलने में डर-सा लगता है—और यह स्वाभाविक भी है—किंतु उस अलौकिक सौंदर्य को देखने का सौभाग्य क्या बेर-बेर मिलता है? चित्रकूट में गुप्त गोदावरी के बाद इस स्थान में मन की एकाग्रता और भय-प्रद प्रसन्नता का आभास हुआ। जगह-जगह इधर-उधर से छोटी-छोटी जल की धाराएँ मुख्य धारा में मिलती जाती हैं, और कहीं-कहीं चट्टानी दीवारों से ही जल रसियाता हुआ दिखाई देता है। कहीं-कहीं छोटे झरने-से हैं—ऊपर से नीचे जल गिरने के कारण। पहाड़ी स्थान होने के कारण मार्ग क़ाफ़ी ऊँचा-नीचा है, और उस बीहड़, किंतु सुंदर स्थान में बंदरों की तरह उचक-उचक-कर या लकड़ी के सहारे बूढ़ों की भाँति टटोल-टटोलकर धीरे-धीरे आगे बढ़ना पड़ता है। दो-एक स्थानों पर गहरे कुंड भी पड़े। लाख बचाने पर भी धोती भीग ही गई। चरण-दासी तो पहले ही छिपाकर एक स्थान पर रख आए थे। एक-आध स्थान पर पहाड़ों के बीच में घिरे, खुले छोटे-छोटे मैदान-से भी पड़े। फिसलाहट तथा काई का भी कहीं-कहीं सामना करना पड़ा। एक बड़े-से पर्वताच्छादित मैदान में थोड़ी दूर चलने के बाद गुच्छू-पानी के उस पार आए। गुच्छू-पानी में घुसने पर जैसे-जैसे पहाड़ियाँ उच्चतर से उच्चतम होती गई थीं, उसी प्रकार वे नीचे होते-होते अंत में मैदान के रूप में फिर आ गई। यदि देहरादून-निवासी एक मेरे मित्र साथ न होते, तो भला यह दर्शन कब हो सकते। जिस मार्ग से गए, उसी से लौटे। जूते पहने, धोती ठीक की, और कुछ देर विश्राम के पश्चात् वहाँ से हम लोग न्यूफ़ॉरेस्ट की ओर चले। देहरादून बहुत ही स्वच्छ नगर है। काली-काली, सीधी और लंबी चौड़ी सड़कें नगर के हर ओर दृष्टिगोचर होती हैं। यहाँ बड़े सुंदर-सुंदर

पार्क तथा विस्तृत मैदान हैं। जिस ओर मिलिटरी-कॉलेज है, उस ओर जाने पर आपको अँगरेज़ी बाज़ार (लखनऊ के हज़रतगंज की भाँति) मिलेगा, और इसी के आस-पास सुंदर-सुंदर बँगले और कोठियाँ बनी हैं।

सब देखते-दाखते 'कोल्हागढ़-बिल्डिंग' पहुँचे। लाखों रुपए की इमारत है—बहुत सुंदर और दर्शनीय। इसके आस-पास की भूमि समतल मैदान है, और दूर पर पर्वत-श्रेणियों के दर्शन होते हैं। 'अजायब-घर' में संसार-भर में जितने प्रकार की लकड़ियाँ होती हैं, जो-जो उनसे काम लिया जाता है, जो-जो रोग पेड़ों को हो सकते हैं, जो दवाइयाँ उन्हें बचाने और ठीक रखने के लिये आवश्यक हैं, आदि-आदि सभी कुछ हम वहाँ देख और जान सकते हैं। वहाँ की चीज़ें देखने और समझने के लिये जब सप्ताहों की आवश्यकता है, तो निश्चय है कि इस छोटी पुस्तक में उनका वर्णन असंभव है। इस विषय में तो एक विस्तृत पुस्तक लिखी जा सकती है।

अब मैं देहरादून के प्राचीन इतिहास पर कुछ प्रकाश डालने का प्रयत्न करूँगा। हिंदुओं की धार्मिक अंतःकथाओं के अनुसार देहरादून का आविर्भाव उसी भूमि-क्षेत्र पर हुआ, जिसे केदार-कुंड कहते हैं, और जो शिवजी का निवास-स्थान है। उनके नाम पर ही शिवालिक पर्वत-श्रेणी का नामकरण हुआ है। भारतवर्ष के दो महाकाव्यों (रामायण और महाभारत) की कथाओं में भी इस पवित्र प्रांत का नाम बार-बार आता है। संक्षेप में कहना यह है कि देहरादून अपना धार्मिक और ऐतिहासिक महत्त्व रखता है। इस प्रांत के अस्तित्व का प्राचीनता से संबंध है।

किंतु देहरादून बहुत समय तक (महाभारत और रामायण-काल के पश्चात्) अज्ञात प्रांत-सा रहा। धार्मिक कथाओं का धर्म की दृष्टि से चाहे कितना ही अधिक महत्त्व क्यों न हो, किंतु इतिहास उन्हें अक्षरशः

सत्य मानने के लिये प्रस्तुत नहीं। कुछ भी हो, इन धार्मिक कथाओं के धुँधले प्रांत ने नवीन और पूर्ण प्रकाश १७ वीं शताब्दी में पाया। १७वीं शताब्दी में इसने नवीन जन्म लिया, या कहिए, इसका पुनरुद्धार हुआ। भारतवासियों को तभी से इस प्रांत के विषय में ज्ञान हुआ, जब से यह गढ़वाल-प्रांत का उक्त सदी में एक भाग हुआ। सन् १६६६ में सिक्खों के गुरु रामरायजी यहाँ पंजाब से पधारे। उस समय फ़तेहशाह ही गढ़वाल के राजा थे। गुरुजी औरंगज़ेब से एक पत्र फ़तेहशाह के नाम लाए। आज्ञा मिलने पर उन्होंने एक मंदिर का शिलान्यास किया, और मंदिर बन जाने पर उसके ख़र्च और गुज़ारे के लिये बहुत-से गाँव उसके नाम लिख दिए गए। राजा फ़तेहशाह इस कार्य के लिये सिक्खों की प्रशंसा के पात्र हैं। मंदिर बहुत ही सुंदर, अपूर्व एवं दर्शनीय है, जो देहरादून के प्रायः बीचोबीच में स्थित है। इसकी आश्चर्य-जनक, अभूत-पूर्व और रहस्योन्मुखी वास्तुकला के लिये प्रत्येक नवीन यात्री को इसके दर्शन अवश्य करने चाहिए।

अशोक महान् ने बहुत-सी शिलाओं में बौद्ध-धर्म के मत और सिद्धांत खुदवाए, जिसमें वे उपदेश और शिक्षा पाकर लोग अपने को सुधार सकें। उन्होंने स्तंभ भी बनवाए। शिला-लेखों में बौद्ध-धर्म की मुख्य शिक्षा जीवन में शुभ आचरण के नियम और सिद्धांत आदि ही उनके विषय हैं। ये शिला-लेख आदि प्रायः उन स्थानों पर हैं, जहाँ उनके समय में व्यापारी-मार्ग था। एक ऐसा शिला-लेख 'कालसी' में है, जो देहरादून से ७ मील दूर, चकरौता रोड पर, यमुना-तट पर स्थित है।

तैमूरलंग दिल्ली को विध्वंस और लूट-मार कर चुकने के पश्चात् लौटते समय इसी देहरादून की उपत्यका से होकर गुज़रा, और नाहन के राजा से उसका कालसी-स्थान पर भयानक युद्ध हुआ। जिस समय भारतवर्ष में मुग़लों का राज्य था, उस समय भी सेना-नायक ख़लीलुल्लाख़ाँ ने इस प्रदेश पर, सन् १६५४ में, आक्रमण किया, गढ़वाल के राजा

को हराकर सज़ा दी, और इस स्थान का राज्य चतुर्भुज नामी एक मनुष्य को दे दिया। सन् १७५७ ई० में इस पर नजीबख़ाँ ने, सन १८०० में मराठों ने और फिर गोरखों ने, श्रीअमरसिंह थापा के सेनापतित्व में, आक्रमण किया। उन्होंने गढ़वाल के राजा प्रद्युम्नशाह को खुरबुरा के युद्ध में मार डाला। इसी समय से गोरखों के राज्य का यहाँ बीजारोपण हुआ। १७६५ में गोरखों की, पृथ्वीनारायण की अधीनता में, बड़ी सुंदर, विशाल, सुव्यवस्थित और नियंत्रित सेना हो गई। इन लोगों ने सन् १७६० ई० में अलमोड़ा और अंत में, १८०३ में, गढ़वाल भी जीत लिया।

गोरखों का राज्य-शासन बड़ा ही कठोर था, लेकिन उन्होंने उस समय के महंत को परेशान नहीं किया, जो उस समय के भयंकर आक्रमणकारियों पर परोक्ष रूप से अपना प्रभाव डाल रहे थे। महंतों का प्रभाव जिस स्थान में उनका निवास होता है, उसके आस-पास के लोगों पर पड़ता ही है। इस समय के महंत भी बहुत सुयोग्य, सच्चरित्र, विद्वान् और अपूर्व भक्त हैं। वहाँ के महंतों का प्रभाव सदा से ही वहाँ के निवासियों पर पड़ता रहा है, और उससे उनका लाभ भी होता रहा है।

सन् १८१४ में नेपाल-युद्ध प्रारंभ हुआ। गोरखे यद्यपि संख्या में बहुत कम थे, तो भी उन्होंने शीघ्रता-पूर्वक नलापानी (यह स्थान भी दर्शनीय है)-पहाड़ी पर एक दुर्ग स्थापित किया, जो कालिंगगढ़ के नाम से अधिक प्रसिद्ध है, और अपने योग्य, अलौकिक वीर और अद्वितीय साहसी सेनापति प्रातःस्मरणीय बलभद्रसिंह थापा की अधीनता और सेनापतित्व में यहीं से दृढ़ता-पूर्वक शत्रुओं की गति रोकने और उनसे मोर्चा लेने के लिये निश्चय किया। रिसपन की बाईं तरफ़ (किनारे पर) कालिंग की दूसरी तरफ़ (उसकी विरुद्ध दिशा में) दो छोटे, चौकोने मीनार-से हैं। वर्तमान डी० ए० वी० कॉलेज से यह स्थान आध मील

दूर है। इनमें से एक जेनरल्ल गिलिस्पाई और उसके साथी के, जो वहाँ उसके साथ युद्ध में मरे थे, स्मृति-स्वरूप है। दूसरे मीनार पर हमारे गर्व और भारत माता के सपूत बलभद्रसिंह थापा और उनके ७० वीर योद्धाओं के गुणों, वीरता, साहस और देश-प्रेम की गाथाएँ लिखी हैं। इन योद्धाओं ने अपने अभूतपूर्व और अलौकिक वीर कार्यों के द्वारा सदा के लिये भारतवासियों के हृदय को अपना स्थान बना लिया है। उन माताओं को धन्य है, जिन्होंने ऐसे वीर पुत्र उत्पन्न किए; ऐसे वीरों को धन्य है, जिन्होंने अपनी माताओं का दूध लजाया नहीं। अन्य किसी भी देश के इतिहास में ऐसे वीरता-पूर्ण कार्य-कलापों की तुलना और समता नहीं मिलेगी। सिरमौर-प्रदेशांतर्गत जैतक-स्थान की रक्षा बलभद्रसिंह थापा उस समय तक करते रहे, जब तक अँगरेज़ों का युद्ध और उनके आक्रमण पूर्ण रूप से समाप्त नहीं हो गए और जब तक सन् १८१६ में सिगौली की संधि नहीं हो गई।

आधुनिक देहरादून-नगर का जन्म तो अभी थोड़े ही वर्षों पूर्व हुआ है। यह समुद्र-तल से २,३२३ फ़ीट ऊँचा है। पहलेपहल हरिद्वार तक ही रेल थी। सन् १९०० में हरिद्वार से देहरादून तक गई। इस समय भी देहरादून के आगे रेल नहीं जाती। मसूरी जाने के लिये देहरादून ही अंतिम रेलवे-स्टेशन है, इसके बाद लॉरी और मोटरें जाती हैं। यों तो ललकुआँ स्थान ही से पर्वत-श्रेणी के दर्शन होने लगते हैं, किंतु देहरादून तक पर्वत-श्रेणियाँ बहुत ऊँची होने लगती हैं, और रेल की पटरियों के लिये चौरस और उपयुक्त स्थान मिलना सरल नहीं रह जाता। हम हरिद्वार के कुछ पहले ही से जल-वायु में भी परिवर्तन अनुभव करने लगते हैं, किंतु देहरादून आकर तो वायु की नमी और उसकी ठंड का पूर्ण रूप से अनुभव होता है। मैदानों से आनेवालों के लिये यह परिवर्तन छिपा नहीं रह सकता। इस प्रदेश के बहुत-से भाग में चाय के बाग़ हैं। दून-उपत्यका का क्षेत्रफल

प्रायः ६७३ वर्गमील है। यहाँ घने-घने जंगल हैं, जो चश्मों और छोटी-छोटी नदियों से परिपूर्ण हैं, और शिवालिक पर्वत-श्रेणियों से यह भाग घिरा हुआ है, जिसकी सबसे ऊँची चोटी की ऊँचाई ३,०४१ फ़ीट है। यह घाटी ४५ मील लंबी और १५ मील चौड़ी है।

देहरादून में कई वैज्ञानिक और सैनिक संस्थाएँ विशेष महत्त्व-पूर्ण हैं। 'The Great Trigonometrical Survey of India Department Office' की नींव सन् १८३० में डाली गई थी, और इस संस्था का संबंध कर्नल एवरेस्ट के नाम से भी है (यह वही महाशय हैं, जिनके नाम पर हिमालय की सर्वोच्च पर्वत-श्रेणी 'एवरेस्ट' का नामकरण हुआ है)। अब तो इस दफ़्तर का क्षेत्र और कार्य-क्रम बहुत अधिक विस्तृत हो गया है। ट्रिगनोमेट्रिकल के विभाग के अतिरिक्त यहाँ अन्य विभाग भी हैं। सारे ब्रिटिश-साम्राज्य में केवल तीन ही observatories हैं (ग्रीनविच, मारिशस और देहरादून में), जहाँ सूर्य की फ़ोटो ली जाती हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ Imperial Forest Research Institute है, जो अपनी भाँति की संसार में केवल दूसरी ही है। यहाँ फ़ॉरेस्ट-कॉलेज है, मिलिटरी-एकेडमी है, जिसे इंडियन सैंडहर्स्ट भी कहते हैं, और प्रिंस ऑफ़् वेल्स मिलिटरी कॉलेज है। Vicerory's Body Guard और गवर्नमेंट सरकिट हाउस भी यहाँ है, जहाँ वाइसराय और गवर्नर ठहरते हैं।

यह प्रांत चाय के व्यापार के लिये सदा से प्रसिद्ध रहा है। पहला चाय का बाग़ कोल्हागढ़ में, लॉर्ड विलियम बेंटिंग के समय में, लगाया गया, जिसे सिरमौर के महाराजा ने तीन लाख रुपए में ख़रीद लिया, और वह बाग़ इस समय तक बहुत अच्छी दशा में है।

अस्तु, हम लोग न्यूफ़ॉरेस्ट (कोल्हागढ़-बिल्डिंग) देखने जा रहे थे। हम लोगों का ताँगा इनके बाग़ों से होकर गुज़रा। चाय के खेत मीलों

तक फैले हुए हैं। हम लोग यहाँ उतर पड़े, और खूब खेतों के चारो ओर घूमे। चाय की हरी हरी पत्तियाँ थीं, जो कुछ लंबी कही जा सकती हैं, और उन पर एक विशेष प्रकार की हरी-हरी छोटी-छोटी घुंडियाँ होती हैं। हम लोगों ने थोड़ी-सी पत्तियाँ और घुंडियाँ लखनऊ लाने के लिये तोड़कर अपनी-अपनी जेबों में रख लीं। मार्ग में एक बड़ी लंबी नहर पड़ी। कदाचित् इससे नहाने-धोने के अतिरिक्त इन खेतों की सिंचाई भी होती है। नहर पक्की है। बीच-बीच में, थोड़ी-थोड़ी दूर पर, आर-पार जाने के लिये छोटे-छोटे पुल-से हैं। नहर की चौड़ाई २-३ गज़ होगी। ऊँची-नीची भूमि होने के कारण थोड़ी-थोड़ी दूरी के बाद छोटे-छोटे फ़ाल-से हैं—अर्थात् फ़ीट-डेढ़ फ़ीट की ऊँची सतह से नीचे पानी गिरता है। इस नहर द्वारा नगर के उस भाग की प्राकृतिक शोभा बढ़ गई है, यद्यपि उस स्थान में नगर की चहल-पहल हमें नहीं मिलती। जन-रव से १॥-२ मील दूर यह स्थान है। उस ओर आबादी है, पर कम। एक ओर तो किसान और मामूली लोग रहते हैं, और कुछ दूर हटकर बड़े-बड़े आदमियों की कोठियाँ भी हैं। खैर।

व्यापार की दृष्टि से यहाँ की मुख्य वस्तुएँ चाय और लकड़ी हैं। लकड़ी की कारीगरी का काम भी यहाँ होता है। आखेट की दृष्टि से देहरादून बहुत उत्तम स्थान है। नगर से दूर घने जंगलों में शिकार भी मिल सकते हैं। शिक्षा की दृष्टि से भी देहरादून महत्त्व-पूर्ण स्थान है। यहाँ की प्रसिद्ध शिक्षा-संबंधी संस्थाएँ ये हैं—

(१) दि दून स्कूल—इसमें स्कूली शिक्षा के अतिरिक्त चित्रकला, वास्तुकला, मूर्तिकला, बरतन बनाना, पत्थर में खुदाई का काम, बढ़ईगीरी, धातु का काम और संगीत आदि भी सिखाया जाता है।

(२) डी० ए० वी० इंटरमीजिएट कॉलेज—यहाँ का यह सबसे मुख्य कॉलेज है। आर्ट और साइंस के सभी विषयों की यहाँ शिक्षा दी जाती है।

(३) महादेवी-कन्या-पाठशाला इंटरमीजिएट कॉलेज—लड़कियों का प्रमुख और बहुत प्रसिद्ध कॉलेज है।

(४) दि ए० पी० मिशन-हाईस्कूल—यह पलटन-बाज़ार में है।

(५) दि ए० पी० मिशन-गर्ल्स हाईस्कूल—यह राजपुर-रोड के निकट है।

(६) साधूराम-हाइस्कूल (ओरियंटल एंग्लो-वर्नाक्यूलर हाइस्कूल)—यहाँ कुछ दस्तकारी की भी शिक्षा दी जाती है।

(७) इस्लामिया स्कूल

(८) गोरखा-मिलिटरी-स्कूल

(९) नारी-शिल्प-मंदिर (कन्याओं के लिये)

(१०) गवर्नमेंट गर्ल्स-मिडिल स्कूल (कन्याओं के लिये)

(११) एक और गवर्नमेंट गर्ल्स-मिडिल स्कूल (कन्याओं के लिये)

(१२) गवर्नमेंट-कारपेंटरी स्कूल

(१३) कालोनल ब्राउन कैंब्रिज स्कूल

(१४) सेंट जोसेफ़ एकेडेमी इत्यादि

देहरादून के आस-पास बहुत-से दर्शनीय स्थान हैं। एक तो राजपुर से ३-४ मील दूर पर सहस्रधारा और दूसरे मसूरी, जो यहाँ से प्रायः २२ मील है, और मसूरी में केमटी-फ़ाल और जमुना-ब्रिज आदि थोड़ी-थोड़ी दूर पर हैं।

देहरादून को अपने आकर्षणों के कारण जो स्थान प्राप्त है, वह उपयुक्त ही जान पड़ता है।

देहरादून से ५८ मील पर 'चकरता' है। यह मिलिटरी स्टेशन है। यहाँ होटल और 'बोर्डिंग हाउस' नहीं मिलेंगे। हां, एक क़ाफ़ी बड़ा बाज़ार अवश्य है, जिसमें आवश्यकता की सभी वस्तुएँ सरलता-पूर्वक मिल सकती हैं। यहाँ से ८ मील की दूरी और ऊँचाई पर 'देवबन'-नामक बड़ा सुंदर स्थान है। यह मसूरी-शिमला रोड पर है, और

यहाँ से हिमालय की हिमाच्छादित पर्वत-श्रेणियाँ एक दृष्टि में पूर्ण रूप से दिखलाई देती हैं। प्रकृति की इस सुषमा और मनोहरता का वर्णन करने के लिये शब्दों से काम नहीं निकल सकता। वह अत्यंत चित्ताकर्षक है, और मनुष्य के हृदय को सात्त्विक और स्वर्गीय भावों से भर देता है। इस स्थान पर बसों और मोटरों द्वारा पहुँचा जा सकता है। वे साहसपुर होती हुई कालसी तक और वहाँ से इस पहाड़ी के ऊपर टेढ़े-मेढ़े घुमावदार रास्तों से होकर जाती हैं।

केवल एक बात का उल्लेख करके मैं यह वर्णन समाप्त करता हूँ। स्टेशन से २-३ फ़र्लांग पर एक कोई वैश्य सज्जन की धर्मशाला है। हम लोग उसी में टिके। धर्मशाला में मंदिर भी है। वहाँ का मैनेजर बड़ा ही टर्रा था। पर, हम लोगों पर तो उसकी कृपा ही रही, किंतु वहाँ रहना सुरक्षित नहीं। दूसरे, वहाँ बड़ी गंदगी है, विशेषकर पाख़ाने में। गरमियों के दिनों में वहाँ टिकना तो और भी कष्टदायक है। तो भी मैनेजर ने हम लोगों को वहाँ विशेष सुविधाएँ प्रदान कीं।

देहरादून की मधुर स्मृति हम लोगों के हृदय से कभी दूर नहीं हो सकती।

मसूरी

मसूरी पहाड़ियों की रानी कहलाती है, और उसका यह नाम सार्थक भी है। मुझे दो वर्ष हुए, वहाँ जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। मैं लोगों के मुँह से मसूरी के प्राकृतिक सौंदर्य और अमृत-सदृश जल-वायु के विषय में सुनता था, और अपने मस्तिष्क में काल्पनिक चित्र खींचा करता था कि वह ऐसा होगा, वैसा होगा। किंतु जब अपनी आंखों से उस स्थान के दर्शन किए, तो जितना मैंने सुना था, उससे कहीं आकर्षक और मनोहारी उसे पाया। उसकी सुषमा का वर्णन लेखनी नहीं कर सकती। वह केवल देखकर ही अनुभव किया जा सकता है। तो भी मैंने जो वहाँ देखा, उसका थोड़ा वर्णन कर रहा हूँ, जिससे जो सज्जन वहाँ जायँ, उन्हें यह मालूम हो जाय कि वहाँ क्या-क्या देखने योग्य वस्तुएँ हैं।

मैं शाम की गाड़ी (ई० आई० आर०) से लखनऊ से चला। चार बजे प्रातःकाल गाड़ी लस्कर पहुँची। लखनऊ की अपेक्षा यहाँ सुबह कुछ ठंड प्रतीत हुई। पहाड़ियों के दर्शन यहीं से होने लगते हैं, और रेल को उत्तरोत्तर ऊँची भूमि पर चलना पड़ता है। पृथ्वी और पहाड़ों पर हरियाली-ही-हरियाली दिखाई देती है। ऐसा लगता है, मानो प्रकृति ने हरा मखमली गद्दा बिछा दिया हो। पहाड़ियों पर पौधे-से उगे दिखाई पड़ते हैं, किंतु पास जाने पर पता लगता है कि वे ऊँचे-ऊँचे पेड़ हैं, जो दूरी और उँचाई के कारण छोटे-छोटे दिखाई देते हैं। ऊँचे-नीचे, श्रेणी-बद्ध पहाड़, ऐसा लगता है, मानो थोड़ी ही दूर पर हैं, किंतु वास्तव में वे मीलों दूर होते हैं। उस स्वर्गीय दृश्य को देखकर मनुष्य अपने आपको भूल-सा जाता है। थोड़ी देर के लिये उसका चित्त शांति और ब्रह्मानंद में लीन हो जाता है। ५॥ बजे प्रातःकाल गाड़ी हरिद्वार पहुँची।

पता ही नहीं चला, यह १॥ घंटा कैसे और कितनी जल्दी बीत गया। हरिद्वार हिंदुओं का सर्व-प्रधान तीर्थ है, अतः यहाँ गाड़ी काफ़ी देर ठहरती है। सुना, यहाँ से गाड़ी में दो एंजिन लगते हैं—एक आगे, एक पीछे। यहाँ से गाड़ी चली, तो थोड़ी ही दूर पर एक लंबी सुरंग के अंदर घुसी। एक ऊँची पहाड़ी है, उसी को काटकर रेल जाने भर का मार्ग बना लिया गया है। सुरंग के अंदर गाड़ी जाते ही अँधेरा हो जाता है, अतः गाड़ी की बिजलियाँ जला दी जाती हैं। सुरंग छोटी है, तो भी जैसे जी घबराने लगता और डर-सा लगता है। आगे इसी प्रकार की एक और सुरंग है। अब फिर गाड़ी हरे-भरे खेतों और पहाड़ों के बीच से जाती है। इधर-उधर दूर पर पहाड़ हैं, किंतु ऐसा जान पड़ता है, मानो पास ही हों। ऐसी हरियाली मैदानों में कहाँ नसीब। हवा भी नम और ठंडी हो जाती है। जगह-जगह पहाड़ों से गिरते या सपाट पृथ्वी पर बहते हुए झरने या उनका पानी दिखाई देता है। सूर्य की हल्की-हल्की किरणें उन झरनों के पानी को स्वर्णमय बना देती हैं। झरनों का कल-कल मधुर गान मनुष्य के हृदय को सात्त्विक भावों से भर देता है। दिल्ली के दीवान-ख़ास में लिखी हुई शेर बार-बार याद आती है—

"अगर फ़िरदौस बररूए ज़मीनस्त,
हमीनस्तो, हमीनस्तो, हमीनस्त।"

दो-ढाई घंटे में गाड़ी देहरादून पहुँची। ई० आई० आर० का यह अंतिम स्टेशन है। मसूरी जाने के लिये यहीं तक रेल में आना होता है, इसके आगे रेल नहीं जाती। देहरादून प्रसिद्ध नगर है। यहाँ से मसूरी को मोटर और बसें जाती हैं, जो स्टेशन पर ही पचासों की संख्या में खड़ी रहती हैं। स्टेशन के बाहर आते ही मोटर-ड्राइवर आदि भूखे गिद्ध की तरह यात्रियों पर टूट पड़ते और मुसाफ़िर को अपनी-अपनी बस पर बैठाने के लिये छीना-झपटी करने लगते हैं। किंतु उनके 'कंपिटीशन' से यात्रियों को लाभ ही होता है—जो कम दाम लेता है, उसी की बस

पर लोग बैठते हैं। मोटर का किराया अधिक है, और बस का कम। हम लोग बस पर बैठे। अगली सीट पर बैठने से दृश्य अच्छा दिखाई देता है, और उबकाई भी कम आती है। यों पेट-भर खाना खाकर बस या मोटर में बैठने से बहुतों को कै हो जाती है। हम लोगों को तो कुछ भी नहीं हुआ। वहाँ के मोटर-ड्राइवर बहुत योग्य होते हैं। हमारे यहाँ के ड्राइवर वहाँ मोटर नहीं चला सकते। वहाँ की सड़कें टेढ़ी-मेढ़ी, घुमावदार होती हैं, जो क्रमशः ऊँची होती जाती हैं। ऐसी सड़कें बनवाने में बहुत रुपया लगता है। थोड़ा ऊँचे चढ़ जाने पर नीचेवाली सड़क देखो, जिससे होकर मोटर आ चुकी है, तो ऐसा लगता है, जैसे पतला, लंबा और काला साँप पड़ा हो। उन सड़कों पर एकाएकी घुमाव (Abrupt turns) होते हैं। यह पता नहीं चलता कि आगे कहाँ सड़क मुड़ेगी। मोटर पूरी रफ़्तार से 'भज' शब्द करती हुई आगे बढ़ती जाती है। कितना अवर्णनीय दृश्य होता है—सड़क के एक ओर तो आकाश-छूते पर्वत और दूसरी ओर पाताल-छूते खड्ड। यदि ड्राइवर तनिक भी असावधानी करे, तो आदमी तो क्या, लॉरी की भी हड्डी-पसली का पता न चले। देहरादून से मसूरी दिखाई देती है, किंतु वह इतने ऊँचे पर होगी, यह तभी पता चलता है, जब हम लॉरी पर बैठते हैं। छोटे-छोटे बादल लॉरी में घुस आते और हमारे कपड़े नम कर देते हैं। हवा में एक विशेष प्रकार का स्वाद होता है। आप कहेंगे, स्वाद? जी हाँ—आप जाइएगा, तो देखिएगा, कितनी स्वादिष्ट हवा होती है। जब आप साँस लेते हैं, तो ऐसा लगता है, मानो पेट में अमृत जा रहा हो—कोई Substantial चीज़ आपके पेट में जा रही हो। एक पंक्ति में खड़े हुए वृक्ष अपनी शोभा दिखाते हैं, और पौधे तथा उसमें लगे हुए रंग-बिरंगे फूल अपनी—जिधर दृष्टि डालिए, उधर ऐसा ही लगता है कि प्रकृतिदेवी स्वयं कमनीय रूप धारण कर इस भगवान् की लीला-भूमि में नृत्य कर रही है। सुंदर-सुंदर चिड़ियों का कलरव जैसे उस स्थान

की असीम शांति भंग न करके उसका यशोगान कर रहा है। मैं अपने हृदय से कह रहा था—"ईश्वर! तुझे लाख बार धन्यवाद, जो तूने मुझे यहाँ आने का अवसर दिया! संसार में ऐसे लोग भी हैं, जिन्हें प्रकृति के प्रति कुछ आकर्षण नहीं? आँखें मिलने पर जिसने ऐसे अनुपम दृश्य न देखे, उसका जीवन व्यर्थ है।"

लॉरी आगे बढ़ती गई, और साथ ही मेरी आंतरिक और आत्मिक प्रसन्नता भी। मेरा हृदय सुख और आत्मसंतोष के कारण बाहर निकला-सा पड़ता था।

थोड़ा और आगे चढ़ने पर मुझे ठंडक मालूम होने लगी—मैं केवल एक ऊनी जवाहर-वेस्टकोट ही पहने था। ख़ैर, उस समय क्या हो सकता था। लॉरी एक जगह रुकी, वहाँ 'टोल-टैक्स' * देना पड़ा। इसी टैक्स के रुपए से सड़क की मरम्मत तथा प्रबंध होता है।

दक्षिणा चुकाकर लॉरी आगे बढ़ी। मुझे एक मनुष्य घंटी बजाते हुए तेज़ी से पहाड़ पर चढ़ता दिखाई दिया। पूछने पर पता चला कि वह 'डाकिया' या 'चिट्ठीरसा' है। यहाँ घंटी बजाने का रिवाज है। कहते हैं, ऐसा करने से लोगों को उसके आने का भी पता चल जाता है, और जानवर भी आवाज़ से दूर भागते हैं।

लॉरी एक लंबी-चौड़ी पहाड़ी समतल भूमि पर खड़ी हो गई। यहाँ की चट्टानें Sedimentary rocks हैं। यहाँ पचासों लॉरियाँ खड़ी थीं। यहीं तक वे आती हैं। यह स्थान 'सनीव्यू' कहलाता है। लॉरियों के जाने के बँधे हुए समय को 'गेट्स' कहते हैं। (अब तो मोटर रोड लाइब्रेरी के नीचे तक बन गई है।)

एक बात मैं बताना भूल गया। बसों और मोटरों के आने-जाने का समय निश्चित है। जब मोटरें नीचे से ऊपर जाती हैं, तब ऊपरवाली

* लॉरी पर बैठकर मसूरी जानेवाले प्रत्येक मनुष्य को १।।) या २) देना पड़ता है।

मोटरें खड़ी रहती हैं, और जब ऊपरवाली नीचे आती हैं, तो नीचेवाली खड़ी रहती हैं। क्योंकि यदि दोनो तरफ़ की लॉरियाँ एक साथ चलें, तो
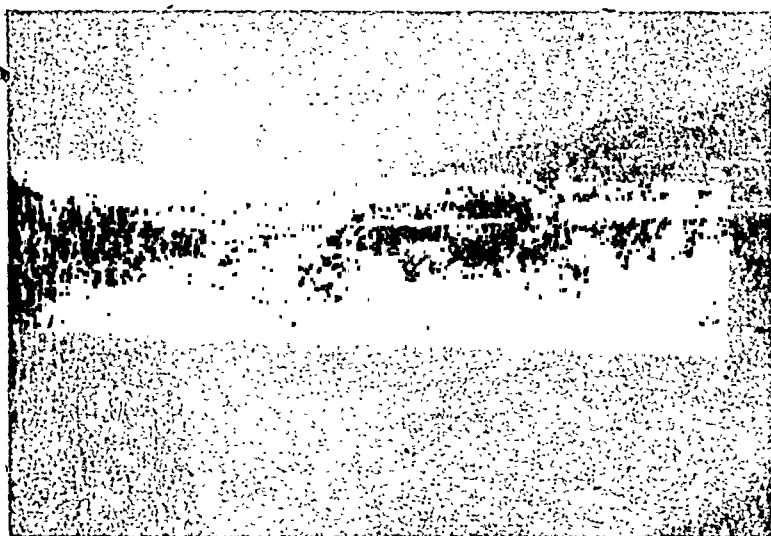
सनीव्यू

सड़क इतनी चौड़ी नहीं कि इन्हें जगह दे सके, और नित्यप्रति लड़ जाने का भी भय बना रहे।

लॉरी से उतरते ही पहाड़ियों ने घेर लिया। मैंने दो कुलियों को अपना सामान दिया, और बता दिया कि 'होपलॉज' चलकर रुको। वे लोग इतना अधिक बोझ लिए ऐसे विकट, ऊँचे-नीचे रास्ते से होकर जाते हैं, जहाँ हम लोगों के पैर बग़ैर बोझ के भी नहीं टिक सकते। वहाँ कुलियों के साथ स्वयं जाने की आवश्यकता नहीं होती—उन्हें वह स्थान बता दीजिए, जहाँ जाना है, वे आपसे पहले वहाँ पहुँच जायँगे। वे लोग बड़े ईमानदार होते हैं—माँगकर आपसे चाहे जो ले लें, पर चोरी करना तो जानते ही नहीं। यह बात मुझे पहले से मालूम थी, अतः इसमें सोचना-विचारना न पड़ा। हम लोग रिक्शा पर बैठे। पानी ज़ोरों से बरस रहा था, रिक्शा बंद कर दी गई थी। छोटी रिक्शा में तीन

(एक आगे और दो पीछे) और बड़ी में चार या पाँच आदमी लगते हैं। जो राजों-महाराजों की रिक्शा होती हैं, उनके घसीटनेवाले ख़ास पोशाक पहने होते हैं, अतः शीघ्र ही बड़े आदमियों की सवारी पहचान ली जाती है। रिक्शावाले दौड़ रहे थे, और डर हम लोगों को लगता था कि कहीं ये गाड़ी गड्ढे में न गिरा दें कि सीधे यमलोक में दिखाई दें। किंतु इन परिश्रमी पहाड़ियों के पैर बड़े सधे होते हैं। मज़दूरी भी यहाँ बहुत सस्ती होती है। हम लोग जब लाइब्रेरी-बाज़ार पहुँचे, तो हमारे कुली बैंड-स्टैंड के पास बैठे मिले। 'होपलॉज' में मेरे अन्य मित्र टिके थे, मैं भी वहाँ टिक गया—वह निकट ही था। कुली अपनी मज़दूरी लेकर 'बख़शीश' अवश्य माँगते हैं—चाहे एक पैसा ही दे दो, पर बिना 'बख़शीश' लिए वे हटते नहीं। मज़दूरी पाने से वे इतने प्रसन्न नहीं होते, जितना 'बख़शीश' पाने से। कितने भोले, सरल और सहृदय होते हैं ये लोग। होटल का कमरा ३) रोज़ पर और मेरे बेमतलब। कमोड पर पाख़ाने जाने का हम लोगों को अभ्यास न था, अतः दूसरे दिन हम लोगों को 'गणेश-होटल' में जाना पड़ा। वहाँ भी मेरे बहुत-से मित्र टिके थे। उन्हीं में से एक ज़बरदस्ती मेरा सामान ले गए। सबसे ऊपर के कमरे में मैं रहा। जहाँ से Doon View हर समय दिखाई पड़ता है। पास ही 'ग्लोब-होटल' में हम लोग खाना खाते थे। यहाँ के होटलों और रहने के मकानों का किराया बहुत अधिक होता है, और प्रायः पूरी सीज़न-भर के लिये ही वे किराए पर उठाए जाते हैं। चाहे आप एक दिन रहें, चाहे पूरे सीज़न-भर, पर दाम आपको सीज़न-भर के देना पड़ेंगे। किंतु अब तो प्रतिमास और प्रतिदिन के हिसाब से भी रहने को स्थान मिल जाता है, लेकिन वह बहुत महँगा पड़ता है। लाइब्रेरी-बाज़ार की सड़क के दूसरी ओर बहुत सस्ते हिंदुस्तानी भोजन-भंडार हैं। कुछ ठहरने के स्थान ये हैं—कुलरी में मिनरवा-होटल, क्लाव-होटल, सिंध-पंजाब-होटल। लंढौर और कुलरी के बीच में हिमालिया-होटल भी

ठहरने की सुंदर जगह है। लाइब्रेरी-बाज़ार में काश्मीरी-होटल है। प्रायः लोग लाइब्रेरी-बाज़ार में ही ठहरना अधिक पसंद करते हैं, क्योंकि यह भाग खुला हुआ अधिक है। लंडौर में सस्ते निवास-स्थान हैं; किंतु यहाँ बस्ती घनी है। हिंदुओं के लिये यह अधिक उपयुक्त है, क्योंकि यहाँ एक मंदिर है। गणेश होटल के ऊपर भी एक खुली जगह है, जो ठहरने के लिये अच्छी है। पहले यहाँ योरपियन ठहरते थे, अब हिंदुस्तानी ही ठहरते हैं।

अब मैं मसूरी का वर्णन करता हूँ—

मसूरी हिमालय-पर्वत की दक्षिणी ढाल पर स्थित है। इसकी ऊँचाई समुद्र-तट से ६,००० फ़ीट से लेकर ७,००० फ़ीट तक है। इसकी औसत ऊँचाई ६,५०० फ़ीट है। अतः यहाँ का जल-वायु बहुत स्वास्थ्य-प्रद और लाभकारी है। जिस दिन बहुत गरमी पड़ती है, उस दिन दोपहर को छोड़कर आप सदा ऊनी कपड़े पहने लोगों को देखेंगे। कारण यह कि गरमी की ऋतु में भी यहाँ काफ़ी ठंडक रहती है। रात को कंबल और लिहाफ़ ओढ़ने की आवश्यकता जून और जुलाई में भी पड़ती है। पानी यहाँ का बहुत मीठा और हाज़िम है। भूख खूब लगती है— इधर डटकर खाओ, और उधर दो घंटे बाद सब स्वाहा। किंतु एक बात यहाँ यह है कि चलने की आवश्यकता है, यदि आप चलेंगे नहीं, तो खाना हज़म न होगा, और आपको कब्ज़ रहेगा। यहाँ के पानी से दाल भी कठिनता से, कम तथा देर में, गलती है। गर्दोगुबार का यहाँ नाम नहीं—सड़कें साफ़ और चमकती हुई। गर्द के स्थान पर प्रायः बादल और भाप-भरी हवा आपको उड़ती दिखाई देगी। नीचे के दृश्य प्रायः बादलों के कारण छिपे रहते हैं। कभी-कभी तो ऐसा होता है कि बादल इतने घने और इतनी अधिकता से हमारे चारो ओर उड़ने लगते हैं कि हमें एक गज़ दूर की चीज़ नहीं सुझाई देती। हवा में यह तासीर है कि आप कभी थकेंगे ही नहीं, चाहे दिन-भर चलते ही रहिए। थोड़ी

दूर चलने के बाद आपने थकावट का अनुभव किया, दो मिनट आप रुक जाइए—लीजिए, फिर हरे-भरे हो गए, और थकावट दूर। पानी यहाँ काफ़ी बरसता है, और कभी-कभी तो इतने ज़ोर से बरसता है कि हम मैदान के रहनेवालों को वैसी वर्षा देखने का सौभाग्य ही कहाँ होता है। एक बार पानी बरसा, तो ऐसा जान पड़ता था, जैसे बंबे की धार गिर रही हो। टीन की छतों पर पट-पट हो रहा था—कभी-कभी पहाड़ों के टूटकर गिरने की आवाज़ें भी आती थीं। परंतु सड़कें कभी गंदी नहीं रहतीं। दूसरी बात वहाँ की वर्षा के विषय में यह है कि यह नहीं कहा जा सकता कि वर्षा कब होगी। इस समय बड़ी कड़ी धूप निकली है, सूर्य चमक रहा है, बादल का एक टुकड़ा भी नहीं दिखाई देता, और पाँच ही मिनट बाद सूर्य छिप जाता है, आकाश काला हो जाता और मूसलधार पानी बरसने लगता है। जान पड़ता है, यह अब काहे को रुकेगा। किंतु आध घंटे बाद फिर सूर्यदेव के दर्शन हो जाते हैं। वर्षा होने पर हवा बहुत ठंडी हो जाती है।

मसूरी के दक्षिणी भाग से देहरादून और शिवालिक पहाड़ियों का दृश्य अत्यंत रमणीय दिखाई देता है। देहरादून यहाँ से २१ मील है, किंतु मसूरी के उँचाई पर होने के कारण ऐसा लगता है, जैसा थोड़ी ही दूर हो। विशेषकर रात्रि के समय, जब देहरादून में बिजलियाँ जल जाती हैं, तो ऐसा लगता है, जैसे इंद्रपुरी में दिवाली मनाई जा रही हो। यह दृश्य इलाहाबाद-बैंक के निकटस्थ 'चिल्ड्रेन-पार्क' से देखने में बड़ी सुविधा रहती है—यों तो डिपो के पास से लाइब्रेरी-बाज़ार तक जो मुख्य और प्रायः ३ मील लंबी सड़क है, उस पर से कहीं से भी देखा जा सकता है। सड़क के एक ओर दो फ़ीट ऊँची लोहे की पट्टियाँ लगी हैं, उनके किनारे होकर पैदल मनुष्यों को चलना पड़ता है (दाहनी ओर), और दूसरी ओर—जिधर पहाड़ियाँ हैं—छोटी-छोटी रिक्शा आदि चलती हैं (बाईं ओर)। पहाड़ी प्रांतों में लोग कंडी और झप्पान पर भी

बैठते हैं। यहाँ भी वे मिलती हैं, पर बहुत ही कम। कुछ लोग घोड़ों पर चलते हैं, जो यहां किराए पर मिलते हैं।

सबसे सुंदर दृश्य तो यह होता है कि मैदानों के रहनेवालों को सदा अपने ऊपर बादल दिखाई देते हैं, और मसूरी से देखिए देहरादून की ओर या अन्य निचले स्थानों को, तो बादल आपको अपने से बहुत नीचे पर लटकते दिखाई देंगे, ऊपर तो होते ही हैं। मसूरी से कुछ दूर पूर्व में गंगा और पश्चिम में यमुना बहती हैं। बहुत-से गंगोत्तरी और यमुनोत्तरी जानेवाले यात्री मसूरी या राजपुर से भी जाते हैं। मैं तो यमुनोत्तरी, गंगोत्तरी, केदारनाथ और बद्रीनारायण दूसरे मार्ग (लछमन-झूले) से गया हूँ।

अब मैं मसूरी और उसके आस-पास के दर्शनीय स्थानों का वर्णन करता हूँ। यहाँ पानी की सप्लाई के लिये ६ टंकियाँ हैं। यहाँ की सड़कों, बाज़ारों और इमारतों का हाल सुनिए—

यहाँ सहस्रों होटल और रहने के स्थान हैं—अँगरेज़ों, बड़े अफ़सरों और अमीरों के रहने के लिये महँगे भी और मध्य श्रेणी के लोगों के रहने के लिये कुछ सस्ते भी। हज़ारों की संख्या में बड़ी-बड़ी कोठियाँ भी हैं। कुछ कोठियाँ बिक्री के लिये भी अकसर रहती हैं। यहाँ की इमारतें बहुत बड़ी-बड़ी हैं। जगह बराबर न होने के कारण कोई कोठी यहाँ बनी है, तो कोई दूसरी जगह दूर पर। जहाँ थोड़ी भी चौरस ज़मीन मिली, वहाँ थोड़ा काट-कूटकर बराबर कर ली जाती है, और कोठियाँ बन जाती हैं। ऊँचे-नीचे, पर दूर-दूर पहाड़ों पर स्थित वृक्षों और छोटे-छोटे जंगलों से घिरी कोठियों का वर्णन असंभव है। इनकी छतें ढालू होती हैं, क्योंकि जाड़े में यहाँ बरफ़ गिरती है। यदि हमारे यहाँ की भाँति यहाँ की छतें भी सलोतर हों, तो बरफ़ जमती ही जाय—ढालू होने के कारण बरफ़ गिरती जाती है, जमने नहीं पाती। ईंटें पत्थर की पिसी हुई बालू या बजरी से बनाई जाती हैं, इसलिये काफ़ी महँगी पड़ती हैं।

ईंटों के स्थान पर पत्थर के टुकड़ों का प्रयोग होता है—पत्थर और लकड़ी की खान ही हैं पहाड़। टीन का भी प्रयोग यहाँ बहुत होता है। प्रायः मकानों के दरवाज़ों में शीशे जड़े होते हैं, जिससे बंद रखने पर भी बाहर का दृश्य दिखाई दे, और बादल हमारे कमरों में घुसकर कपड़ों को नम न कर सकें।

यहाँ की मुख्य सड़क का मैं वर्णन कर चुका हूँ। उसी का नाम लाइब्रेरी-बाज़ार है, वही आगे बढ़कर कुलड़ी-बाज़ार, लंढौर-बाज़ार तथा डिपो-बाज़ार का नाम ले लेती है। यों तो सैकड़ों एसफ़ाल्ट की बनी पक्की सड़कें चारो ओर हैं, किंतु यह मुख्य है। लाइब्रेरी-बाज़ार के नामकरण का कारण वहाँ एक बड़े पुस्तकालय का होना है, जहाँ लोग समाचार-पत्र तथा पुस्तकें पढ़ते हैं। किंतु केवल 'मेंबर्स' ही यहाँ जा सकते हैं। यहीं लिखा था "Indians and dogs not allowed." जन-साधारण को उससे लाभ न होगा। प्रायः भारतीय लोग उसमें नहीं जा सकते। रिंक के सामने 'तिलक-लाइब्रेरी' में अधिकतर भारतीय जाते हैं। लंढौर में भी एक पुस्तकालय सर्व-साधारण के लिये है। बिलकुल किनारे पर एक ऊँचा, बड़ा, कटहरेदार, गोल चबूतरा है, जिस पर प्रति बुधवार तथा शनिवार को बैंड बजता है, अतः वह बैंड-स्टैंड कहलाता है। लाइब्रेरी-बाज़ार में एक दूसरे से सटी हुई सैकड़ों दूकानें हैं, जिनमें दुनिया-भर की सभी वस्तुएँ मिल सकती हैं—हाँ, कुछ महँगी अवश्य। जितनी भी हमारी आवश्यकता तथा सुख-भोग की वस्तुएँ हैं, सभी वहाँ सुलभ हैं। केवल लक्ष्मीजी की आवश्यकता है। वहाँ के दवाख़ानों, कपड़ों और ट्वायलेट की दूकानों की सजावट और सफ़ाई देखकर लखनऊ के हज़रतगंज की याद आ जाती है। वहाँ छोटे-बड़े सैकड़ों होटल ठहरने तथा भोजन के लिये हैं। लंढौर-बाज़ार अच्छा है—वहाँ लकड़ी, फल तथा तरकारी आदि की भी दूकानें हैं। कुलड़ी-बाज़ार भी साफ़-सुथरा है। पर लंढौर को लोग कम पसंद करते हैं, उससे तो कुलड़ी अच्छी। लंढौर

बैंड-स्टैंड

[बुधवार तथा शनिवार को यहाँ विविध वाद्य बजते हैं ।]
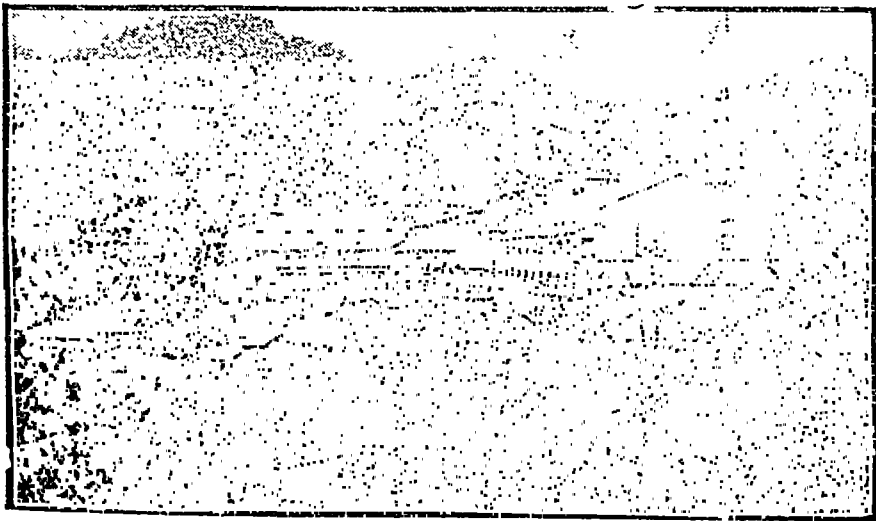
स्टेशन-लाइब्रेरी

[इसके द्वार पर चेतावनी लगी हुई है, जिसका आशय है—हिंदोस्तानियों का आना मना है ।]

में ही फ़ुटबाल-फ़ील्ड है। लंढौर के नीचे मसूरी के उस भाग-भर का गंदा पानी तथा कूड़ा आदि जमा होता है। इससे भी लोग वहाँ ठहरना

लंढौर-बाज़ार; मसूरी
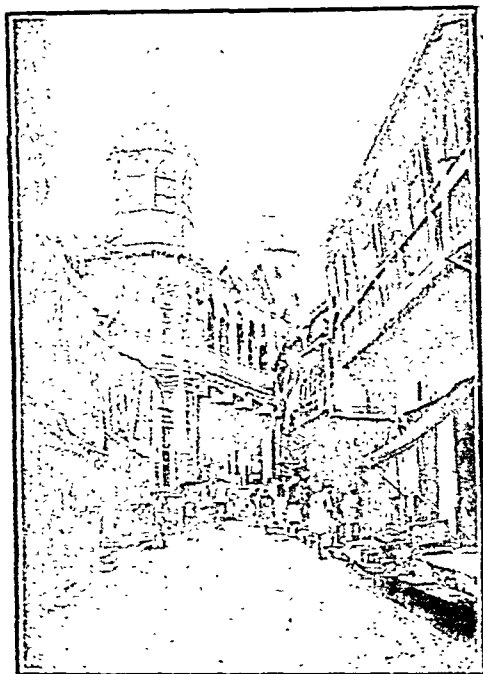
[लंढौर-डिपो से यदि आप मसूरी-पर्यटन को निकलें, तो सबसे पहले आपको यहाँ से गुज़रना पड़ेगा।]

नहीं पसंद करते। यहीं पर आर्य-कन्या-पाठशाला, आर्य-समाज-मंदिर, सिख-गुरुद्वारा और सनातन-धर्म-मंदिर है। स्वर्गीय पं० श्रीधरजी पाठक का निवास-स्थान इस होटल के ठीक पीछे है।

इसके अतिरिक्त घूमने के लिये 'कैमिल्स बैक रोड' अत्यंत चित्ता-कर्षक है—प्रायः लोग वहीं घूमने जाते हैं। वहाँ से हिमालय का

'स्नोव्यू' भली भाँति दिखाई देता है – कितनी शांति और सौंदर्य वहाँ
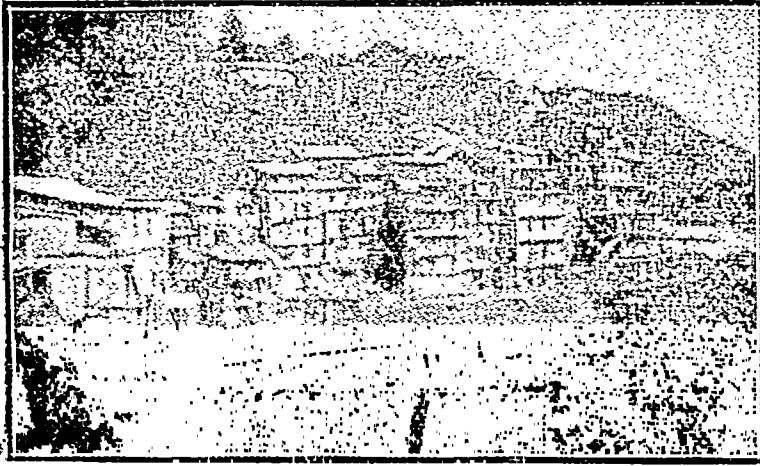
मसूरी का नरक
[लंढौर-बाज़ार के पीछे का दृश्य]

कैमिल्स बैक रोड

विराजमान है। पैदल और घोड़ों पर चढ़े लोग घूमते दिखाई देते हैं।

यहाँ के घोड़े बहुत मज़बूत होते हैं, और उनके पैर इतने सधे होते हैं कि ऊँचे-नीचे स्थान और तंग पगडंडियों पर भी ये चले जाते हैं, इनका पैर नहीं फिसलता। यदि आप बिलकुल नए आदमी हैं, तो घोड़ा किराए पर ले लीजिए, जो कद का छोटा और मज़बूत होता है, और उसका मालिक आपके पीछे-पीछे घोड़े की दुम पकड़े चलता रहेगा। जगह-जगह कैमिल्स बैक रोड में आपको सीमेंट के चबूतरे बने मिलेंगे, जिन पर घूमनेवालों को थककर बैठने की बड़ी सुविधा रहती है।

इसके अतिरिक्त यहाँ 'स्कैंडल प्वाइंट' (कैमिल्स बैक रोड के प्रायः
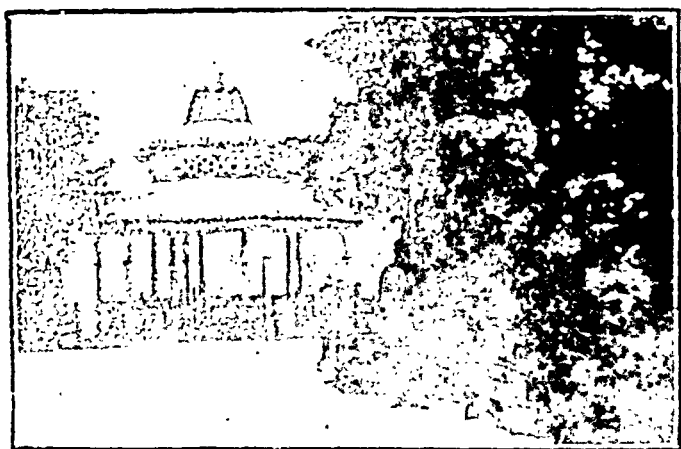
शीतकाल में स्कैंडल प्वाइंट

[यहाँ से हिमाच्छादित पर्वतों का दृश्य बहुत स्पष्ट दिखाई देता है।]

बीच में) है, जिसमें टीन की शेड पड़ी है। यहाँ यात्रियों को बैठने की सुविधा रहती है, और लोग यहाँ सूर्योदय का दृश्य और स्नोव्यू भी देखने जाते हैं। यह सड़क बहुत लंबी और समतल है।

मसूरी अपने स्कूलों के लिये भी सदा से प्रसिद्ध रही है। यहाँ लड़के

तथा लड़कियों के लिये बहुत-से स्कूल हैं—जैसे सेंट जोसेफ़ आदि। ई० आई० आर० द्वारा सचालित 'ओक ग्रोव स्कूल' भी 'झारी-पानी' के निकट है। मसूरी 'पिकनिक' और 'इक्सकरशंस' के लिये भी बहुत ही प्रसिद्ध और अपूर्व स्थान है। घनानंद-हाईस्कूल मसूरी के धरातल में और छोटे बच्चों के लिये कविनेंट स्कूल शिक्षण-कला-प्रेमियों के लिये दर्शनीय स्थान है।

यहाँ के दर्शनीय स्थान ये हैं—

(१) कंपनी-गार्डन या म्युनिसिपल-गार्डन—यहाँ जाने को लाइब्रेरी-बाज़ार से रास्ता गया है। लगभग १ या १½ मील पर हैं—नीचे की ओर। छोटा-सा स्थान है, किंतु बहुत सुंदर और एकांत। इसमें प्रायः सभी पहाड़ी पेड़ मिलेंगे—जैसे पाइन, पापलर, ओक आदि। यहाँ नाना प्रकार के बहारदार फूल मिलते हैं। एक कमरा है, जहाँ कुछ पेड़ धूप आदि से बचाने के लिये रक्खे हैं।

(२) हैपी वैली—यह मसूरी में सबसे ज़्यादा निचाई पर स्थित है। इसमें एक ओर तो पहाड़ी खेती होती है, और एक ओर सुंदर 'टेनिस-कोर्ट' हैं, जो लगातार दूर तक चले गए हैं। यहाँ का दृश्य बहुत ही सुंदर है। मसूरी में केवल यहीं खेती होती है। यहाँ पर्याप्त समतल भूमि है, और यहाँ 'टेनिस-कोर्ट' बने हैं। यहाँ भी लाइब्रेरी-बाज़ार से होकर जाना पड़ता है, और यह भी प्रायः एक मील पर है। शार्लीविल होटल की ओर से उतरकर यहाँ जाते हैं।

(३) चंडालगढ़ी या हाईलैंड हिल— हैपी वैली से लाल स्कूल होते हुए हम लोग चंडालगढ़ी गए। नाम ही से पता चलता है कि इसकी चढ़ाई बहुत सीधी है। मार्ग में महाराज कपूरथला की बड़ी विशाल कोठी सड़क के किनारे दाहनी ओर पड़ती है। इसके बिलकुल ऊपर पहुँचने पर एक सुंदर, चौड़ा चौरस्ता-सा और एक सुंदर भवन बना है, जिसका नाम राधा-भवन है। यह किसी सेठ ने मोल ले

लिया है। इसकी सजावट देखने योग्य है। कहते हैं, शायद अमीर काबुल को अँगरेज़ों ने यहीं कैद किया था। यहाँ से हिमालय के
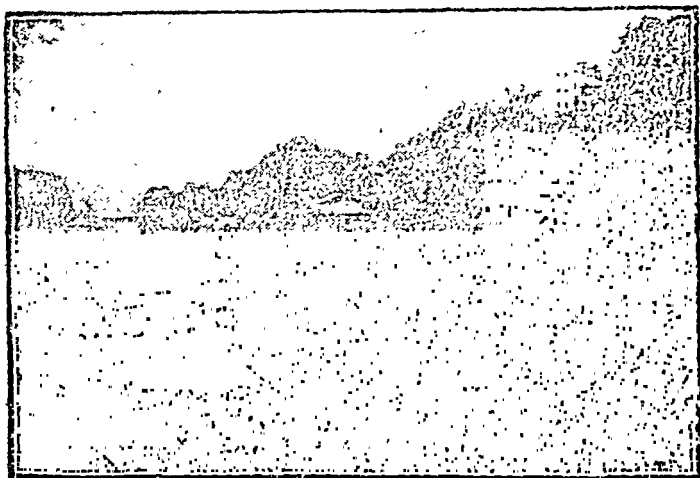
हैपीवैली और शार्लविल होटल

[नगर के कोलाहल से दूर, सभी सुखों और सुविधाओं से परिपूर्ण यह होटल अपने ढंग का एक ही है।]

हिमाच्छादित पर्वत-शृंग दिखाई देते हैं—यदि आकाश मेघ-रहित और स्वच्छ हुआ, तो सूर्य की किरणें जब उन पर पड़ती हैं, उस समय ऐसा जान पड़ता है, मानो किसी ने एक बहुत विस्तृत और चमकता हुआ रजत-खंड रख दिया हो। यहाँ से मोटर की सड़कें और चलते हुए मोटर ऐसे लगते हैं, जैसे जापानी खिलौने। यहाँ की बात हम लोग कभी नहीं भूल सकते। जब हम लोग 'राधा भवन' के निकट थे, तो पानी बरसा, इतनी ज़ोर से और इतनी देर तक कि हम लोग बराबर काँपते रहे—ठंडक के कारण। खड़े होने की जगह भी हम लोगों को एक गज़ चौड़े दरवाज़े की खोल के अंदर मिली। उस समय

महामना मालवीयजी भी चंडालगढ़ी ही में अपना स्वास्थ्य सुधारने के लिये रहते थे। पानी बरसने पर मसूरी बहुत ही ठंडी हो जाती है।

(४) डिपो या लाल तिब्बा—यहाँ भी एक पानी की टंकी है, जो लंढौर को पानी सपलाई करती है। इस ओर पाइन (देवदारु) के पेड़ बहुत हैं। मसूरी में यह सर्वोच्च स्थान है। चढ़ते-चढ़ते भगवान् याद आ जाते हैं। पर क्या मजाल कि ज़रा भी तबियत ऊब जाय। इस ओर अँगरेज़ों और ऐंग्लो-इंडियनों की बस्ती अधिक है। मनुष्यों की बुद्धि ने पहाड़ों को नंदन-कानन बना लिया है। यहाँ भी 'टेनिस-कोर्ट' बने हैं। छोटे-छोटे, स्वस्थ अँगरेज़ों के बच्चे निधड़क पहाड़ों पर उचकते-फाँदते रहते हैं। एक हम लोग हैं कि बच्चा घर के बाहर निकला, और कहा—"जूजू काट खायगा!" फिर क्यों न हमारे बच्चे कायर और डरपोक हों!

डिपो की चोटी पर पहुँचने पर आप एक लोहे की प्लेट लगी देखेंगे, जिसमें खुदा है। बदरीनारायण कितनी दूर है, और केदारनाथ किस ओर है, आदि। सतलज वैली, गंगोत्तरी, यमुनोत्तरी, नंदादेवी आदि यहाँ से दिखाई देते हैं, और उनकी दिशा का ज्ञान होता है। वहाँ प्रकृति की लीला-भूमि देखिए, और दूर पर 'स्नोव्यू'। ऐसा लगता है, मनुष्य इस दुःखमय संसार से हटकर किसी दूसरे संसार में आ गया हो। दूरबीन से देखने में यहाँ से बर्फ़ का दृश्य बहुत साफ़ दिखाई देता है। इस पर्वत-खंड के सामने ही वे खड्ड हैं, जहाँ शिलाजीत पाई जाती है।

(५) जबर खड्ड या खेत—डिपो के आगे है। यहाँ के जंगल में जंगली जानवर हैं, पर शिकार करना मना है—यह एक प्लेट में लिखा है। यहाँ एक सोता हाल ही में निकला है। डिपो जाते समय जो नीचे घनघोर जंगल पड़ता है, उसी में से होकर मार्ग है। घाटी में 'Wood College' है, जहाँ अँगरेज़-बच्चे पढ़ते हैं। बोर्डिंग भी इसी के नीचे है।

(६) खट्टा पानी—डिपो की ओर है। गणेश-होटल से डिपो की ओर १ फ़र्लांग बढ़ने पर हमें एक नीचे जाता हुआ मार्ग मिलेगा, जो खट्टा पानी जाता है। मार्ग में एक पानी की टंकी पड़ती है। थोड़ी दूर बाद बस्ती छूट जाती है। फिर अनेक चूने के भट्टे (कारख़ाने) पड़ते हैं। उसे पार करने के बाद जंगल को मार्ग जाता है। पाइन के वृक्ष अनेक इस ओर हैं। खट्टे पानी में टोल टैक्स की चुंगी है। जो टेहरी राज्य से आते हैं, उन पर चार आने टैक्स पड़ता है। पानी बर्फ़ को मात करता है। इसी ओर से टेहरी राज्य को सड़क जाती है। बड़ा घना जंगल इस ओर है—मार्ग बीहड़ है।

(७) कंपनी खड्ड—इसका पानी बहुत ही अच्छा है। लोग यहीं का पानी अधिकतर पीते हैं। यह गणेश-होटल के बिलकुल पिछवाड़े है। बहुत ऊँचे (२ मर्द) से मोटी धार गिरती है। मार्ग में सिखों की गुरसिंह-सभा पहले पड़ती है। फिर मंसाराम के खच्चड़ख़ाने की ओर से जाना पड़ता है। यह दोनो ओर पर्वत-शिलाएँ खड़ी हैं। दृश्य अत्यंत अच्छा है। पगडंडियाँ बहुत छोटी-छोटी हैं।

(८) बालोगंज—यह सेंट जोसेफ़-स्कूल के निकट है। यहीं मसूरी के बड़े-बड़े कॉलेज और स्कूल हैं। घंटाघर से कुलरी को एक मार्ग जाता है (घंटाघर के नीचे ही सेवा-दल का दफ़्तर है), और एक मार्ग बालोगंज जाता है। काफ़ी ढालू मार्ग है। इसी ओर एक स्कूल भी है। किंग्स केव से गणेश-होटल के दो मार्ग हैं—एक लाइब्रेरी-बाज़ार होकर और एक बालोगंज होकर।

(९) मासी-फ़ाल—यह भी स्कूल की ओर ही है। यह अत्यंत सुंदर घाटी है। संभव है, वहाँ जंगली जानवर हों—ऐसा लगता है। यहाँ किसी अँगरेज़ की 'स्टेट' है। वह चार आने 'चार्ज' कर लेता औरअ पना 'गाइड' भी दे देता है। ऊपर से बहती हुई नदी है।

एक टैंक बना लिया गया है, जिसमें उसका पानी जमा होता है। आध मील चलकर ५-६ फ़ीट की ऊँचाई से गिरता है। प्राकृतिक दृश्यों की दृष्टि से यह स्थान बहुत उत्तम है। मसूरी से देहरादून जो मार्ग जाता है, उसी पर यह मासी-फ़ाल है।

(१०) चमरखड्ड—लाइब्रेरी बाज़ार से दो मील पर है। इसी ओर सिवाय होटल है, जो मसूरी के सर्वश्रेष्ठ होटलों में गिना जाता है, और चंडालगढ़ी जाते समय मार्ग में पड़ता है। चमरखड्ड को नीचे मार्ग जाता है। ढाल बहुत है। एक मोटी धार गिरती है। नीचे भी पहाड़ ऊपर भी पहाड़। पानी पीने को पाइप लगा है।

(११) मरे-फ़ाल्स।

(१२) सिविल हॉस्पिटल और उसके आस-पास से मसूरी का दृश्य--यह बार्लोगंज जाते समय मार्ग में पड़ता है।
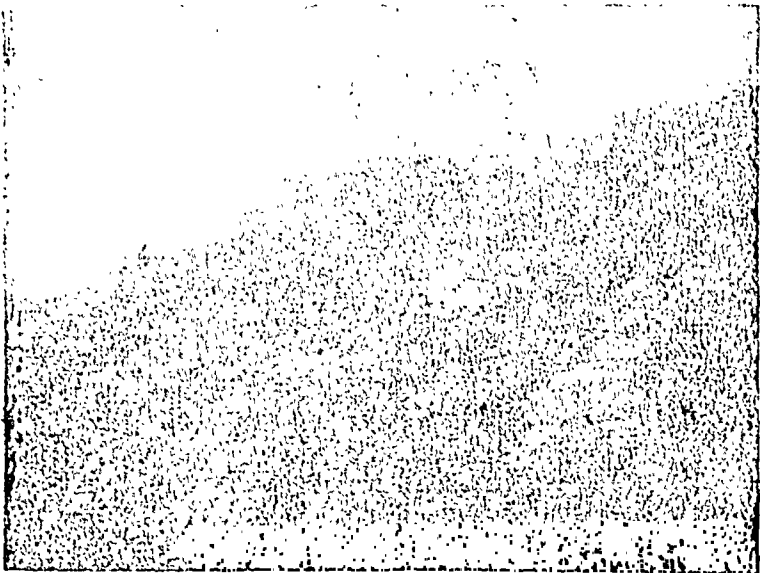
सिविल हॉस्पिटल से मसूरी का एक दृश्य

(१३) लंडौर—यहाँ अँगरेज़ों की स्थायी बस्ती है। अँगरेज़ों के लिये यहाँ अस्पताल बना है। यह सुंदर स्थान है।

(१४) गन हिल—यहाँ एक बहुत भारी तोप और पानी की एक बहुत बड़ी टंकी है, जो कुलरी और कैमिल्स बैक रोड के भाग को पानी सपलाई करती है। यदि कैमिल्स बैक रोड से जायँ (उधर से भी रास्ता गया है), तो ऊबड़-खाबड़ मार्ग है। लाइब्रेरी-बाज़ार से जो रास्ता गया है, वह बहुत अच्छा है। यहां रिक्शा खड़े करने की आज्ञा नहीं है। रानी कलशिया की कोठी भी मार्ग में पड़ती है। यह बहुत ऊँची पहाड़ी है। प्लेडियम सिनेमा (जो हैकमैंस ग्रांड होटल के अधीन है) की ओर से भी मार्ग गया है।

कैंमटी-फ़ाल का पूर्ण दृश्य

(१५) भारी पानी—राजपुर से आनेवाली पैदल सड़क की चौकी पर भारी पानी है। चौकी भारी पानी आउट पोस्ट कहलाती है।

मसूरी से कुछ दूर पर देखने योग्य स्थान निम्न-लिखित हैं—
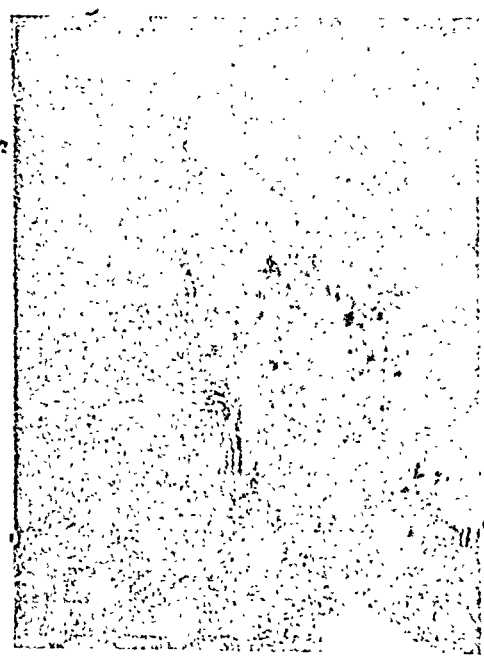
(१) कैंपटी-फ़ाल—यहाँ जाने का रास्ता लाइब्रेरी-बाज़ार या कैमिल्स बैक रोड से होकर (ब्रेवयार्ड होते हुए) है। यह मसूरी से ८ मील है। घोड़े पर, रिक्शा पर या पैदल जाया जा सकता है। हम लोग तो पैदल ही गए। एक पहाड़ी

ले लिया साथ में—वह रास्ता भी दिखाता था, और थरमस, फ़ोटो कैमरा, खाने का सामान और दरी आदि लिए था। यहाँ बड़े सस्ते आदमी मिल जाते हैं। कैंपटी-फ़ाल में खाने को कुछ नहीं मिलता, अतः खाने को साथ ही ले जाना चाहिए। यदि यहाँ

कैंपटी-फ़ाल (निकट का एक दृश्य)

से और आगे जमना-ब्रिज भी जाना हो, तो दो दिन का भोजन रख लेना चाहिए, और ओढ़ने-बिछाने का सामान भी, क्योंकि एक दिन अवश्य लग जाता है। ३ घंटे का रास्ता है। रास्ते में बिजली के तार के खंभे बहुत दूर-दूर पर लगे हैं—मील-मील-भर की दूरी पर। बात यह है कि एक ऊँची पहाड़ी से दूसरी नीची पहाड़ी पर तार ले जाना है, तो दो

खंभे काफ़ी हैं, मील-मील-भर की दूरी पर। रास्ते में कोई झरना नहीं मिलता, किंतु हम लोगों के पास पानी था ही। यहाँ के खेत भी दर्शनीय होते हैं। हमारे यहाँ के खेतों की भाँति थोड़े ही होते हैं। दूर से देखने से ऐसा लगता है, जैसे मखमल बिछी हुई सीढ़ियाँ हों। बराबर ज़मीन न होने के कारण एक ही खेत कई जगह ऊँचा-नीचा होता है। खेत, मैदान, जंगल, खोह, चट्टानें, पशु-पक्षी आदि देखते-भालते हम लोग केंपटी-फ़ाल पहुँचे। काफ़ी थक चुके थे, गरमी भी काफ़ी थी। लगभग ४,००० फ़ीट नीचे उतरना पड़ता है, तब कहीं झरने तक पहुँच पाते हैं। ऊँचे से झरने का दृश्य बड़ा सुंदर है। बहुत ऊँचाई से पहाड़ पर से मोटी पानी की धारा गिरती है—एक स्थान पर मुख्य रूप से, और यों तो हर तरफ़ से उस घाटी में पानी आता रहता है, पचासों छोटी-छोटी धाराएँ हैं। जहाँ पानी गिरता है, उसके कुछ नीचे एक खड्ड सा है, उसमें पानी भरता रहता है—लगभग १½ गज़ चौड़ा होगा। अँगरेज़-बच्चे उसमें तैर रहे थे—मछलियों की तरह। हम लोग तनिक और ऊपर चढ़ गए, और खूब नहाए। मोटी धार के नीचे खड़े होने से डर-सा लगता था। ऐसा मालूम होता था, जैसे महान् पर्वत के अंग-अंग में कोई भयावनी शक्ति निहित हो। यहाँ धान बहुत बोया जाता है। खूब नहाए, और फिर ऊपर चढ़े। इतना परिश्रम पड़ा, और इतनी गरमी थी कि हाँप गए, और पसीने से तर हो गए। भोजन किया, फ़ोटो ली, और आराम किया।

(२) यमुना-ब्रिज—यहाँ से ५-६ मील पर यमुना-ब्रिज है। यह भी बहुत ही सुंदर दर्शनीय स्थान है। यहाँ यमुनाजी के दर्शन होते हैं। रस्सी का पुल है, पार करने के लिये। यह स्थान टेहरी राज्य में है। सवारी पर आनेवालों को चुंगी देनी पड़ती है। एक शिव-मंदिर भी है। लहरें एक दूसरे से लड़ती, मिलती, टकराती और घ-घ-घ करती आगे बढ़ी चली जाती हैं—बीच-बीच में पर्वत-खंड और उनके चारो ओर

दुग्ध के समान उज्ज्वल और पवित्र जल। बड़े भाग्य से ऐसे प्राकृतिक दृश्यों के दर्शन मिलते हैं। यहीं से दूसरे दिन फिर मसूरी पहुँचे।

(३) सहस्रधारा—देहरादून और मसूरी के बीचोबीच में मोटर-सड़क पर ही स्थित 'राजपुर'-नामक एक सुंदर स्थान है। जब मसूरी की
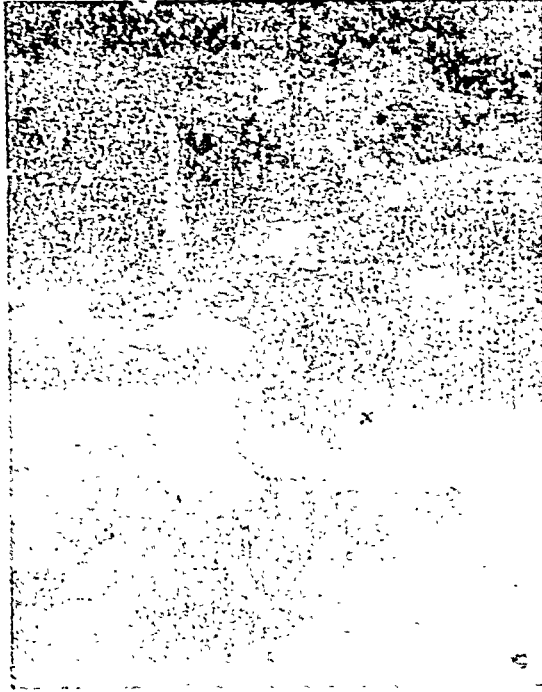
सहस्रधारा (राजपुर) और वाल्दा-नदी×लेखक

मोटर की सड़क नहीं बनी थी, उस समय इस स्थान की विशेष ख्याति थी। अब तो विशाल भवन निर्जन हैं (देहरादून से ७ मील)। यहाँ से २ कोस पर सहस्रधारा या संनसनधारा-नामक एक विशेष दर्शनीय स्थान है। मुझे जितना सुंदर और अच्छा यह स्थान लगा, उतना केंपटी-फ़ाल और यमुना-ब्रिज भी नहीं। यहाँ का दृश्य मनुष्य अपने जीवन में कभी नहीं भूल सकता। हम लोग मसूरी से राजपुर पैदल ही आए। मार्ग में बाईं ओर बहुत दूर पर और बहुत नीचे खड्ड में एक झरना हमारे

मार्ग से समांतर-सा बहता दिखाई देता है। रास्ते में चकैया आड़ू तथा अन्य जंगली और पहाड़ी फलों के बहुत-से पेड़ मिले। उन्हें खाते और तोड़ते चले। समय कटते कितनी देर लगती है। जूता काट रहा था, पैर थके थे, नीचे उतरने पर कंकड़ चुभ रहे थे; पर मस्तिष्क इस ओर जाता ही
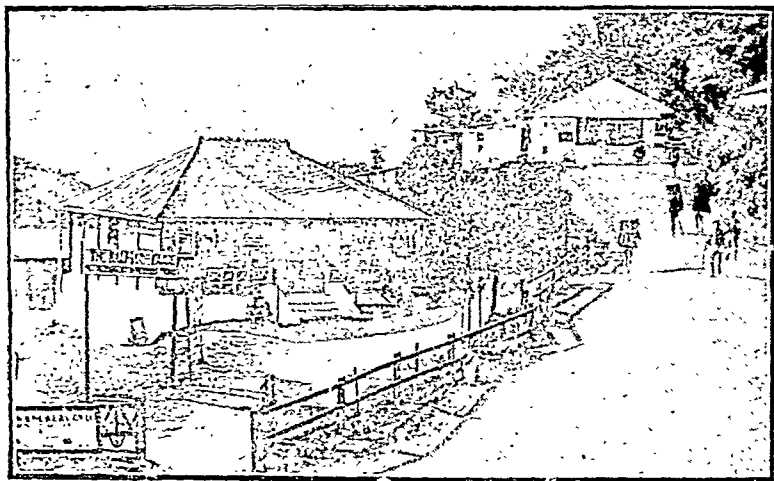
हाफ़ वे हाउस

[राजपुर और मसूरी के बीच में]

कैसे, वह तो प्राकृतिक शोभा देखने में व्यस्त था। राजपुर में पूड़ी बनवा-कर खाई, और इतनी खाई कि पेट फटने लगा। दूकानदार से कह दिया था कि मिर्च बिलकुल मत डालना तरकारी में—तब तो उसने इतनी मिर्च डाली कि मुझे मिर्च की ही तरकारी वह लगी, आलू की नहीं। यदि कहीं कह देता कि मिर्च डालना, तो भगवान् जाने क्या हाल होता। खैर, खा-पीकर सहस्रधारा की ओर चल दिए। थोड़ी दूर पर एक बरसाती नदी मिली। उसे पुल से पार किया। दो मील चलकर एक बड़ा गहरा गड्ढा मिला, जो बहुत चौड़ा और खुश्क था। पर लौटने पर वहाँ ऊपर कमर-

कमर पानी भरा मिला, क्योंकि लौटने के पहले काफ़ी वर्षा हो चुकी थी। यहाँ बड़े काले पत्थर के टुकड़े मिलते हैं। आगे चलकर सड़क मुड़ती है। थोड़ा आगे चलकर बाईं ओर एक धर्मशाला है। कितना रमणीय यह स्थान है—तपस्या और योग-साधन के उपयुक्त। पास ही एक नदी है, और उस पर पुल। इधर-उधर खेत—सीढ़ी की भाँति—और चारो ओर ऊँचे-ऊँचे पहाड़। पुल पार करके एक छोटा-सा बाज़ार पड़ा, जिसमें कुछ दूकानें थीं। बर्फ़ी-पेड़ा और कड़हिया में भुने हुए चने और मूँगफली, यही यहाँ मिल सकता है।

सहस्रधारा पहुँचे। वहाँ के गंधक के चश्मे में नहाए। कहाँ तो पेट फटा जाता था, और कहाँ उसका पानी पीते ही सब स्वाहा! और भूख लग आई। यह है उस पानी का प्रभाव। मुझे वहाँ बहुत-से लोग मिले, जिन्होंने बताया कि हम वर्षों से चर्म-रोग से पीड़ित थे, और लाखों दवाएँ करके हार चुके थे, किंतु ६-७ दिन में ही अपने रोग में आधी कमी पाते हैं।

पास ही बाल्दा-नदी बहती है। एक महादेवजी का मंदिर तथा सहस्रधारा देवी का मंदिर भी पास ही है। सहस्रधारा नाम का स्थान वास्तव में अपने नाम के अनुकूल ही है। वह पहाड़, जिस पर यह है, सैकड़ों स्थानों से रसियाता है, इसी से तो सहस्रधारा नाम पड़ा। पहाड़ों के गुहा-गर्भ में एक कुंड है। निकट ही एक धर्मशाला भी है। यहाँ पहाड़ों के बीच में बनी दो-चार झोपड़ियाँ बड़ी शोभा देती हैं। यहाँ चारो ओर पचासों झरने झरते दिखाई देते हैं। पहाड़ के भीतर एक मोती के समान जल का कुंड है। वहाँ के पर्वत से हल्की-हल्की फुहार पानी की सदा पड़ा करती है। पर्वत वृक्षों और पौधों की हरियाली से परिपूर्ण है। स्वयं नदी कई स्थान पर झरने बनाती रहती है। इस स्थान को न देखना भगवान् की दी हुई आँखों के लाभ से वंचित होना है। जाने की इच्छा तो न होती थी, पर जाना था ही—बहुत बेमन से वहाँ से चले। रास्ते

में मेरे एक साथी के बिच्छू पत्ती (पलाकी) लग गई। इसके लगते ही छोटे-छोटे दाने पड़ जाते हैं, और ज़हर चढ़ जाता है, परंतु भगवान् की कारीगरी देखिए—उसी के पास ही एक और पौधा उगता है, उसकी पत्ती का रस लगा देने से तुरंत ही ठंडक पड़ जाती है।

आगे बढ़ते ही मूसलधार पानी बरसने लगा। दोनो ओर ऊँची-ऊँची पहाड़ी चट्टानें, उनके बीच में ऊँचा-नीचा, खदरीला रास्ता, जिसमें कहीं घुटने तक और कहीं कमर तक पानी भर गया था। बराबर पत्थर के टुकड़े टूट-टूटकर गिर रहे थे। यदि एक भी टुकड़ा हम लोगों पर गिर पड़ता, या पैर फिसलने के कारण हम लोग बह जाते, तो कहीं नामो-निशान भी न रह जाता। किंतु "जाको राखै साइयाँ, मार न सक्कै कोय।" वह नदी, जो ज़रा सी थी, लौटने पर बहुत बड़ी हो गई थी। यदि पुल न होता, तो हम लोग उसे पार नहीं कर सकते थे—इतनी तीव्र धारा थी। छाता लगाए थे, बरसाती कोट पहने थे, पर बिलकुल तरबतर थे। बरसात में पहाड़ी दृश्य कैसा होता है, यह देखने का सौभाग्य हुआ। दस-दस कदम पर झरने झर रहे थे, और हरे-भरे जंगल लहरा रहे थे। राम-राम करके राजपुर पहुँचे, कपड़े बदले, भगवान् को धन्यवाद दिया, और भोजन किया। ऐसी सुखकारी और भयानक सहस्रधारा की यात्रा रही। सहस्रधारा प्राकृतिक सौंदर्य की परा काष्ठा है।

अब मसूरी के विषय में कुछ फुटकर एवं आवश्यकीय वस्तुओं का उल्लेख करके मैं यह वर्णन समाप्त करता हूँ। वहाँ लोग तो घूमने, आराम और आनंद करने जाते हैं—और केवल वे ही लोग, जिनके पास रुपया और समय-दोनो होता है, या वे लोग, जो अपना स्वास्थ्य सुधारने जाते हैं।

वहाँ प्रसन्नता और सुख प्रत्येक परदेसी के मुँह पर दिखाई देगा। जंगल में सचमुच मंगल मनाया जा रहा है। 'रिक्रिएशन' और सुख-भोग की सभी वस्तुएँ वहाँ पर्याप्त रूप में हैं। राक्सी, जुबली प्रभृति अनेक सिनेमा-घर हैं; 'रिंक' है, जहाँ 'स्केटिंग' होती है; अँगरेज़ों

का नृत्य-गृह (ट्राकाडीरो) है, तथा अन्य खेल-कूद के भी सामान हैं। नित्यप्रति मैच, कुश्ती, कॉन्फ्रेंस, गान या नेताओं की स्पीचें—कुछ-न-कुछ वहाँ होता ही रहता है। वहाँ रहनेवालों का कार्य-क्रम भी यही है—खाना, घूमना, सोना या विनोद करना। हर ओर, हर समय आपको रंग-बिरंगी, उम्दा-से-उम्दा साड़ियाँ पहने स्त्रियाँ तितलियों की तरह इधर-उधर उड़ती दिखाई देंगी। चारो ओर जैसे सौंदर्य का समुद्र उमड़ रहा हो। पुरुष अपने अच्छे-से-अच्छे सूट, अचकन या अन्य पोशाकें पहने मित्रों या अपनी स्त्रियों के साथ टहलते दिखाई देते हैं। कहीं बिलियर्ड हो रहा है, और कहीं अन्य 'इनडोर गेम्स'। रेडियो की आवाज़ तो हर ओर गूँजती रहती है। पंडित जवाहरलाल नेहरू उन दिनों मसूरी ही में थे। उनके दर्शन का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ।
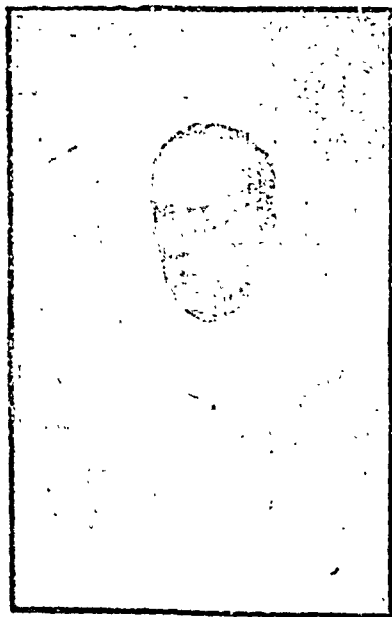
राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल नेहरू

इन अच्छाइयों को देखते हुए हमें वहाँ की कुछ बुरी बातों को भी न भूल जाना चाहिए। मैं बता चुका हूँ कि राजे-महाराजे, नवाब, बड़े-बड़े

ज़मींदार और ताल्लुकेदार वहां आते और ऐशोआराम में पानी की तरह रुपया उड़ाते हैं। उनके इस नैतिक पतन को देखकर क्षोभ और हृदय को कष्ट होता है। एक ओर अमीरों की रंगरेलियां और गुलछर्रे देखिए, और दूसरी ओर वहां के निवासी पहाड़ियों की सूरत-शक्ल, कपड़े, भोजन और रहने का स्थान। वे परिश्रमी, ईमानदार और सीधे होते हैं, और कदाचित् इसी का फल भगवान् उन्हें कष्ट के रूप में देता है। वे शरीर के मैले सही, उनका बाह्य शरीर भले ही चिथड़ों में ढका हो, किंतु उन मरभुक्खों और आधे पेट खानेवालों की अंतरात्मा इन सभ्य कहलानेवालों से कहीं स्वच्छ है, बल्कि कहीं उच्च है। मसूरी में दो सीज़न होते हैं -- पहला मई, जून और जुलाई के महीने में। जुलाई में बारिश होने लगती है, अतः जून के अंत तक वहां की भीड़ छँट जाती है, और दूसरा सीज़न सितंबर और अक्टोबर में होता है। इसी सीज़न में हिमाच्छादित पर्वत-श्रेणियों का दृश्य वहां से अत्यंत आकर्षक होता है। सच्चा आनंद आजकल ही आता है। इसमें अधिकतर पंजाबी लोग ही आते हैं। पहाड़ों का सर्वश्रेष्ठ सीज़न तो वर्षा के पश्चात् ही होता है। बेचारे पहाड़ी इन्हीं छः महीनों में मज़दूरी करते हैं, और शेष छः महीने बैठकर खाते हैं।

मसूरी में ताज़े फल और तरकारी को छोड़कर अन्य सभी वस्तुएँ प्रायः उसी भाव में मिलती हैं, जिस भाव में मैदानों में। तरकारी और फल अवश्य बहुत महँगे होते हैं, और चीज़ें तो कुछ ही महँगी होती हैं।

मसूरी में भी भिखारियों को देखकर थोड़ा आश्चर्य अवश्य हुआ, किंतु वैसे ही विचार आया कि भारतवर्ष ही कंगाल है, अतः कँगलों का सभी स्थानों पर पाया जाना स्वाभाविक है। ख़ैर, भिखारी वहाँ थे कम। पूरनचंद ऐंड संस का रिंक भी है तथा जुबली-पिक्चर-पैलेस भी। इसके अतिरिक्त और बहुत-सी कोठियाँ उनकी हैं। भैंसाराम ऐंड संस

भी वहाँ के धनाढ्य पुरुषों में हैं—उनका गणेश-होटल, मालिंगार-होटल (गणेश होटल के ऊपर), राक्सी-होटल, राक्सी-पिक्चर-पैलेस आदि हैं। लंढौर में इन्हीं के घर के नीचे इनका बैंक है।

इस यात्रा का वर्णन मैंने बहुत संक्षेप में किया है। यह भी ध्यान रक्खा है कि सभी आवश्यक वस्तुओं का वर्णन हो जाय, जिससे वहाँ यदि कोई भाई जायँ, तो शायद इस वर्णन से उन्हें कुछ सहायता मिल सके। साथ में फ़ोटो कैमरा, थरमस, बरसाती ओवर-कोट, दूरबीन, छाता आदि होना परमावश्यक है।

नैनीताल

प्रकृति-पुरुष ने प्रकृति का निर्माण करके अपना नाम सार्थक किया है। प्रकृति के नाले, नदी, पर्वत आदि तो सुंदर हैं ही, पर प्रकृति की कारीगरी में सुंदरतम वस्तु मनुष्य है, और मनुष्य की भी सर्वोत्तम वस्तु उसकी बुद्धि है। इसी के सहारे मनुष्य न-जाने कैसे-कैसे अपूर्व रहस्यों का उद्घाटन करता है। निर्जन, हिंसक पशुओं से पूर्ण और अगम्य स्थान आज उसने पृथ्वी के नंदन-कानन बना दिए हैं। नैनीताल भी एक ऐसा ही स्थान है।

मैं चारबाग़-स्टेशन से सायंकाल ६-१५ की गाड़ी (ई० आई० आर०) से नैनीताल चल दिया। १२ बजे रात्रि को बरेली पहुँचा। वहाँ गाड़ी बदली। प्रातःकाल ५ बजे काठगोदाम पहुँचा। स्टेशन बड़े सुंदर स्थान में है।
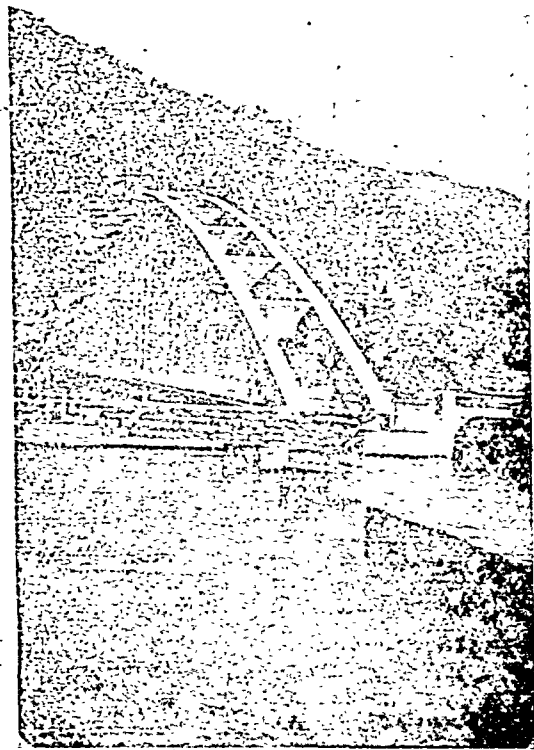
काठगोदाम

इसके चारो ओर पर्वत है। यों तो गाड़ी जब लालकुआँ पहुँचती है, तभी से पर्वतों के दर्शन होने लगते हैं, और पृथ्वी ऊँची-नीची होने के कारण दो एंजिन लग जाते हैं। ट्रेन से पहाड़ों का दृश्य और शोभा बहुत

रास्ते, वैसे ही सुंदर प्राकृतिक दृश्य, वैसे ही झरने। आधी दूर के बाद तो हरियाली आदि में बहुत वृद्धि हो जाती है। श्रेणीबद्ध पर्वतीय वृक्षों के शिखर ऐसे लगते थे, जैसे उन पर झाड़-फ़ानूस रक्खे हों। यहाँ की सड़क मसूरी की सड़क से अधिक चौड़ी है। कहते हैं, काठगोदाम से नैनीताल की सड़क इंजीनियरिंग का एक अति उत्तम नमूना है। थोड़ी दूर और बढ़कर दो सड़कें हो जाती हैं—एक तो अलमोड़ा आदि को चली जाती है, और दूसरी नैनीताल को। हमारी मोटर नैनीताल-वाली सड़क पर आ गई, और आगे बढ़कर टोल-टैक्स देना पड़ा, और फिर मोटर सीधी नैनीताल-झील के पास ही तल्लीताल में स्थित
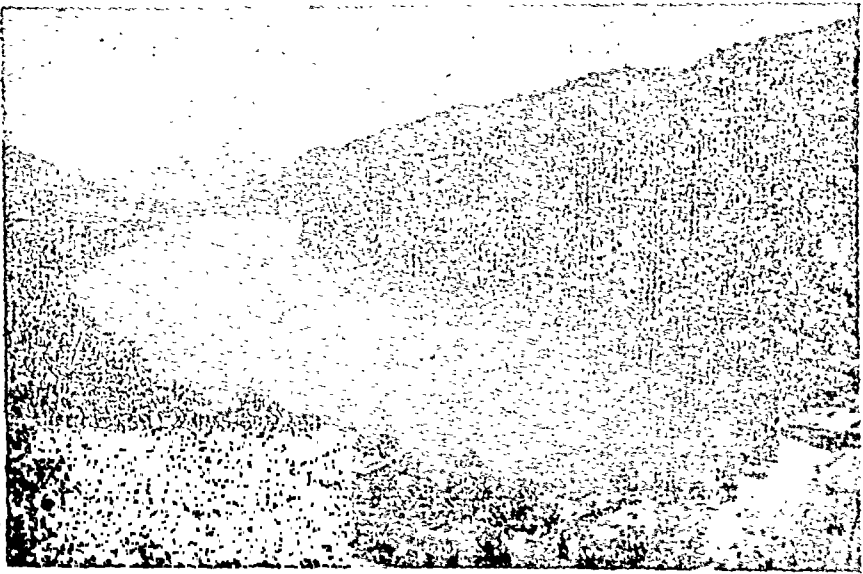
नैनीताल की एक झील

डाकख़ाने के पास रुकी। हम लोग हिमालिया-होटल में गए, पर बाद में इंपायर-होटल में एक कमरा ले लिया।

नैनीताल मसूरी से कुछ नीचा है। यहाँ की मुख्य दर्शनीय वस्तु 'नैनीताल' है। यह झील ३/४ मील लंबी और १/४ मील चौड़ी होगी।

इसके एक ओर तल्लीताल बसा है, और दूसरी ओर मल्लीताल। तल्ली-ताल के आगे मोटरें जाने की आज्ञा नहीं। गवर्नर और बहुत बड़े-बड़े अफ़सरों की मोटरों को छोड़कर अन्य मोटरें नहीं जा सकतीं। यहाँ भी लोग रिक्शा पर चलते हैं या पैदल। तल्लीताल घना बसा है। यह काफ़ी सपाट है, अतः नीचे का बाज़ार और मकान प्रायः वैसे ही हैं, जैसे मैदानों में होते हैं। यहाँ हिंदुस्थानी बस्ती है, अतः मकान गंदे और छोटे हैं, और दूकानें भी हिंदुस्थानी तथा काफ़ी गिचपिच। मुझे नैनीताल मसूरी की भाँति पसंद नहीं आया।

डाकख़ाने के नीचे ही गंधक का एक चश्मा है। इसका जल बहुत हाज़िम है, और अधिकतर लोग इसी जल का प्रयोग करते हैं। नैनीताल में बंबे हैं, जिनमें झील का पानी आता है। कहते हैं,
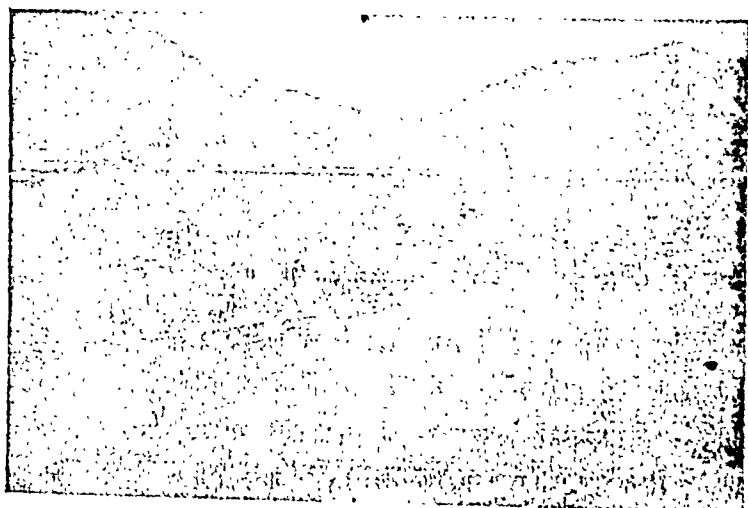
नैनीताल की झील का एक दृश्य

'लाइम वाटर' होने के कारण उससे पेट ख़राब हो जाता है। नैनीताल की जल-वायु भी मसूरी के मुक़ाबिले में अच्छी नहीं, यह भी

वहाँ के ही लोगों का कहना है। चहल-पहल यहाँ भी बहुत रहती है, किंतु मसूरी और नैनीताल में भेद यह है कि नैनीताल में गवर्नमेंट सीट होने के कारण अफ़सरों और राजनीति से संबंध रखनेवालों की ही संख्या अधिकता से दिखाई देगी। बड़े-बड़े बुज़ुर्ग, बड़े-बड़े अफ़सर तेज़ी से अपने काम पर जाते दिखाई देते हैं—जैसे उन्हें फ़ुरसत न हो। यहाँ लोग अपने-अपने कामों से जैसे आते हों। 'एक पंथ, दो काज' हो जाते हैं—पहाड़ी प्रांत की सैर भी और अफ़सरों से मिला-भेंटी भी। वह मस्ती, वह बेपरवाही, वह विनोद, छुट्टी और आराम करने का भाव, जो मसूरी में लोगों के चेहरे पर दिखाई देता है, यहाँ नहीं। यहाँ लोगों के चेहरे गंभीर होते हैं—अपने बड़प्पन में डूबे हुए, जैसे वहाँ के मामूली लोगों से वे लोग कटे-कटे घूमते हों। मसूरी की-सी आत्मीयता, प्रेम और समता का भाव यहाँ कहाँ ?

ऐसा नहीं कि यहाँ केवल अफ़सर और 'जीहुज़ूर' लोगों का ही जमाव रहता हो, बल्कि बहुत-से और लोग भी पर्वतीय सुंदरता देखने के लिये आते हैं। उनके चेहरों में आप वे ही सब बातें पावेंगे, जो मसूरी में। भेद इतना ही है कि मसूरी में केवल एक ही 'कैटागेरी' के लोग होंगे, और यहाँ दो 'कैटागेरी' के। मसूरी के मुक़ाबिले में यह स्थान छोटा भी है, और अधिक घना बसा भी। कारण यह कि संयुक्त प्रांत के लोगों के लिये सबसे निकट यही 'हिल-स्टेशन' है, और कदाचित् सबसे सस्ते में लोग यहाँ निपट लेते हैं। मकानों के किराए का तो यहाँ वही हाल है, जो मसूरी में, किंतु खाने-पीने का सामान, फल और तरकारी आदि यहाँ मसूरी के मुक़ाबिले सस्ती है।

नैनीताल और उसके आस-पास निम्न-लिखित स्थान देखने योग्य हैं—

(१) टिफ़िन टाप, (२) पखानदेवी, (३) लैंड्स एंड, (४) खुरपाताल, (५) सातताल, (६) सूखाताल, (७) चाइना पीक, (८) स्नोव्यू, (९) लढिया-कोटा, (१०) शेर का डंडा, (११)

फ़्लांडरस्मिथ-कॉलेज, (१२) कालाखान, (१३) गडिया, (१४) सिगाहीधारा, (१५) कृष्णपुर, (१६) शिव-मंदिर, (१७) वीर भट्टी, (१८) जूनी कोट, (१९) मनोरा, (२०) गोथा, (२१) सेंट जोसेफ़ - कॉलेज, (२२) वेलेजली - गर्ल्स - हाईस्कूल, (२३) डासियंस आफ़ सेंट्रल कॉलेज गर्ल्स, (२४) गवर्नमेंट-हाउस, (२५) सेक्रेटरियेट, (२६) कौंसिल-हाउस, (२७) टैंक (गवर्नमेंट-हाउस के ऊपर), (२८) सेंट फ्रांसिस कॉलेज, (२९) नैनादेवी का
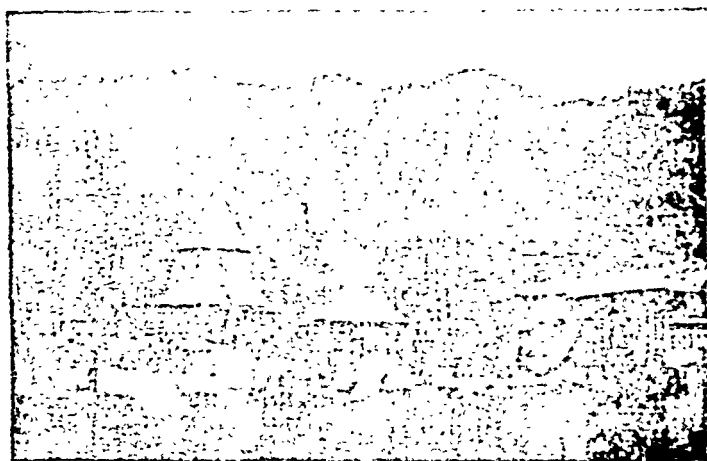
नैनादेवी का मंदिर (नैनीताल)

मंदिर, (३०) नैनीताल - झील के बाईं ओर एक पहाड़ के नीचे देवीजी का मंदिर, (३१) आइस-खड्ड (स्नोव्यू के पास), (३२) फ़्लैट (खेल के मैदान), (३३) सिनेमा - गृह तथा स्केटिंग के लिये बिल्डिंग (फ़्लैट के पास), (३४) सूखा ताल और (३५) खड़िया ताल।

अब मैं संक्षेप में मुख्य-मुख्य स्थानों का वर्णन करता हूँ। मैं पहले ही कह चुका हूँ कि यहाँ की मुख्य दर्शनीय वस्तु नैनी-झील है। इसके

चारो ओर ऊँचे-ऊँचे पहाड़ हैं। हाँ, जिस ओर पोस्टऑफ़िस है, उस ओर पहाड़ नहीं हैं। नैनीताल बहुत नीचे पर बसा है। झील के चारो ओर ऊँची पहाड़ियाँ हैं, जिन पर कोठियाँ बनी हैं। कोठियों पर जाने के लिये हर ओर सैकड़ों की संख्या में एसफ़ास्ट की बनी चौड़ी सड़कें हैं। झील की शोभा ऊपर से देखने में बड़ी सुंदर है। विशेषकर रात्रि के समय जब ऊँची-ऊँची पहाड़ियों पर स्थित कोठियों की बिजलियाँ जल जाती हैं, और उनकी परछाईं जल में पड़ती है, तो झलझलाता हुआ शांत जल अपूर्व शोभा दिखलाता है। उस समय जल की स्वर्णिम आभा अद्वितीय होती है। दिन में भी झील की शोभा अपूर्व होती है। पचासों छोटी-छोटी डोंगिया झील में हैं, जो इधर से उधर चलती रहती हैं। हम लोग अक्सर अपने हाथों से झील में 'बोटिंग' का आनंद उठाया करते थे। झील काफ़ी गहरी है, और जल का ताप-क्रम प्रत्येक स्थान पर एक-सा नहीं है—कहीं कुछ गर्म, कहीं ठंडा और कहीं बहुत ठंडा। लोगों का कहना है, इस झील के गर्भ में बहुत-से सोते हैं, जिनसे गर्म और ठंडा पानी निकला करता है, इसी से झील में प्रत्येक स्थान का ताप-क्रम असमान है। प्रायः जल ठंडा होता है। किनारे-किनारे लगी सिवार निकालने के लिये सदा आदमी काम करते रहते हैं। बीच में सिवार नहीं। बीच-बीच में लोहे के गोल-गोल बंद हंडे-से पड़े हैं, बिलकुल वैसे ही, जैसे कलकत्ते में गंगाजी में पड़े हैं। नावों की शोभा उस समय अवर्णनीय होती है, जब उनमें 'रेस' होती है। पालदार नावें एक साथ छूटती हैं, तो ऐसा लगता है, जैसे बहुत-सी बड़ी-बड़ी चिड़ियाँ अपने बड़े-बड़े सफ़ेद पर फैलाए पानी की सतह से चिपकी हुई-सी उड़ती चली जा रही हों। झील के दाएँ-बाएँ पक्की सड़कें हैं, जिन पर तिपाइयाँ पड़ी हैं। दर्शक उन पर बैठकर अपनी थकावट मिटा और झील की शोभा देख सकते हैं। झील के किनारे कई बोट-हाउस हैं, और एक जल-क्लब भी। तल्लीताल से झील की दाहनी ओरवाली सड़क पर थोड़ी दूर चलिए,

तो उसके किनारे बड़ी-बड़ी दूकानें हैं, और उसके किनारे पर स्थित पहाड़ी पर बड़ी-बड़ी कोठियाँ और होटल। यह सड़क मल्लीताल को गई है, और फ़्लैट के पास निकलती है। यदि झील के बाई ओर (तल्लीताल से) चलें, तो किनारे-किनारे बहुत ही सीधी और ऊँची चट्टानें हैं। उस ऊँची पहाड़ी के नीचेवाली सड़क पर दाहनी ओर की सड़क की भाँति चहल-पहल नहीं। वह बहुत शांत स्थान है, जैसे वहाँ शांति का निवास हो। अँगरेज़ों के बच्चे अपने स्कूल के मास्टरों के साथ कभी-कभी वहाँ आते और एक ऊँचे स्थान पर बने हुए चबूतरे से फाँद-फाँदकर तैरा करते हैं—ठंडे जल में। वह कितने परिश्रमशील, अध्यवसायी और साहसी होते हैं। उन्हें वैसा ही बनाया जाता है, और हमें बचपन में ही मा-बाप फूल-पान बना देते हैं। तभी तो फूल के ऊपर पैर पड़ने से हमें ज़ुकाम हो जाता है—यह हमारी नाज़ुकबदनी है, तभी तो वह मालिक हैं, दुनिया-भर में राज्य करते हैं, और हम नौकर और दुनिया-भर के ठुकराए हुए। तो भी न-जाने हम किस बात पर ऐंठते हैं?

थोड़ी-थोड़ी दूर पर दोपहर के समय लोग मछली की कटिया डाले किनारे पर लेटे या बैठे दिखाई देंगे। होटल या घरों में न सोए, यहीं बैठे और पड़े रहे। चलो, एक शग़ल ही सही। घड़ियाँ न गिनीं, प्राकृतिक सौंदर्य के दर्शन ही कर लिए। थोड़ी दूर बढ़ने पर एक देवीजी का प्राचीन मंदिर पहाड़ी की तलहटी में है। वहाँ भक्तों की कमी है। सूट और कालर लगाकर भगवान् और देवी-देवताओं की भक्ति नहीं की जाती। यह सड़क भी आगे चलकर 'फ़्लैट' के पास निकलती है (बाईं ओर)। यह सड़क प्रातः-सायं घूमने के लिये बहुत उपयुक्त है। ताल के दक्षिण की ओर के पहाड़ का नाम 'आमार पाटा' और उत्तर की ओर के पहाड़ का नाम 'चीना' है।

झील के इस ओर मल्लीताल कहलाता है। झील के किनारे ही

नैनादेवी का मंदिर है, जिसमें दो-एक साधु भी दिखलाई दिए। मंदिर में एक छोटा-सा धर्मशाला भी है। मंदिर प्राचीन है, और उसमें मुख्य मूर्ति नैनादेवी की है, किंतु दो-एक अन्य मूर्तियाँ भी हैं। ऐसे स्थान में मंदिर देखकर आंतरिक आनंद होता है। हिंदुत्व का भाव एक बार हृदय में हिलोरें मारने लगता है। मसूरी में भी कदाचित् दो मंदिर हैं। नैनीताल में दो मंदिर हैं।

इसके पास ही दो बड़ी इमारतें हैं—एक में स्केटिंग होती है, दूसरी में सिनेमा-गृह है। पास ही एक ऊँचे पर काफ़ी बड़ा कटहरेदार चबूतरा है, जिस पर बैठने के लिये तिपाइयाँ पड़ी हैं। यहाँ से झील का दृश्य बहुत सुंदर मालूम पड़ता है।

इस स्थान का नाम 'फ़्लैट' है, और नाम के अनुसार ही यह स्थान बहुत लंबा-चौड़ा मैदान है। इतना लंबा-चौड़ा, जिसमें घोड़े दौड़ाए जाते हैं, और फ़ुटबाल तथा हाकी खेलने के लिये कई फ़ील्डें बनी हैं। सायंकाल खिलाड़ियों का खेल देखने को हज़ारों आदमी जमा होते हैं। एक ओर बहुत ऊँची दीवार है, और उस पर कटहरे लगे हैं। यह 'फ़्लैट' कई ओर कटहरे से घिरा है। इसी पर १२ मई, १६३७, बुधवार को सायंकाल शायद एडवर्ड दि एट्थ (वर्तमान ड्यूक ऑफ़् विंडसर) के 'कारोनेशन' के उपलक्ष में खूब आतशबाज़ी छूटी थी। मैं भी उस दिन वहीं था। बड़ी भीड़ थी, किंतु 'फ़्लैट' सबको स्थान दे सकता था, क्योंकि काफ़ी लंबा-चौड़ा था।

मल्लीताल का बाज़ार तल्लीताल के बाज़ार से कहीं अच्छा और साफ़ है, किंतु जो सफ़ाई, सजावट और अच्छाई मसूरी के बाज़ारों में है, उसका चतुर्थांश भी यहाँ नहीं।

गंदगी यहाँ भी पर्याप्त है। बाज़ार काफ़ी बड़ा है, और हर प्रकार की वस्तुएँ मिल जाती हैं। बड़े-बड़े फ़र्म, कंपनियाँ आदि भी इसी ओर हैं। इस ओर ऊँचे स्थानों पर स्थित कोठियों पर अँगरेज़ भी रहते

हैं। और आगे बढ़कर 'सेक्रेटरियट' के भवन हैं। ये बड़े सुंदर और
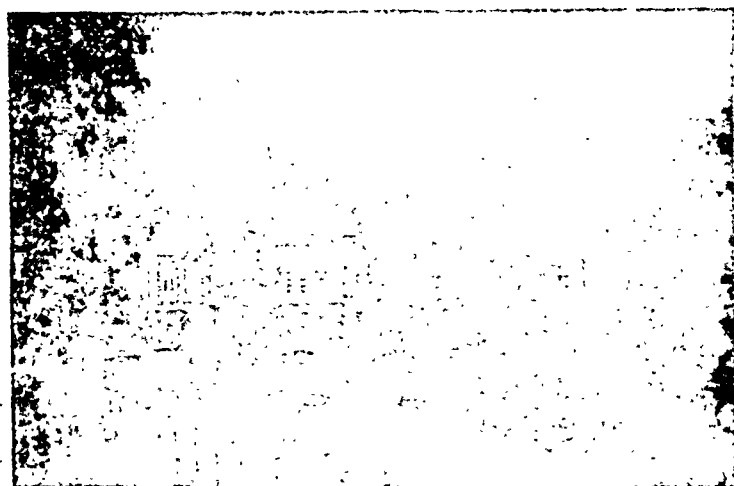
सेक्रेटरियट-भवन—नैनीताल

पहाड़ी के नीचे बने हैं। और, यह स्थान खास तौर से चुनकर तय किया गया होगा, ऐसा लगता है। इसके आस-पास कई एक छोटे-बड़े, किंतु सुंदर बाग हैं। यहाँ से नैनीताल का दृश्य बहुत मनोहर दिखलाई देता है।

चाइना पीक जाने का इधर ही से रास्ता है। नैनीताल में सर्वोच्च स्थान चाइना पीक ही है। लाल और हरी पत्तियों के पेड़ अलग-अलग पंक्ति में ऐसे खड़े दिखाई देते थे, जैसे दो टीमें (दल) भिन्न-भिन्न रंग की पोशाक पहने 'ड्रिल' (कवायद) कर रही हों। यहाँ इतने अधिक रंग-बिरंगे फूल दृष्टिगोचर होते हैं कि चित्त प्रसन्नता की सीमा को पहुँच जाता है। कहते हैं, जितनी जड़ी-बूटियाँ इस रास्ते में हैं, उतनी कहीं नहीं। दुनिया-भर की जड़ी-बूटियाँ यहाँ उगती हैं। इस ओर कोई झरना नहीं। झरना तो नैनीताल-भर में नहीं है, जब कि मसूरी

में बहुत-से झरने हैं। बड़ी कठिन, सीधी चढ़ाई गई है। हम लोग एक रास्ते से गए, और दूसरे से लौटे। यहाँ से बदरीनाथजी की बरफ़ बहुत साफ़ दिखाई देती है। नैनीताल से यह लगभग १,००० या १,५०० फ़ीट ऊँचाई पर है, अतः वहाँ की हवा का अधिक मधुर और ठंडा होना स्वाभाविक ही है।

दूसरा रास्ता छोटा तो अवश्य है, पर बड़ा ऊबड़-खाबड़, ऊँचा-नीचा और कहीं-कहीं कष्ट-प्रद है। सड़क के एक ओर बहुत नीचे गड्ढे हैं, और ऊपर से नीचे का दृश्य देखने में बहुत अच्छा लगता है। किंतु इस ओर भी लोहे के सीखचे नहीं लगे हैं, और सड़क भी कम चौड़ी है, और बराबर भी नहीं। जाते समय हम लोग बंदरों की तरह मुख्य मार्ग छोड़कर short cut (लघु मार्ग) के फेर में पहाड़ी खंडों को पकड़-पकड़कर चढ़ते थे, किंतु मुख्य सड़क के आस-पास ही रहते थे। ऐसा करना ख़तरनाक था, किंतु कितना आनंद इस स्वतंत्रता-सूचक भूमि में आता है—मनुष्य अपनी घर-गृहस्थी, सांसारिक कष्ट आदि भूला, अपने नेत्रों से प्रकृति का सौंदर्य पान करता हुआ, अपनी आत्मा को तृप्त करता हुआ अपने आपे को भूल जाता है। रास्ते-भर तरह-तरह की पत्तियाँ और रंग-बिरंगे फूल तोड़ते हुए हम लोग बढ़ रहे थे। थोड़ी दूर आने पर एक सज्जन, जो वहीं के रहनेवाले एक सभ्य और मध्यम श्रेणी के गृहस्थ थे, घोड़े पर चढ़े चाइना पीक के उस ओर अपने गाँव जा रहे थे।

वहाँ के निवासी कितने सहृदय, प्रेमी और निर्मल तथा सात्त्विक भाव-वाले होते हैं। हम लोगों के साथ बच्चे भी थे बारह-बारह वर्ष के। हम लोगों के लाख कहने पर भी उन ब्राह्मण और ज़मींदार महोदय ने अपने पास बच्चों को बैठा लिया, और रास्ते-भर इधर-उधर की बातें करते रहे। एक हमारे प्रांत के ज़मींदार हैं, जिनमें सहृदयता और प्रेम का जैसे अभाव ही है। बादल घिर आए, पानी की फुहार पड़ने लगी, किंतु वहाँ

ठहरने का स्थान कहाँ—हम लोग ऊपर बढ़ते ही गए। पहाड़ों का इतना सुंदर दृश्य जीवन में केवल एक ही बार देखने का अवसर और प्राप्त हुआ था, और वह था सहस्रधारा की यात्रा में। हवा इतनी तेज़ कि किनारे खड़े हों, तो गिर पड़ें।

यहाँ की और शहरों की हवा में वैसा ही अंतर है, जैसा चार दिन के बासी रंगूनी चावल और कालका-भंडार के ताज़े रसगुल्ले के स्वाद में। यहाँ लकड़ी टेक-टेककर पहाड़ों पर चढ़ने-उतरने में क्या आनंद आता है—एक सेकेंड में थके, बैठे, थकावट दूर की, और फिर चले। चुंगी-घर के पास एक विशाल वृक्ष है, वहीं बैठकर देखने से नगर का पूर्ण दृश्य दिखाई देता है, और देखने में बहुत मनोरम लगता है। प्रकृतिदेवी का निकेतन नैनीताल टीक के वृक्षों का घर है। कुछ पेड़ों में मुकुट की तरह सजी हुई पत्तियाँ होती हैं। जंगल और नगर का सुंदर सम्मिश्रण यहाँ दिखाई देता है, मानो घनघोर जंगल नगर के ऐशोआराम और तड़क-भड़क से प्रेम-पूर्वक भेंट कर रहा हो।

रात्रि के समय चारो ओर जब ऊँची-ऊँची पहाड़ियों पर स्थित कोठियों की बत्तियाँ जल जाती हैं, तो ऐसा लगता है, जैसे श्याम घन के बीच-बीच में ज्योतिर्मय तारागण। कोठियों से निकलता हुआ धुआँ मनुष्य के हृदय में अलौकिक सुख और सुषमा का प्रादुर्भाव करता है। अपने होटल से भी देखने में यह दृश्य अवर्णनीय होता है। एक ओर हरे-हरे पेड़ों का झुरमुट और लहलहाता जंगल और एक ओर (अलमोड़ा जानेवाली सड़क जिस ओर है, उस ओर) सैकड़ों मील तक नीचे पर स्थित पहाड़ी घाटियाँ और लंबे-चौड़े, ऊँचे-नीचे मैदान। यह नीचे का दृश्य बहुत ही सुंदर दिखलाई देता है।

हमारे होटल से होकर गवर्नमेंट-हाउस का रास्ता था। एक दिन वहाँ गए। पहले सेंट जोसेफ़-कॉलेज पड़ता है। वह ऊँचाई पर स्थित है, और बहुत काफ़ी घेरे में उसके भवन तथा खेलने के मैदान हैं। गवर्नमेंट-

हाउस* देखा। उसके थोड़ा और ऊपर चढ़ने पर टैंक पड़ता है। यह एक तैरने का क्लब है, शायद सिर्फ़ अँगरेज़ों के लिये। पक्का तालाब है, चारो ओर कुरसियाँ पड़ी हैं। फाँदने के लिये जल के ऊपर एक तख़्ता लगा है। यहाँ से थोड़ी और ऊँचाई पर एक चट्टान है—काफ़ी ऊँची और चौड़ी। यहाँ से काठगोदाम और नैनीताल के बीच की भूमि और एसफ़ास्ट की सड़क पर आते-जाते मोटरों का आनंद लीजिए। नैनीताल से मोटर और बसें एक साथ ऊपर-नीचे आती-जाती हैं, क्योंकि सड़क, जैसा पहले कह चुका हूँ, काफ़ी चौड़ी है। वहाँ से लौटकर कौंसिल-चेंबर था – लखनऊ के मुक़ाबिले बहुत छोटा भवन, किंतु बहुत सुंदर। वहाँ से लौटकर जब होटल आए, तो एक बरात निकल रही थी। उसका वर्णन कर देना भी अप्रासंगिक न होगा। आगे-आगे दो-तीन आदमी अजीब तरह से नाचते हुए जा रहे थे—वे बहुत उचक रहे थे। उनके हाथ-पैर फड़क रहे थे। टाँगें, गरदन, हाथ, सब टेढ़े हुए जाते थे। अपनी पोशाक में, जो बहुत सादी थी, अर्थात् पाजामा, कोट और टोपी, बराती थे। एक बाजा बज रहा था—वह भी पहाड़ी ढंग का था। यह थी पहाड़ियों की बरात।

इसके अतिरिक्त 'लैंड्स एंड' भी वहाँ का दर्शनीय स्थान है। इसी ओर से 'टिफ़िन टाप' भी जाते हैं। 'लैंड्स एंड' नाम पड़ने का कारण यह है कि एकाएकी एक स्थान पर सड़क 'रुक जाती है। वहाँ से हज़ारों फ़ीट नीचे गड्ढे हैं, और एक बिलकुल सीधी पहाड़ी चट्टान के ऊपर 'लैंड्स एंड' स्थित है। कटहरा लगा है, सायबान पड़ा है, और उसके

* गवर्नमेंट-हाउस के अंदर एक बड़े कमरे में सुंदर वनस्पति-उद्यान है। उसमें कई काफ़ी लंबे-चौड़े बाग़ हैं। वहीं एक स्थान पर पास ही बहुत-से पशु-पक्षी बंद थे, शायद वे भी गवर्नमेंट-हाउस के हों।

नीचे तिपाइयाँ हैं। वहाँ से खुरपाताल आदि दिखाई देते हैं। उधर से एक रास्ता भी है खुरपाताल जाने का—कठिनता से डेढ़-दो फ़ीट चौड़ी एक पगडंडी है, उसी सीधी चट्टान के ऊपरी भाग में, जिसके नीचे हज़ारों फ़ीट नीचे गड्ढे हैं। हवा का एक तेज़ झोंका आपको पगडंडी से उड़ाकर नीचे गिराने के लिये काफ़ी है—दूसरी ओर पगडंडी के जंगल हैं। इतना भयानक वह रास्ता है। मैं १ या १॥ मील उसी रास्ते से गया, और लौट आया। मेरी बोटी-बोटी काँप रही थी, और प्रत्येक श्वास में ईश्वर का नाम निकलता था। यहीं से खुरपाताल जा सकते हैं।

'स्नोव्यू' भी दर्शनीय स्थान है। प्रातःकाल वहाँ पहुँच जाइए। सैकड़ों मील फैले, बरफ़ से ढके पहाड़ आपको दूर पर दिखाई देंगे। यहाँ का दृश्य अवर्णनीय है। टीनशेड के नीचे तिपाई पर बैठ जाइए, वहाँ का आनंद लीजिए। श्रीधर पाठक का 'प्रकृति-वर्णन' याद आ जाता है। पहले इसी स्थान के पास गवर्नमेंट-हाउस था, किंतु अब वह दूसरी जगह बन गया है। 'स्नोव्यू' के पास ही 'आइस-खड्ड' है। इसी ओर 'लढिया-कोटा' है।

सिपाहीधारा जाने की सड़क पोस्टऑफ़िस के पास से है—वही सड़क, जिस पर मोटर चलते हैं। यहाँ नहाने से बड़ा ही आनंद आता है। इस सड़क पर दो मील जाने से इसके अतिरिक्त और बहुत-सी दर्शनीय चीज़ें नैनीताल के आस-पास हैं। उनके नाम दिए जा चुके हैं।

नैनीताल कुमायूँ-डिवीज़न के अंतर्गत है। बरेली से रुहेलखंड ऐंड कुमायूँ रेलवे काठगोदाम तक आती है, और लखनऊ सिटी-स्टेशन से सीधे काठगोदाम भी। यह समुद्र-तट से ६,४०० फ़ीट ऊँचा है। वर्षा यहाँ काफ़ी होती है। वर्ष में जून, जुलाई, अगस्त और सितंबर-महीने में वर्षा अधिकतर होती है। जाड़े में यहाँ बहुत सरदी पड़ती और बर्फ़ गिरती है। गरमी में यहाँ इतनी ठंडक होती है कि मैदान के रहनेवालों को ऊनी कपड़े पहनने पड़ते हैं। नैनीताल का प्राचीन-नाम
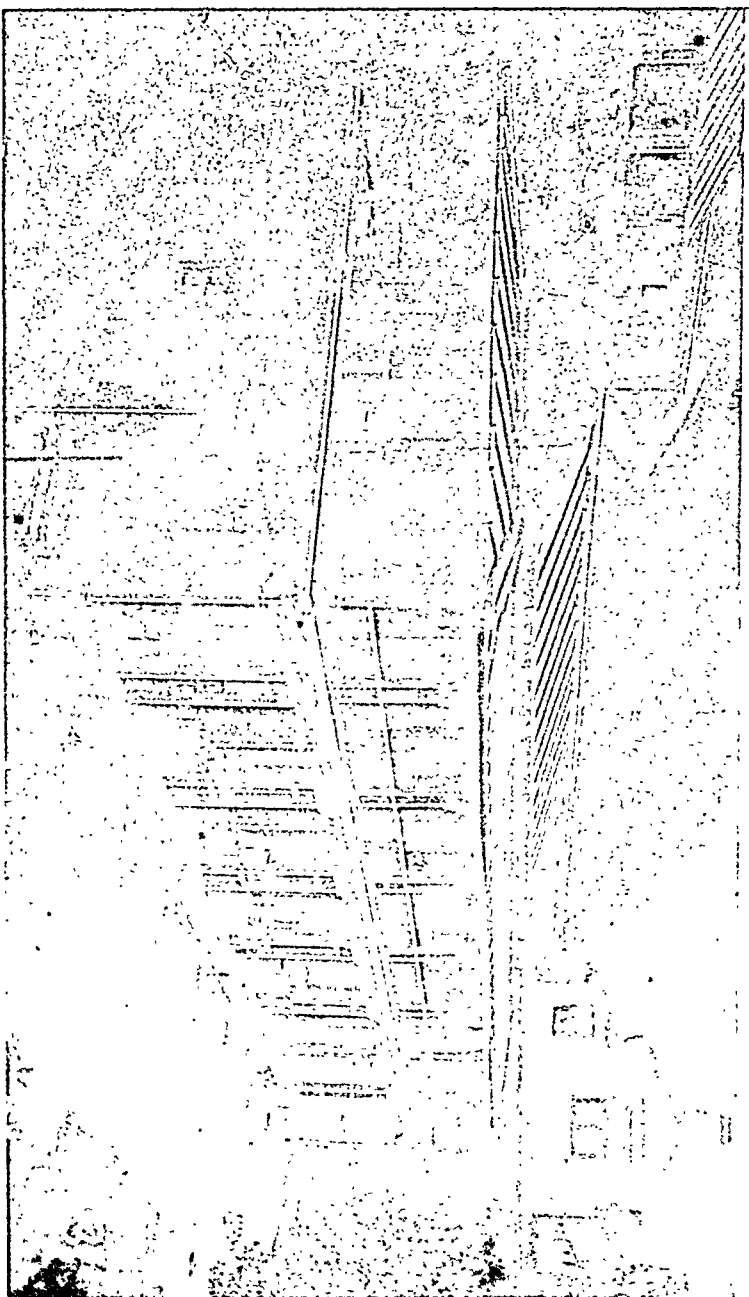
एक 'सी' श्रेणी का भव्य भवन
(भुवाली-सैनिटोरियम)

'ए' और 'बी' श्रेणी की कुछ झोपड़ियां (काटेजेज)
(भुवाली-सैनिटोरियम)

त्रिऋषीश्वर था। कहते हैं, यहाँ अत्रि, पुलस्त्य और पुलह नाम के तीन ऋषि तपस्या करते थे। यहाँ बड़ा भारी जंगल था। सन् १८४० के बाद इस स्थान का पता लगाकर अँगरेज़ों ने इसे बसाना आरंभ कर दिया।

नैनीताल से कुछ दूर तक निम्न-लिखित स्थान हैं—

(१) भुवाली—यह नैनीताल से सात मील दूर है। मोटर से जाने में बहुत खर्च पड़ता है, और काफ़ी चक्कर है। अतः यहाँ से लोग प्रायः घोड़ों, रिक्शा, डाँडी पर या पैदल ही जाते हैं। हम लोग पैदल ही गए। 'लोएस्ट चाइना रेंज' नाम की सड़क से होते हुए हम लोग चले। नैनीताल से भुवाली आने में बहुत सुंदर प्राकृतिक दृश्यों के दर्शन होते हैं। कई एक झरने रास्ते में पड़ते हैं। कहते हैं, उन झरनों का 'आइरन वाटर' बड़ा लाभदायक होता है, जो बिलकुल सच है। पहले हम लोग भूमियाधार गए, जो प्राकृतिक सौंदर्य के मध्य में स्थित हैं। वहाँ से भुवाली मोटर की सड़क से होकर पहुँचे। यहाँ प्रसिद्ध भुवाली-सैनीटोरियम है, जहाँ तपेदिक के रोगी आते हैं। यह स्थान काफ़ी ऊँचे पर है। अस्पताल के पास काफ़ी ज़मीन है। यहाँ का प्रबंध, भवन, रोगियों के कमरे, सफ़ाई, आबोहवा, सभी सराहनीय हैं।

भुवाली अपने भारत-प्रसिद्ध क्षय-रोग के अस्पताल (किंग एडवर्ड सेविंथ सैनीटोरियम) के लिये प्रसिद्ध है। यह अस्पताल काठगोदाम से अलमोड़ा जानेवाली सड़क के किनारे भुवाली-बस्ती से एक मील पूर्व ही स्थित है। इस अस्पताल का निर्माण सन् १९१२ में हुआ, और तभी से इस स्थान की प्रसिद्धि और जन-संख्या में वृद्धि हुई। इसके पूर्व यह उत्तराखंड की एक साधारण चट्टी थी। यहाँ चीड़ के वृक्षों की अधिकता है, जो क्षय-रोग के लिये अत्यंत उपकारी हैं। हिमालय पर्वत की कुमायूँ पहाड़ियों पर यह स्थित है, और समुद्र-तल से इसकी ऊँचाई ६,००० फ़ीट है। चारो ओर शस्य-श्यामल। पर्वत-श्रेणियाँ मालाकार फैली हुई हैं, और इस स्थान के दृश्य को अत्यंत नयनाभिराम बनाती हैं।

२२५ एकड़ भूमि में अस्पताल है। यहाँ की शीतल, मंद समीर में ग्रीष्म-ऋतु में भी गरमी का नाम नहीं रहता। काठगोदाम से यह स्थान

भुवाली-सैनीटोरियम

२१ मील है। वर्षा प्रायः ८० इंच होती है। मार्च से नवंबर तक कम-से-कम ५०० और अधिक-से-अधिक ६००° फ़ैरनहाइट ताप-क्रम रहता है।

यहाँ मार्च से जून तक गरमी रहती है। गरमी के सीज़न में रोगियों की बड़ी चहल-पहल रहती है। यह ऋतु रोग के लिये अत्यंत लाभदायक है। गरमी यहाँ नाम-मात्र को ही होती है। जुलाई से सितंबर तक वर्षा-ऋतु रहती है। पहाड़ की यह ऋतु रोगियों को दुःखदायक होती है। ओले और पानी की झड़ी तो लगी ही रहती है, साथ ही 'हौलू' (वाष्पमय वायु) उड़ा करते हैं, और उनसे बचने के लिये रोगियों को अपने कमरे में क़ैदियों की भाँति बंद पड़े रहना पड़ता है। विशेषकर उन रोगियों को, जो ए० पी० केस होते हैं, 'फ़्लूड' आ जाने का बड़ा डर रहता है। वर्षा का बाह्य रूप अत्यंत चित्ताकर्षक होता है। प्रतिक्षण

बदलते हुए आकाश के रंग-बिरंगे दृश्य इतने मनोहर होते हैं कि इच्छा होती है, घड़ी-घड़ी फ़ोटो ही लिया करें। पर्वत की छाती पर खेलते हुए बादल और वृक्षों की जड़ से निकलते हुए 'हौलू' देखने में बड़े सुंदर लगते हैं। वे बादल कभी तो अपने स्थान पर रुके हुए और कभी वायु-वेग से भागते हुए दिखाई देते हैं। श्रीसुमित्रानंदनजी पंत की प्रसिद्ध 'बादल' कविता का प्रत्यक्ष रूप यहाँ दिखाई पड़ता है। सूर्य और धूप के दर्शन तो कभी-कभी दो-चार मिनट को होते हैं। यहाँ के ऑक्टोबर और नवंबर महीने वर्ष-भर में सबसे उत्तम होते हैं—जल-वायु और सौंदर्य, दोनो की दृष्टि से। दिसंबर, जनवरी और फ़रवरी में यहाँ कड़ी सरदी पड़ती है, बर्फ़ की वर्षा होती रहती है। वृक्ष सफ़ेद चादर ओढ़ लेते हैं, और सड़क पर बर्फ़ की पर्तें पड़ी रहती हैं। ठिठुरानेवाली हवा की बात न पूछिए। बर्फ़ की वर्षा के पश्चात् पर्वतों की शोभा अवर्णनीय होती है।

सड़क के किनारे ही अस्पताल का फाटक है। फाटक की बाईं ओर एक टीनशेड में दो तिपाइयाँ, नए आए हुए मरीज़ों के बैठने के वास्ते, पड़ी हैं। फाटक से कड़ी चढ़ाई चढ़कर अस्पताल के अंदर एक सड़क द्वारा प्रवेश करना पड़ता है। फाटक पार करने के थोड़ी दूर बाद, सड़क की दाहनी ओर, तरकारी और फलवाले की दूकान है। थोड़ा और आगे बढ़कर बाईं ओर मोदी की दूकान है। थोड़ा और आगे बढ़कर उसी ओर अस्पताल का डाकख़ाना है। अस्पताल का यह निचला भाग घाटी कहलाता है। थोड़ा और आगे बढ़कर दाहनी ओर जोशी-रेस्ट-हाउस है, जिसमें नए रोगियों के ठहरने के लिये चार कमरे हैं। उसी ओर थोड़ा नीचे पर पुरुष-नर्सों के क्वार्टर्स बने हैं। थोड़ा और आगे बढ़कर बाईं ओर यहां के योग्य चिकित्सक [डाक्टर प्रेमनारायण शर्मा एम्० डी० (रोम), टी० डी० डी० (वेल्स), पी० एम्० आर० (रोम) आदि] का बँगला है। थोड़ा और आगे बढ़कर इसी ओर यहां के चंदेवालों,

बढ़इयों और मज़दूरों आदि के रहने के कमरे और दाहनी ओर यहाँ के हेडक्लर्क के क्वार्टर्स हैं। इसी ओर थोड़ा आगे बढ़कर स्त्री-नर्सों के ६

डॉक्टर प्रेमनारायण शर्मा

[एम्० डी० (रोम), टी० डी० डी० (वेल्स), पी० एम्० आर० (रोम]

क्वार्टर्स हैं, और सड़क की बाईं ओर पानी की टंकी है। थोड़ा और आगे चलकर एक फाटक पड़ता है। थोड़ा और आगे बढ़ने पर काफ़ी नीचे पर बाईं ओर 'डी' क्लास पड़ता है, जहाँ सीढ़ियाँ उतरकर जाना पड़ता है। 'डी' ब्लाक में ६ कमरे हैं। उसके कुछ नीचे सीढ़ी उतरकर

'पुलिस-ब्लाक' हैं, जिसमें बारह सीटें हैं, और एक पार्टीशन (विभाजन) में चार-चार बेड हैं।

सड़क की दाहनी ओर ऊँचे पर 'सी' ब्लाक है, जो दुमंज़िला है, और उसमें बारह कमरे हैं। निकट 'सी ब्लाक सेंट्रल' है। यह भी दुमंज़िला है, और इसमें भी बारह कमरे हैं। हर कमरे में एक इलमारी, एक मेज़, एक कुरसी और एक चिलमची होती है। थोड़ा और आगे बढ़कर बाईं ओर रसोई-घर है, जिसमें एफ़्, पुलिस और 'डी' ब्लाक के रोगियों का खाना अस्पताल की ओर से बनता है। सी, बी और ए क्लास के मरीज़ों को अपने खाने का स्वयं प्रबंध करना पड़ता है। उसके लिये उन्हें अलग रसोई-घर के कमरे मिलते हैं। थोड़ा और आगे बढ़कर, सड़क की बाईं ओर सीढ़ी चढ़कर, 'एफ़्' क्लास है। इसमें बीस बेड हैं, जिनमें से दो गढ़वाल-रेजीमेंट के, दो रामपुर के और १६ सैनीटोरियम के हैं। एक-एक पार्टीशन में दो बेड होते हैं। इसके आगे बढ़कर इधर-उधर थोड़ी-थोड़ी दूर पर ए और बी काटेजेज़ बनी हैं। प्रायः संख्या में २ ए काटेज, ३ बी काटेज होंगी। काटेजेज़ के बाईं ओर बी ब्लाक के चार कमरे हैं। सड़क के दाहनी ओर तीसरा सी ब्लाक है, जिसमें छ कमरे हैं। थोड़ा और आगे बढ़कर 'रेड क्रास ब्लाक' है, जिसमें चार कमरे और छ सीटें हैं।

यहाँ के बाद सड़क दो भागों में बँट जाती है। दाहनी ओर जाने पर ऑफ़िस मिलता है, बाईं ओर सीधे बढ़ जाने पर पुरुषों के रिक्रिएशन हॉल के बाद बी ब्लाक पड़ता है, जिसमें छ कमरे हैं। फिर बारह कमरों का एक दूसरा बी ब्लाक पड़ता है। रिक्रिएशन हॉल में यहाँ के पुस्तकालय और रोगियों के खेलने आदि का प्रबंध है। सड़क के दाहनी ओर मुड़ने पर सीढ़ियाँ चढ़कर ऑफ़िस पहुँचते हैं। सीढ़ी के पास स्पेशल सेक्शन का रसोई-घर है। पहले एक बड़ा लंबा-चौड़ा मैदान है। सीढ़ी चढ़ते ही फ़ौवारा पड़ता है, और बाईं ओर ऑफ़िस है। इसमें कई कमरे हैं।

अस्पताल का दवाईखाना, ऑफ़िस, सुपरिंटेंडेंट का ऑफ़िस, पुरुष-रोगियों के बैठने के कमरे, इक्ज़ामिनेशन-रूम, एक्स-रे-रूम, डॉक्टर जुबेर का कमरा, लेबोरेटरी, जहाँ थूक, पाखाना और ख़ून आदि की परीक्षा होती है, स्त्री-रोगियों के बैठने का कमरा आदि इसी में हैं। इसके निकट ही एक दूसरे ब्लाक में ए० पी०-रूम, इंसेंटरलाइज़ेशन और ऑपरेशन-रूम तथा डॉक्टर शर्मा का रूम है। ऑफ़िस के सामने नीचे की ओर दो कमरे 'इमरजेंसी वार्ड' के हैं। सामने खुला हुआ सहन है। हर ओर फूलों के गमले रक्खे हैं। यहाँ से अत्यंत सुंदर दृश्य चारो ओर का दिखाई देता है। एकदम गहरे, विस्तृत खड्ड में अस्पताल के धोबियों, मेहतरों आदि के स्थान हैं, और यहीं थूक आदि जलाए जाने का स्थान है। बहुत घना जंगल इस भाग में है। वह खड्ड क्रमशः ऊँचा होता गया है। दूर पर काफ़ी ऊँचे पर यहाँ के मेडिकल सुपरिंटेंडेंट की सुंदर कोठी दिखाई देती है। इसके पास कई और बँगले हैं, जिनमें हाउस फ़िज़ीशियन, मैनेजर, कंपाउंडर, लेबोरेटरी-असिस्टेंट, एक्स-रे-असिस्टेंट आदि रहते हैं। यहीं डाँडीवालों के क्वार्टर हैं। चारो ओर सीढ़ीनुमा खेत और घने जंगलों से पूर्ण पहाड़ियों की श्रेणियाँ गोलाकार फैली हुई हैं।

ऑफ़िस के सामने फ़ौवारे के दाहनी ओर स्पेशल सेक्शन के रूम हैं। इसमें क्लास वन, क्लास टू और क्लास थ्री है। इसी ओर रोगियों के लिये दूध और गोश्त बिकने के स्थान हैं। दो क्वार्टर जमादार के लिये हैं, नर्सिंग सुपरिंटेंडेंट भी यहाँ रहती हैं।

ऑफ़िस के सामने से सीढ़ियाँ उतरकर जाने से 'लेडी-सेक्शन' है। सीढ़ी के एक ओर 'स्पेशल सेक्शन' है (५ कमरे)। दाहनी ओर 'कमला नेहरू-काटेज' है। इसी ओर 'ए' और 'बी' काटेजेज़ हैं (७)। नीचे की ओर 'बलरामपुर गिफ़्ट काटेज' है। अब सीढ़ी के दूसरी ओर चलिए। सबमें ऊपर तो 'फ़ीमेल रिक्रिएशन हॉल' है—निकट ही 'बी ब्लाक' है। फिर 'ई' की ६, 'सी' की ६ और सबके नीचे 'एफ़' की

४ कटेजेज़ हैं (३ यू० पी० की और २ रामपुर-स्टेट की)। इस ओर भी 'ए' और 'बी' कटेजेज़ हैं (३)।

रिक्रिएशन हॉल से मिली हुई जो सड़क सीधी चली गई है, वह आगे जाकर दो भागों में विभाजित हो गई है। एक सड़क तो यहाँ के सुपरिंटेंडेंट [जो सज्जनता और सहृदयता की मूर्ति हैं, श्रीवाइ० जी० श्रीखंडे बी० एस्-सी०, एम्० बी०, बी० एस्०, टी० डी० डी० (वेल्स)] के बँगले की ओर गई है। इसी मार्ग में चार बेंचें पड़ी हैं, जो बेंच वन, बेंच टू, बेंच थ्री, बेंच फ़ोर कहलाती है। डॉक्टर श्रीखंडे की कोठी की ओर से 'जवरनाला' को मार्ग जाता है। यहाँ के रोगियों को इन बेंचों तक क्रमशः जाने की आज्ञा मिलती है उनकी दशा के अनुसार। दूसरी ओर की सड़क नैनीताल की ओर जाती है। इस सड़क पर ही यहाँ के (अति अनुभवी डॉक्टर मुहम्मद जुबेर एम्० बी०, बी० एस्०) असिस्टेंट सुपरिंटेंडेंट का बँगला है। इस ओर ही 'जंक्शन अन' से लेकर 'जंक्शन ट्वेल्व' तक हैं।

स्त्री-रोगियों के भी ऐसे ही ए, बी, सी, ई, एफ् क्लास हैं, पर पुरुष तथा स्त्री-रोगियों के रहने के स्थान अलग-अलग हैं। रोगियों को अपना दैनिक कार्य-क्रम नियमित रूप से पालन करना पड़ता है। घंटी बजती रहती है, और रोगी समझ जाते हैं कि हमें किस समय क्या करना है। इसे देखकर हम लोग फ़ारेस्ट आए। भुवाली के रोगियों के लिये यह सुंदर स्थान बना दिया गया है—वृक्ष, लतादि से आच्छादित स्वर्ग-भूमि के समान सुंदर और चित्ताकर्षक।

वहाँ से आकर भुवाली का बाज़ार देखा। छोटा है, पर आवश्यकता की सब वस्तुएँ मिल जाती हैं। यहाँ पाइन के पेड़ बहुतायत से हैं, जो तपेदिक़ के रोगियों के लिये बहुत लाभकारी हैं। सड़क के दोनो ओर बहुत सूखी पत्तियाँ पड़ी रहती हैं। पेड़ों में नंबर खुदे हैं, और उनकी छाल कटी है, एवं एक-एक कुल्हड़ उनमें बँधा है, जिनमें तारपीन का

तेल जमा होता रहता है। इस लाभदायक व्यवसाय की ओर पहलेपहल अँगरेज़ों का ध्यान गया। इससे लाखों रुपए की आमदनी होती है।

जिस होटल में हम लोग टिके थे, वह मुख्य बाज़ार ही में था। होटल के पीछे एक झरना सदा कल-कल करके बहता रहता है, जो सुनने में बहुत अच्छा लगता है। वहाँ से एक पुल पार किया, जिसके नीचे एक छोटी-सी पहाड़ी नदी बह रही थी। फिर एक ऐसे बाग़ में पहुँचे, जहाँ महाराजा बीकानेर की माता की समाधि है। उसी में एक सुंदर उद्यान है।

यहाँ दुर्गानंदा देवी का एक मंदिर है। एक मसजिद और एक गिरजा-

भुवाली का बाज़ार
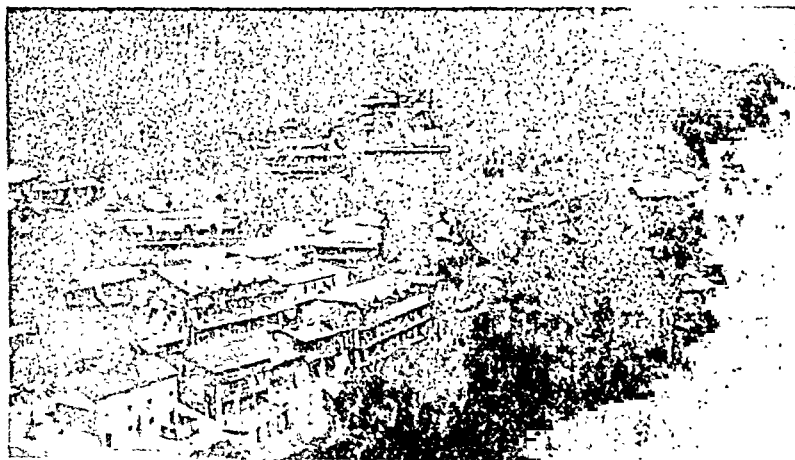
घर भी है। रानीखेत अल्मोड़ा की सड़क पर यहाँ का मोटर-स्टैंड और रेलवे का दफ़्तर है।

यहाँ से होटल लौटे, और मच्छीडिग्गी गए। यह भुवाली से ३ मील है। पहाड़ी पुल भी क्या होते हैं। पेड़ के दो-तीन बड़े-बड़े तने रख दिए, लीजिए पुल हो गया। बड़ा सुंदर दृश्य है। वहाँ एक झरना बहता है, और उसका पानी जो कुछ गहरे तालाब बना लिए गए हैं, उनमें

जमा किया जाता है। उसके अंदर जाने के लिये चार आना टिकट है। चारो ओर लकड़ी और काँटों की चहारदीवारी है। झरने के किनारे-किनारे मीलों हम लोग चले। पहाड़ी ज़मीन पर छोटे-छोटे पत्थर बिछे होते हैं, उन पर मोती-सा निर्मल और अमृत-सा मीठा जल बहा करता है। मच्छीडिग्गी में पानी की चक्की कैसे चलती है, यह अपने हाथ से चलाकर देखी। बहता हुआ पानी जब पहिए पर ऊपर से ज़ोर से गिरता है, तो पहिया नाचने लगता है, और उस पानी को एक पटरा लगाकर रोक दो, तो वह दूसरे रास्ते से बहने लगेगा, और चक्की बंद हो जायगी। यह स्थान बहुत ही सुंदर है। भुवाली-बाज़ार में २ मील पर घोड़ाखाल है, जो रामपुर-स्टेट के अंतर्गत है।

(२) **भीमताल**—यह भुवाली से पाँच मील है। बहुत नीचे पर है। जितना ही जाओ, उतनी ही गरमी बढ़ती जाती है। अच्छी आबादी
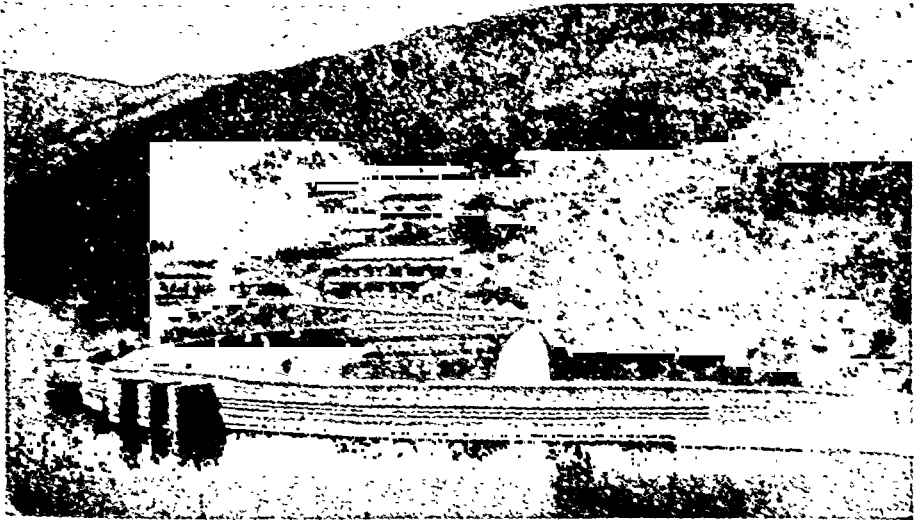
भीमताल—नैनीताल

है। दूकानों में आवश्यकता की सभी वस्तुएँ सरलता से मिल जाती हैं। यहाँ बड़े लंबे-चौड़े मैदान हैं। बड़ा सुंदर पुल है। बड़ा भारी ताल है,

रास्ते कट जाते हैं। यहाँ साततात्र हैं, इसी से इसका नाम सातताल है। मार्ग में नल-दमयंती-ताल पड़ता है। यह बहुत ही मनोरम स्थान है।
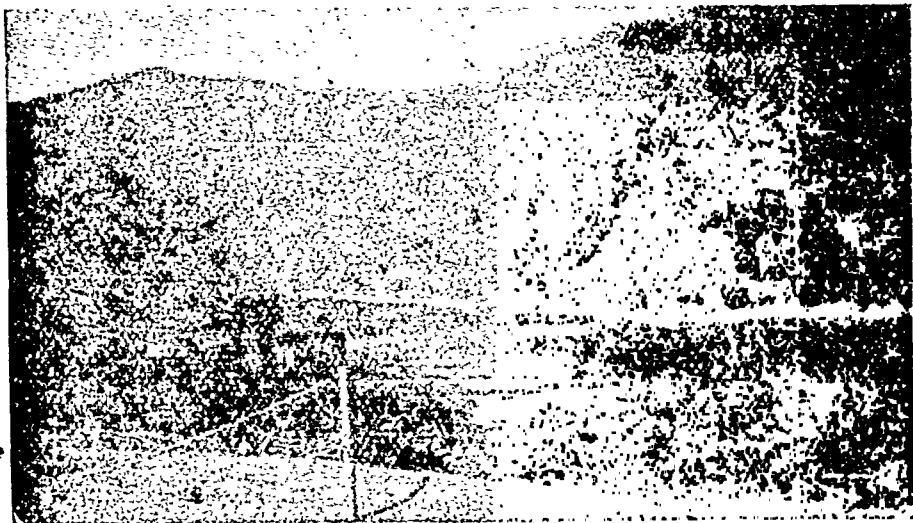
सातताल

यह ईसाइयों और अमेरिकन मिशनरी का गर्मियों का अड्डा है। यहाँ फ़िज़िकल ट्रेनिंग के लिये बहुत-बहुत दूर से विद्यार्थी आते हैं।

(५) रामगढ़—यह भुवाली से ७-८ मील है। यहाँ गए, तो चार-पाँच मील तक तो न कोई झरना है, न कोई दूकान। बहुत नीचे पर एक स्थान पर झरना दिखाई भी दिया, किंतु उस दुर्गम स्थान तक पहुँचना असंभव था। ५ मील चलकर एक दूकान दिखाई दी। वहाँ पानी और दूध पिया। कितना स्वादिष्ठ और गाढ़ा दूध यहाँ का होता है। फिर तो बराबर २-३ मील तक कई झरने रास्ते में पड़ते हैं। झरना ऊँची भूमि से आ रहा है, और नीची ज़मीन पर पानी जा रहा है, पर बीच में पक्की सड़क पड़ गई थी, इससे उस सड़क के ऊपर से बहकर और होकर पानी नीचे गिरता है। एक अजीब दृश्य है। एक झरना तो यहाँ इतना चित्ताकर्षक है कि हम लोगों ने वहीं बैठकर भोजन किए, और बड़ी देर तक वहाँ लेटे-बैठे रहे—झरने के थोड़ा ऊपर चढ़कर। वे भी जीवन की

कितनी सुखमय घड़ियां थीं। इस ओर फल के बाग बहुत हैं। कई अँगरेज़ भी अपनी-अपनी भूमि में फल लगाते हैं, और उनकी अच्छी खपत भी है। यहां के फलों में मुख्य फल चेरी, काफल, आड़ू, किलमोड़ा और पहाड़ी शरीफ़ा आदि हैं। रामगढ़ में अच्छी बस्ती है। छोटा-सा बाज़ार भी है। खाने-पीने तथा आवश्यकता की सभी वस्तुएँ मिल जाती हैं। यह स्थान अपनी स्वास्थ्य-वर्धक जल-वायु और अपने फल के बग़ीचों के लिये विशेष रूप से प्रसिद्ध है।

यह आर्य-समाजियों का केंद्र है। यहां एक मिडिल स्कूल, एक अनाथालय तथा कई छोटे-छोटे मंदिर हैं।

(६) **मुक्तेश्वर**—यह स्थान रामगढ़ से प्रायः ८ मील है। यहां से हिमालय का प्राकृतिक दृश्य बड़ा सुंदर दिखाई देता है। यहां एक शिव-मंदिर तथा एक अस्पताल है, जहां जानवरों के ख़ून से दवा बनाई जाती है।

नैनीताल के विषय में दो-एक बातें और बताकर मैं यह वर्णन समाप्त करता हूं। है तो यह हमारे प्रांत की (गर्मी के दिनों की) राजधानी या गवर्नमेंट-सीट, किंतु यहां की जल-वायु बहुत अच्छी नहीं। हम लोगों की नाक और ओठ चिटक गए थे, और रंग काले पड़ गए थे। इससे तो भुवाली की जल-वायु श्रेष्ठ है। दूसरे यह कि यहाँ 'सदा-सुहागिन' के भी दर्शन हुए—वह भी कई एक। नैनीताल में ऐसा होना अनुचित है। इससे तो मसूरी अच्छा है। वहां वेश्याओं के रहने की आज्ञा नहीं, अतः प्रकट रूप में वहाँ ये नहीं हैं, यद्यपि गुप्त रूप से सभ्य और गृहस्थ स्त्रियों का वेष बनाए हैं। मसूरी में भी वेश्याएँ हैं, यह मुझे बताया गया। नैनीताल और मसूरी की यदि हम तुलना करते हैं, तो दोनो ही अपने-अपने स्थान पर सुंदर हैं। इसमें और बातें हैं, और प्रकार का सौंदर्य है, और मसूरी में और बातें और और तरह का सौंदर्य है। किंतु अंत में मसूरी ही मेरे विचार में अधिक उत्तम है। संभव है, इसका कारण रुचि-वैचित्र्य हो।

हम लोग भुवाली से उतरकर काठगोदाम पहुँचे। लॉरी द्वारा वहाँ से हलद्वानी गए। यहाँ की जल-वायु गरम है—मैदानों की-सी। यह मैदानों में स्थित है, यद्यपि इसके चारो ओर ऊँची-ऊँची पहाड़ियाँ हैं। यहाँ बहुत बड़ी बस्ती है, और काफ़ी बड़ा बाज़ार तथा मंडी है। पहाड़ से उतरने के बाद गरमी बहुत सताती है, क्योंकि वहाँ तो हम लोग ठंडक के अभ्यस्त हो जाते हैं, और यहाँ गरमी होती है। किंतु पहाड़ी प्रांत के निकट होने के कारण यहाँ भी रात्रि के समय पर्याप्त मात्रा में ठंडक पड़ती है। रात की गाड़ी से वहाँ से चले, और प्रातःकाल लखनऊ सिटी-स्टेशन पहुँच गए।

अल्मोड़ा से पिंडारी ग्लेशियर

मुझे अनेक पहाड़ी यात्राएँ करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, और सभी जगह प्राकृतिक सौंदर्य के दर्शन भी हुए, लेकिन पिंडारी ग्लेशियर की यात्रा और पहाड़ी यात्राओं से कुछ विशेष महत्त्व-पूर्ण है। नैनीताल और मसूरी आदि से तो बहुत दूर बर्फ़ से ढके पहाड़ दिखाई ही दिए थे, और गंगोत्तरी, यमुनोत्तरी, केदारनाथ और बदरीनाथ की यात्रा में कहीं-कहीं बर्फ़ पर चलना भी पड़ा, बर्फ़ को पास से देखने का भी मौक़ा मिला, लेकिन कहीं-कहीं ही, और वह भी थोड़ी-थोड़ी दूर तक ही। पर पिंडारी ग्लेशियर की यात्रा तो सुविधा-पूर्वक बर्फ़ की यात्रा कहला सकती है। आस-पास, चारों ओर बर्फ़ है—पैरों के नीचे भी बर्फ़, सिर के ऊपर भी बर्फ़। इस बीहड़, सुनसान, पर आनंद देनेवाली यात्रा की याद सुखद और बहुत संतोष-जनक है—A thing of beauty is a joy for ever.

लखनऊ से काठगोदाम तक रेल से, काठगोदाम से अल्मोड़ा तक मोटर से और अल्मोड़ा से पिंडारी ग्लेशियर तक पैदल जाना होता है। अल्मोड़ा से क़रीब १५ दिन आने-जाने में लगते हैं—६-७ दिन में पिंडारी तक जाना और ६-७ दिन में सुविधा-पूर्वक अल्मोड़ा लौट आना। लखनऊ से काठगोदाम और काठगोदाम से भुवाली तक की यात्रा का वर्णन करना तो व्यर्थ है, क्योंकि यहाँ तक का वर्णन नैनीताल-यात्रा में हो चुका है। काठगोदाम से भुवाली प्रायः २१ मील और रानीबाग २ मील है। भुवाली के निकट भूमियाधार, टीकापुर, रेहड, हरसौली, कैलास-व्यू आदि स्थानों में, जो भुवाली के क़रीब ही हैं, रोगियों के लिये बँगले और काटेजेज़ किराए पर मिल सकती हैं। यों तो क्षय (तपेदिक) के रोगियों के लिये गेठिया (भुवाली के रास्ते में काठगोदाम से कुछ दूर ऊँचे पर) में भी डॉक्टर कक्कड़ का एक निजी सैनीटोरियम है। भुवाली के आस-पास बहुत-से देखने योग्य स्थान हैं—कुशानी,

नैनीताल (७ मील), सातताल (३ मील), भीमताल (४ मील), रामगढ़ (८ मील) आदि ।

भुवाली से रानीखेत २६ मील और गरम पानी-चट्टी ११ मील है। यहाँ कई दूकानें हैं, पोस्टऑफ़िस भी है। प्रायः यहाँ यात्री रुककर चाय पीते या नाश्ता आदि करते हैं। इस ओर चढ़ाई बहुत है, और वृक्षों की कुछ कमी। यहाँ से ७ मील पर खैरना-चट्टी और ६ मील पर रानीखेत है।

रानीखेत का मोटर-मार्ग भुवाली से बहुत मनोहर है। कई नदियाँ, २-३ पुल, जंगल, झरने वग़ैरह रास्ते में पड़ते हैं।

रानीखेत—रानीखेत गोरी पलटन की छावनी है। यह अँगरेज़ों का मिलिटरी सेंटर है, यही इसकी प्रसिद्धि का मुख्य कारण है। यहाँ चीड़ के बहुत पेड़ हैं। यहाँ कई नदियाँ और पहाड़ी नाले हैं—आस-पास। कई सड़कें हैं। कुछ गल्ले और कपड़े की थोक की दूकानें भी हैं। बाज़ार छोटा होने पर भी ज़रूरत की सभी चीज़ें यहाँ मिल जाती हैं। खाने की चीज़ें प्रायः यहाँ मिल सकती हैं। यह पहाड़ की बहुत ऊँची चोटी पर बसा है। अब यहाँ तारपीन के तेल के कारख़ाने नहीं हैं, जिनसे चीड़ का रस निकालकर तारपीन का तेल बनाया जाता है, पर यहाँ एक शराब का कारख़ाना है। यहाँ लाल मिट्टी के बर्तन अच्छे बनते हैं। यहाँ तहसील की अदालत, सरकारी ख़ज़ाना, पोस्टऑफ़िस और तार-घर भी हैं। एक मिशन स्कूल भी है। यहाँ से ४-५ मील पर, पश्चिम ओर, नाड़ीखेत-नामक स्थान है, जहाँ ऊनी और सूती खद्दर बनता है।

यहाँ से ५ मील के बाद काकड़ीघाट-चट्टी पड़ती है। चक्करदार उतार की सड़क है, यहाँ भी कई दूकानें हैं, और रामगंगा-नदी भी, लेकिन इस ओर जल की कमी है। यहाँ से मझखाली-चट्टी पड़ती है। यहाँ एक डाक-बँगला है और एक डाकख़ाना। इस ओर चढ़ाव है। रानीखेत से अलमोड़ा ३२ मील है।

अलमोड़ा—अलमोड़ा काठगोदाम से ८४ मील है, और अपनी स्वास्थ्य-वर्धक जल-वायु के लिये बहुत प्रसिद्ध है। यह पहाड़ की चोटी

एक पहाड़ी नदी का पुल

पर, ५,५०० फ़ीट की ऊँचाई पर, है। यहाँ का दृश्य बहुत सुंदर है। दूर से देखने से अलमोड़ा की वृक्षावलियों के बीच-बीच में बने घर और कोठियाँ अपूर्व शोभा दिखलाती हैं। यहाँ से १० मील की दूरी पर, एक सुंदर स्थान पर, श्रीमती चकवर्ती, श्रीयुत निक्सन और श्रीयुत एलेक्ज़ेंडर महोदय आदि संन्यास लेकर शांति पूर्वक जीवन बिता रहे हैं। यहाँ मील-सवा मील का लंबा बाज़ार है। यह छोटा, लेकिन सुंदर नगर है। बाज़ारों के नाम तल्लीताल और मल्लीताल बाज़ार हैं। यहाँ न कोई झरना है, न नदी; न झील। यहाँ साया देवी से, जिसे यहाँ के लोग सैदेवि

कहते हैं, पानी आता है। यहाँ बंबा है, पर बिजली की रोशनी अभी नहीं। यहाँ हिंदू ज़्यादा हैं, मुसलमान कम। और, ऐसा कहा जाता है, ये वे ही हिंदू हैं, जिन्होंने अपना धर्म बदल लिया है। यहाँ छोटे-मोटे बहुत-से मंदिर हैं, जैसे बाज़ार में हनुमान्‌जी या भगवान् का मंदिर। भैरवनाथजी तथा देवीजी का मंदिर भी प्रसिद्ध है। एक स्थान यहाँ 'ब्राइटेन कारनर' कहलाता है, जहाँ बहुत उत्तम हवा आती है। यह स्थान बहुत सुंदर है, और अक्सर शाम के वक़्त यहाँ लोग आकर बैठते हैं। यहाँ एक छोटा-सा बग़ीचा भी है। यहाँ का-खास और देखने योग्य स्थान 'उदयशंकर-कल्चर-सेंटर' है। संसार-प्रसिद्ध, नृत्य-कला के आचार्य श्रीउदयशंकरजी को कौन नहीं जानता? यह स्थान अपने महत्त्व के साथ ही अपनी प्राकृतिक सुंदरता में एकता है। यहाँ चीड़ के वृक्षों की बहुतायत है। उदयशंकर-इंडिया-कल्चर-सेंटर संस्था में भारतीय नृत्य-कला की सुचारु रूप से शिक्षा दी जाती है। नगर से दूर, 'सिमटोला फ़ारेस्ट' में, एक पर्वतीय शृंग पर, इस संस्था की स्थिति से। भूमि का विस्तार ६४ एकड़ है। इस समय संस्था ने अल्मोड़ा और सिमटोला के बीच में, 'रानीधरा' पर, किराए के मकान ले लिए हैं, तब तक के लिये, जब तक वह अपने भवन निर्माण नहीं कर पाती। गायन, नृत्य तथा 'ड्रेसिंग' के लिये कई 'स्टूडियो' बने हैं, जिनमें सबसे बड़ा 'सेंटर स्टूडियो' ७५ फ़ीट लंबा है। नृत्य-कला की शिक्षा १९४० से दी जाती है। ५ वर्ष का 'कोर्स' है। ८ सप्ताहों के 'समर-कोर्स' का भी प्रबंध है। कथाकली और मैनपुरी, दोनो प्रकार के नृत्य सिखाए जाते हैं। इस वर्ष (संवत् २००१) इस संस्था को यहाँ से हटाकर बंबई के आस-पास ले जाने का विचार है। श्रीउदय-शंकरजी के 'रिद्म ऑफ़् लाइफ़', 'लेबर ऐंड मैशीनरी', 'किरात-अर्जुन' और 'प्राविनशियलिज़्म' नृत्य अति प्रसिद्ध हैं। प्रतिवर्ष दुर्गा-पूजा के अवसर पर 'दी रामलीला-शैडो प्ले' दिखाया जाता है, जिसे देखने को हज़ारों की संख्या में लोग जमा होते हैं।

मेहनत और मशीनरी

'सिमटोला-फ़ारेस्ट' समुद्र-तल से ६,००० फ़ीट की ऊँचाई पर है। यहाँ से नंदादेवी, त्रिशूल, बदरीनाथ, केदारनाथ तथा हिमालय की अन्य हिमाच्छादित श्रेणियों का नयनाभिराम दृश्य दिखाई देता है। प्रकृति की गोद में भारतीय कला अपने पूर्व-गौरव-रूप में हमारे सामने शीघ्र ही आ रही है—इसका हमें पूर्ण विश्वास है। नृत्य के साथ ही गायन, वाद्य और चित्रकला आदि की भी शिक्षा दी जाती है। इस संस्था का निजी पुस्तकालय है, जिसमें कला के अमूल्य नवीन और प्राचीन ग्रंथों का संग्रह है। साथ ही प्राचीन और नवीत अनेक प्रकार के वाद्यों का संग्रहालय भी है।

अलमोड़ा का महत्त्व सन् १५६० ई० से बढ़ा, जब बाली कल्याणचंद ने इसे अपनी राजधानी बनाया। सन् १७९७ ई० में गोरखों ने इसे जीत लिया, और १८१५ तक राज्य करते रहे। यहाँ इंटरमीजिएट कॉलेज, रामज़े-हाईस्कूल, गर्ल्स मिशन स्कूल, गवर्नमेंट-नार्मल-स्कूल और कई मिडिल स्कूल
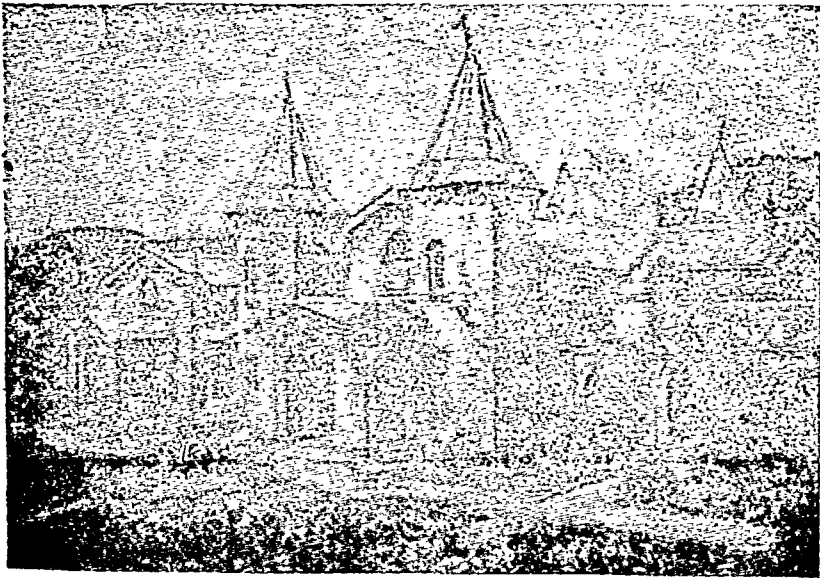
गवर्नमेंट-नार्मल-स्कूल

हैं। नगर में कई छोटे कारखाने ऊनी मोज़े, बनियाइन और कपड़े के हैं।

नगर के दक्षिण में लालमंडी का क़िला है, जिसमें पल्टन रहती है, तथा उत्तर में हीरा-डुंगरी, नारायण तेवाड़ी-देवाल, एक छोटा बाज़ार है। पास ही विक्टर बस्ती है। नगर का सबसे चहल-पहल का भाग लेलीफ़ाट है (मुख्य बाज़ार का पश्चिमी भाग)। मोटर-स्टेशन, नक्षामहल, डाक-बँगला, कॉलेज, पोस्टऑफ़िस, तारघर, रोज़ल होटल आदि इसी भाग में हैं।

यहाँ से थोड़ी-थोड़ी दूर पर अनेक दर्शनीय स्थान हैं, जैसे—

१. गणनाथ—यह अल्मोड़ा से १४ मील है। यहाँ शंकर भगवान् का मंदिर है। मूर्ति अति दिव्य तथा भव्य एवं यह स्थान बहुत रमणीक है।

२. बिनसर—यह भी अल्मोड़ा से करीब १४ मील है। यहाँ बहुत ठंडक रहती है। यहाँ बिनसर महादेवजी का मंदिर है।

३. कटारमल—यह स्थान अल्मोड़े से १० मील है। यहाँ सूर्य भगवान् का मंदिर है।

४. जागेश्वर—यह स्थान भी १४ मील है। यहाँ जागेश्वर और दीपेश्वर नाम के सुंदर शिव-मंदिर हैं।

५. बागेश्वर—समुद्र-तट से प्रायः ३,००० फ़ीट की ऊँचाई पर बसा है। अतः यहाँ काफ़ी गर्मी पड़ती है, और मैदानों के फल यहाँ पैदा हो जाते हैं। यहाँ बागनाथ महादेव का मंदिर, गंगा-मंदिर, ठाकुरद्वारा, सरयू-नदी के उस पार वेणीमाधव तथा हिरपतेश्वर के मंदिर हैं। सरयू के दोनो ओर बाज़ार हैं। यहाँ पोस्टऑफ़िस, डाक-बँगला तथा मिडिल स्कूल आदि हैं। यहाँ का संक्रांति का मेला प्रसिद्ध है। यहाँ गोमती और सरयू-नदियों का संगम है। यहाँ एक अच्छा कस्बा और प्रसिद्ध तीर्थ-स्थान है। मेले में भूटिया लोग यहाँ ऊनी कपड़े बेचने आते हैं। अल्मोड़ा और कमायूँ-ज़िलों के तथा आस-पास के बहुत लोग मेले में आते हैं। यह स्थान ग्लेशियर जाते समय मार्ग में पड़ता है।

६. हवालबाग—अल्मोड़ा से ४ मील है। यहाँ चायबाड़ी और एक प्राइमरी स्कूल है।

७. सोमेश्वर—हवालबाग से १५ मील उत्तर है। यह बहुत सुंदर स्थान है। यहाँ सोमेश्वर महादेव का मंदिर है। एक पोस्टऑफ़िस भी है।

सरयू-गोमती का संगम और बागेश्वर-मंदिर

८. सानी उड्यार—कहते हैं, यहाँ शांडिल्य ऋषि ने तपस्या की थी।

९. बैजनाथ—यह गोमती-नदी के किनारे बसा है। यहाँ नंदादेवी और रण-चूला-क़िले में कालीजी का मंदिर है। यहाँ पोस्टऑफ़िस, अस्पताल और प्राइमरी स्कूल है।

काठगोदाम से प्रायः ८ घंटे में लॉरी अल्मोड़ा पहुँचती है, और प्रायः तीन रुपया प्रति मनुष्य भाड़ा पड़ता है। अल्मोड़े में ग्लेशियर जाने के लिये प्रबंध करना पड़ता है। ग्लेशियर के रास्ते में बहुत ज्यादा ठंड पड़ती है, इसलिये ऊनी कोट, मोज़े, सदरी, कंबल, कंफ़ार्टर आदि की ज़रूरत पड़ती है। नालदार तथा कील-जड़े मज़बूत जूते ही बर्फ़ पर काम देते हैं। ये बर्फ़ पर ठीक से जम जाते हैं, और फिसलते नहीं—साथ ही बर्फ़ की ठंडक से पैर सुन्न होने से भी बहुत कुछ बचाते हैं। पहाड़ पर इस्तेमाल किए हुए किरमिच के जूते अब काम नहीं देते। लाठी के बिना तो पहाड़ी पर यात्रा करना असंभव है। छाता भी मार्ग में बर्फ़, पानी और कभी-कभी धूप से रक्षा के लिये साथ होना ज़रूरी है। लोटा, डोरी, कुछ खाना बनाने के हल्के बरतन, नाश्ते के लिये (१५ दिन के लिये) बिस्कुट, चाय आदि, सोने का बिस्तरा, कुछ दो-चार ज़रूरी कपड़े, फ़ोटो-कैमरा, खाने-पीने का सामान, थर्मस बाटल तथा बर्फ़ की चमक से आँखों को बचाने के लिये ऐनक आदि वस्तुएँ आवश्यक हैं। जो चीज़ें साथ में न हों, वे अल्मोड़ा से खरीदी जा सकती हैं। कुली करने पड़ते हैं—एक तो वे पथ-प्रदर्शक का काम करते हैं, और दूसरे हमारा सामान लादकर ले चलते हैं। रुपया-सवा रुपया रोज़ के हिसाब से पहाड़ी आपको मिल जायगा। यह यात्रा भयानक है, अतः जब तक साथ में ४-५ साथी और २-३ पहाड़ी न हों, न करनी चाहिए। साथ में थोड़ी-सी दवाएँ, चाकू और एक छोटी कुल्हाड़ी भी रख लेनी चाहिए—अक्सर बर्फ़ काटकर पैर रखने-भर की जगह बनाने आदि के लिये इसकी ज़रूरत पड़ती है। इस यात्रा में मार्ग में कई चट्टियाँ (पड़ाव के स्थान) पड़ती हैं, जहाँ खाने-पीने का सामान मिल सकता है। हाँ, ग्लेशियर के आस-पास थोड़ी दूर तक दो-तीन पड़ाव में खाने का सामान नहीं मिलता, इसलिये अलमोड़ा और मार्ग की चट्टियों से थोड़ा-बहुत अनाज आदि का प्रबंध कर लेना चाहिए। कहने का मतलब यह कि काफ़ी प्रबंध करके

अलमोड़ा से चलना चाहिए, और विशेषकर उन लोगों को, जिनकी तंदुरुस्ती अच्छी हो, और जो पैदल चल सकें। आराम-तलब आदमियों

एक पहाड़ी कुली

को मार्ग में बहुत कष्ट होगा। शुष्क तथा नीरस हृदयवालों को भी इस यात्रा में कष्ट की मात्रा आनंद की अपेक्षा संभव है, अधिक जान पड़े। कहीं-कहीं तो केवल ३ या ४ फ़ीट तक चौड़ी पगडंडियों में चलना पड़ता है।

अलमोड़ा से पिंडारी ग्लेशियर ८० मील है। गरमी शुरू होते ही यहाँ के लिये यात्रा करनी चाहिए। बरसात में यात्रा घातक

ही नहीं, असंभव सिद्ध हो सकती है। गरमी की छुट्टियाँ स्कूल में शुरू होते ही यात्रियों को यहाँ के लिये चल देना चाहिए, क्योंकि अलमोड़ा पहुँचते, सामान खरीदते और ठीक-ठाक करते क़रीब एक सप्ताह लग जाता है।

पिंडारी ग्लेशियर—पिंडारी ग्लेशियर दानापुर-परगने के उत्तरी भाग में है। यह नंदादेवी और नंदाकोट के बीच में है। तहसील अलमोड़ा में दो परगने हैं—दानापुर और बारहमंडल। दानापुर में पिंडारी के अतिरिक्त सुंदर ढुंगा का भी ग्लेशियर है, जो इतना अधिक प्रसिद्ध नहीं। इस उत्तरी बर्फ़ानी भाग में गर्मियों में ही कुछ घास और रंग-बिरंगे फूल उगते हैं। अलमोड़ा से चलकर 'कपड़खान' होते हुए पहला पड़ाव तो 'ताकुला' में होता है, जो अलमोड़ा से १५ मील दूर है। यात्रा प्रायः सबेरे और शाम को करनी पड़ती है, क्योंकि दोपहर को जब सूर्य की तेज़ किरणें बर्फ़ से ढके पहाड़ों पर पड़ती हैं, तो एक तरह का चका-चौंध आँखों में लगता है, जिससे अक्सर लोगों की आँखें खराब हो गई हैं—या खराब होने का डर रहता है। मार्ग सुखद रहता है—किसी तरह का विशेष कष्ट नहीं मिलता। यहाँ अनाज तथा दूध-घी, सब मिल जाता है।

दूसरे दिन सवेरे फिर यात्रा शुरू होती है। यात्रा शुरू करने के पहले देख लेना चाहिए कि बादल आदि तो आकाश में नहीं हैं, और आँधी-पानी का डर तो नहीं है। पानी बरसने पर पगडंडी नहीं दिखलाई पड़ती और फिसलाहट भी बहुत बढ़ जाती है। खैर। १ मील बाद ही 'बागेश्वर' स्थान पर पहुँचते हैं।

तीसरा पड़ाव कपकोट में होता है, जो बहुत सुंदर स्थान है। सरयू-नदी के किनारे-किनारे प्रायः १४ मील चलना पड़ता है। मार्ग सुविधा-जनक है। यहाँ डाक-बँगला भी है। खाने-पीने का सब सामान यहाँ मिल जाता है। प्रायः यहीं से यात्री आगे की यात्रा के लिये अनाज खरीद

लेता है, क्योंकि आगे के पड़ावों पर भोज्य पदार्थों के मिलने में कठिनता पड़ती है। पोस्टऑफ़िस, सरयू पर लोहे का पुल, मिडिल स्कूल आदि यहाँ हैं।

चौथा पड़ाव लोहारखेत में होता है। ६ मील प्रायः चढ़ाई-ही-चढ़ाई का कठिन मार्ग है। चीड़, बूँस (जिसमें लाल फूल होते हैं) तथा बाँझ आदि के पेड़ इस ओर के जंगलों में पड़ते हैं। मार्ग प्रायः पहाड़ की चोटी पर ही है, और मार्ग से सदा आकाश-छूते पहाड़ दिखाई देते हैं। यह यात्रा बहुत कठिन और कष्टप्रद है।

पाँचवाँ पड़ाव खाती में है। कुछ लोग धाकुरी में ही पाँचवाँ पड़ाव करते हैं, और खाती में छठा पड़ाव। लोहारखेत से लंबा ढाल है। ६ मील पर धाकुरी-नामक स्थान है। काफ़ी नीचे घाटी में यह स्थान है। यहाँ का दृश्य बहुत सुंदर है। घने वन इस ओर हैं। डाक-बँगला यहाँ है, पर खाने-पीने का सामान नहीं मिलता। यहाँ से ५ मील पर खाती है, जहाँ बाँझ के वृक्षों से घिरा हुआ एक डाक-बँगला है, और एक अनाज वग़ैरा की दूकान भी। अनाज प्रायः अच्छा नहीं होता, क्योंकि काफ़ी दूर से आता है, और पुराना तथा महँगा भी होता है। पिंडारी ग्लेशियर की यात्रा को बहुत कम यात्री जाते हैं। बहुत-से लोग यहीं से पिंडारी ग्लेशियर तक के लिये खाने पीने का सामान ख़रीदते हैं। खाती से ग्लेशियर के लिये एक और पथ-प्रदर्शक ले लेना चाहिए।

छठा (यदि धाकुरी में रुके हों) या सातवाँ (यदि खाती में रुके हों) पड़ाव 'द्वाली' है। यह खाती से ७ मील है। पिंडर-नदी की घाटी में होकर खाती और द्वाली के बीच का मार्ग है। सड़क नदी के किनारे-किनारे है। स्थान-स्थान पर अनेक सुंदर झरने इस ओर मिलते हैं। नदी का जल घ-घ शब्द करता हुआ तेज़ी से बहता रहता है। इस ओर विशेषता यह है कि बड़े-बड़े वृक्ष नहीं मिलते, वरन् निगाली, बाँस आदि के छोटे-छोटे वृक्ष ही ज़्यादातर मिलते हैं। यहाँ से भूख बहुत लगने

जाती है। कुछ लोग यहाँ न ठहरकर अगले पड़ाव 'फुरकिया' या 'फुर-किया' में ठहरते हैं, जो द्वाली से तीन मील दूर है।

यहाँ बड़ी ठंडक रहती है, खासकर रात को तो बहुत ही ठंडक रहती है। दूसरे दिन सुबह तड़के ही यहाँ से ग्लेशियर को, जो यहाँ से केवल ५ मील है, चल देना पड़ता है। मार्ग में न वृक्ष पड़ते हैं, न झाड़ियाँ ही—केवल घास ही मार्ग में इधर-उधर दिखाई देती है। ग्लेशियर का जहाँ मुहाना है, वहाँ मैले रंग की बर्फ और जल है, और उसके दोनों ओर ऊँचे ऊँचे पहाड़ हैं। मुहाने से एक टेढ़ा-मेढ़ा सकरा पतला मार्ग है—जहाँ चढ़ाई पर धीरे-धीरे चलना पड़ता है। 'रेरीफाइड एयर' का आनंद यहीं मिल सकता है। कठिन चढ़ाई और हल्की हवा से थकावट और कष्ट तो अवश्य होता है, किंतु नैसर्गिक सौंदर्य तथा अपने गंतव्य स्थान पर पहुँचने की खुशी सब कष्टों को दबा देती है। १० बजे के पहले ही पड़ाव पर वापस आ जाना चाहिए। कम-से-कम घंटा-आध घंटा ग्लेशियर में ठहरने और घूमने में भी लगेगा—इसका भी ध्यान रख लेना चाहिए। सूर्य की तेज किरणें पड़ने से एक तो बर्फ गलने लगती है, जिससे नीचे धँस जाने का डर रहता है। दूसरा डर किरणों के कारण कोहरा पड़ने से होता है, जिसके कारण चारों ओर कुछ दिखाई नहीं देता। तीसरे, नेत्रों को बर्फ की तेज चमक असह्य और अति कष्टप्रद होती है। चारों ओर बर्फ से ढके पर्वत-खंड दिखाई देते हैं—नीचे कुछ काले-से, ऊपर बिलकुल सफ़ेद। इनसे धीरे-धीरे जल बहता या पिघलता रहता है। इस ओर कई रंग के पत्थर भी इधर-उधर पड़े मिलते हैं। इन बड़े-बड़े हिम-खंडों के पीछे बर्फ का एक सफ़ेद ढालू मैदान सा है, और फिर बर्फ के टीलों का ढेर। यह मैदान ही पिंडारी ग्लेशियर है, और यहीं पिंडर-नदी का उद्गम है। बर्फ के टीले ग्लेशियर के अंत में हैं, अतः इनके बाद कुछ नहीं दिखाई देता—सिवा नीले आकाश के। क्षितिज का दृश्य भी अति मोहक है। बर्फ के मैदान तक पहुँचना संभव नहीं।

दूर ही से वहाँ के दर्शन किए जा सकते हैं। इसके आस-पास की काले बर्फ की शिला पर ही केवल यात्री जा सकते हैं, और यहीं तक जाकर फिर वापस होना पड़ता है।

फिर उसी मार्ग से, जिस मार्ग से गए थे, अलमोड़ा वापस आना पड़ता है।

अलमोड़ा-ज़िला के बारे में दो शब्द लिख देने से यात्रियों को कुछ सुविधा रहेगी। ज़िला अलमोड़ा में चार तहसीलें हैं—

(१) तहसील पिठौरागढ़। इसी में जोहार में दो छोटे-छोटे ग्लेशियर मिलन और रालम के हैं।

(२) तहसील चंपावत।

(३) तहसील अल्मोड़ा—इसी के अंतर्गत अल्मोड़ा नगर तथा पिंडारी ग्लेशियर आदि हैं। इस तहसील में दानापुर और बारहमंडल के दो परगने हैं। दानापुर परगना के सुविधा-पूर्वक दो भाग किए जा सकते हैं—एक उत्तरी पहाड़ी भाग, जिसमें पिंडारी ग्लेशियर और सुंदर ढुंगा के ग्लेशियर हैं। दूसरा दक्षिणी भाग, जिसमें सरयू-नदी और (सहायक) गोमती तथा पुंडर नदियाँ हैं। इसी तहसील में अयारताला, कौसानी, कपकोट, बागेश्वर, बैजनाथ, खारबगड़, कपड़खान, ताकुला, लोहारखेत, धाकुरी, खाती, द्वाली, फुरकिया, पिंडारीसामा, बारहमंडल, जागेश्वर, बिनसर, गणनाथ, ऐड़ीदेव, कलमटिया, स्याहीदेवी, बानणी, बोरारौ, जलना, हवालबाग, अलमोड़ा नगर, लोद, विजयपुर, सानी उड्यार और कांडा आदि छोटे-बड़े स्थान हैं।

(४) तहसील रानीखेत—इसमें पाली पछाऊँ और फल्दाकोट के दो परगने हैं। इसी तहसील में दूनागिरि-नामक प्रसिद्ध पहाड़ है, जो अपनी जड़ी-बूटियों के लिये प्रसिद्ध है। कहते हैं, लक्ष्मणजी के शक्ति लगने पर यहीं से हनुमान्‌जी संजीवनी-बूटी ले गए थे। यहाँ से ४ मील उत्तर-पूर्व पांडुखोली-नामक प्रसिद्ध पर्वत है। कहते हैं, पांडव अपने

गुप्त-वनवास के समय यहाँ भी रहे थे। इस ऊँचे पर्वत पर एक सुंदर सरोवर भी है। इस तहसील के छोटे-बड़े स्थान ये हैं—द्वारहाट, चौखुटिया (द्वारहाट से १० मील दूर रामगंगा के तट पर स्थित है। यहाँ एक देवीजी का मंदिर है।), बैराट (चौखुटिया से २ मील राजा विराट का निवास-स्थान है। यहाँ एक पत्थर पर भीमसेन के लिखे कुछ चिह्न मिलते हैं), मासी (बैराट से ४ मील दूर है। यहाँ नाथेश्वर, रामपादुका तथा इंद्रेश्वर के मंदिर हैं। यहां सोमनाथ का मेला अति प्रसिद्ध है। यहाँ रामगंगा पर पुल है।), बूढ़ा केदार (रामगंगा और विनोद के संगम के पास केदारनाथजी का मंदिर है), भिकियासैण (रामगंगा और गगास का संगम है। यहाँ एक शिव-मंदिर है।), पाली (यहाँ पुराने क़िले के खँडहर और नैथानदेवी का मंदिर है।), मोहान, बाग्वाली पोखर, मानीला, फल्दाकोट, चौहटिया, रिऊणी, द्वारसों, काकड़ीघाट तथा रानी-खेत आदि हैं। रानीखेत (इसका वर्णन हो चुका है) तथा द्वारहाट बहुत प्रसिद्ध स्थान हैं। द्वारहाट एक बहुत सुंदर स्थान है। यहाँ अनेक देव-मंदिर हैं। सबसे प्रसिद्ध देवालय 'धज' है। एक सुंदर तालाब के पास शीतलादेवी का मंदिर है। यहाँ स्कूल, अस्पताल, पोस्टऑफ़िस तथा अच्छा बाज़ार है।

विंध्याचल और टाँडा-फ़ॉल

मैं साहित्य-रत्न की परीक्षा देने प्रयाग गया था। २६ ऑक्टोबर, १६३८ (शनिवार) से ५ नवंबर, १६३८ (रविवार) तक परीक्षा हुई। ५ तारीख़ की रात्रि को मेरे एक मित्र, जहाँ मैं टिका था, आए। मैं तो मिला नहीं, पर वह एक सज्जन से कह गए कि वह सूचित कर दें। प्रातःकाल मैं भूमी जाने की तैयारी में था कि उन्हीं महाशय ने मुझे मेरे मित्र के आने की सूचना दी। जिनके साथ मैं भूमी जानेवाला था, उनसे यह कहकर कि थोड़ी देर में आता हूँ, मैं जैसा था, वैसे ही कपड़े पहने अपने मित्र से मिलने चला गया। बातों-बातों में विंध्याचल चलने का ज़िक्र आया। मेरे मित्र ने कहा—"इस समय ७½ बजे हैं, ८½ के लगभग गाड़ी जाती है। अभी यदि चाहो, तो चल सकते हैं। शाम की गाड़ी से लौट आवेंगे।" उन्हीं के रुपए और कपड़े लेकर हम लोग चल दिए। साथ में एक जयपुर के मित्र भी हो लिए। वह भी परीक्षा देने आए थे। बहुत जल्दी की गई, किंतु स्टेशन पर जब पहुँचे, तब गाड़ी छूट चुकी थी। हम लोग वापस लौटे। पता चला, लॉरी भी जाती है। एक लॉरीवाले से बातचीत हुई। उसने कहा—"हम आपको १२ बजे मिर्ज़ापुर से थोड़ी दूर इधर उतार देंगे।"

हम लोगों की समझ में आ गया, और हम ६½ बजे सुबह लॉरी से चल दिए। दूसरे दिन गंगा-स्नान था, अतः काफ़ी धक्कमधक्का था देहातियों का। गाँव के दृश्य देखते हुए हम लोग १२-४५ पर गोपीगंज पहुँचे। रास्ते में पचासों बार लॉरी रुकी होगी— ज़रा किसी ने हाथ दिखाया, और लॉरी रुकी। फिर यात्रियों को भी जहाँ-जहाँ उतरना था, वहाँ-वहाँ रुकी। वहाँ से मिर्ज़ापुर ६-७ मील है। बड़ी कठिनता से एक इक्का तय हुआ, किंतु अन्य इक्केवालों के भड़काने से वह और अधिक

दाम माँगने लगा। वहाँ धौंस ने बड़ा काम किया। एक पंडितजी भी अपनी ननिहाल मिर्ज़ापुर जा रहे थे, अतः उनसे हँसते-बोलते गंगाजी के किनारे ३ बजे के लगभग चीलर-गाँव पहुँचे। पंडितजी पहले तो हम लोगों से बहुत रुष्ट हुए, किंतु पीछे उन्हें हम लोगों ने फल आदि खिला-कर प्रसन्न कर लिया। वहाँ इक्के से उतरे—गंगाजी पार करने के लिये एक नावों का पुल बना था।)॥ प्रति मनुष्य टैक्स चुकाकर हम लोगों ने पुल पार किया, और मिर्ज़ापुर पहुँचे। गंगा पार करते ही एक ऐसे दर्रे से गुज़रना पड़ा, जो काटा जा रहा था। वहाँ पहुँचते ही एक इक्का किया, और टाँडा-फ़ॉल की ओर चले।

मिर्ज़ापुर समुद्र की सतह से २८३ फ़ीट ऊँचाई पर बसा है। यह अच्छा और बड़ा नगर है। यहाँ कई मिडिल स्कूल, कन्या-पाठशालाएँ, अस्पताल और हाईस्कूल हैं। यहाँ की आबादी अच्छी है। तिरमुहानी, चौक और मुट्ठीगंज आदि यहाँ के बड़े बाज़ार हैं। यहाँ कई बहुत सुंदर भवन और कोठियाँ तथा बड़ी-बड़ी दूकानें हैं।

गंगा के किनारे तो नगर बसा ही है। किनारे बिलकुल सलोतर, सीधे खड़े हैं। कहीं-कहीं २५-३० फ़ीट ऊँचे और बिलकुल सीधे कगारे हैं।

मिर्ज़ापुर से ४-५ मील विंध्याचल है। यहाँ इक्के-ताँगों से भी विंध्याचल जा सकते हैं। ।) या ≈) सवारी पड़ती है। मार्ग का दृश्य बहुत सुंदर है। मिर्ज़ापुर में कपास और रुई का व्यापार होता है। सूती कपड़ों के अतिरिक्त यहाँ लाख का भी व्यापार बहुत होता है। संयुक्त प्रांत में कपास और लाख के व्यापार का यह सबसे बड़ा केंद्र है। यहाँ की दरियाँ तो संसार-भर में प्रसिद्ध हैं। पीतल तथा अन्य धातु के बर्तन भी प्रसिद्ध हैं। यहाँ लाल पत्थर का भी व्यापार होता है। संक्षेप में यह बहुत कारोबारी नगर है। गंगा के दाहने किनारे पर स्थित है।

अस्तु। हम लोग टाँडा-फ़ॉल चले। मिर्ज़ापुर में एक घंटाघर रास्ते

में पड़ा। उस पर बहुत सुंदर पत्थर की नक़्क़ाशी का काम था। जब इक्का स्टेशन पार कर चुका, तभी से सामने पहाड़ी दिखलाई देना शुरू हुई। सड़क के दोनों ओर खुले और विस्तृत हरे-हरे मैदान थे।

मिर्ज़ापुर से गंगा-नदी का एक दृश्य

लगभग ४ मील चलकर हम लोग पहाड़ी के बिलकुल नीचे पहुँचे। वहाँ से दाहनी ओर सड़क पड़ती और चढ़ाई शुरू होती है। मोड़ पर एक साइनबोर्ड पर 'टाँडा' लिखा था। पहाड़ी के ऊपर तक—जहाँ डाक-बँगला बना है, वहाँ तक—पक्की सड़क पर इक्के जाते हैं। किंतु जिस स्थान पर एकदम सीधी चढ़ाई है, वहाँ २-३ फ़र्लांग पैदल चलने के लिये इक्के से हम लोगों को उतरना पड़ा। पहाड़ी उजाड़-सी है। चट्टानें, घास और झाड़ियाँ ही चारों ओर हैं। दूर-दूर पर छितरे हुए पेड़ हैं, और वे भी बहुत ऊँचे नहीं। पहाड़ी दृश्य का आनंद लेते, रोमांच और आह्लाद का अनुभव करते हुए २ मील चलकर डाक-बँगले के पास हम लोग इक्के से उतरे। तारा के परित्यक्त मिलिटरी स्टेशन पर टाँडा-फ़ॉल है। वहाँ कई अन्य इक्के और मोटरें खड़ी थीं। पूछते-पाछते वहाँ

से निकट ही एक घाटी में आए, जो तीन ओर पहाड़ी की ऊँची दीवारों से घिरी थी। पृथ्वी के नीचे से पानी आता है। वहाँ पत्थरों के अंदर से निकलता है। ३-४ स्थानों से पानी आ रहा था। बीच में एक चौड़ी और समतल भूमि थी। वहाँ एक गहरा गड्ढा होने के कारण एक सुंदर और अकृत्रिम तालाब-सा बन गया था। बड़ा शांति-प्रद स्थान है वह। मुझे कई स्थान पर मिट्टी के बर्तन और जले हुए चूल्हे दिखाई दिए, इससे मैंने अनुमान किया कि यहाँ लोग पिकनिक के लिये आते होंगे। यह स्थान इस योग्य और बड़ा सुंदर है। हाथ-मुँह धोकर हम लोग स्वस्थ हुए, और बड़ी देर तक तालाब के बहते, निर्मल जल में पैर डाले खिलवाड़ करते रहे। इसके बाद मेरे अन्य साथी तो ऊपर खड़े रहे, और मैं खूब इधर-उधर पानी की धाराओं और काई से भरी चट्टानों पर घूम-घूमकर नीचे तक देखता रहा। फिर कोठी से टौंडा-फाल का दृश्य देखा। ७०-८० फ़ीट की ऊँचाई से नीचे गिरती हुई तीव्र जल की धारा ऐसी लगती है, जैसे चाँदी की धारा बह रही हो। यह अनुपम दृश्य ज्योत्स्ना में देखने से और भी स्वर्गीय अलौकिकता से परिपूर्ण मालूम पड़ता है।

फिर हम लोग झरने के निकट गए—कोठी से ½ मील दूर होगा। चट्टानी मैदान बहुत लंबा-चौड़ा है। उस पर भिन्न-भिन्न धाराओं से आकर 'फ़ॉल' बनता है। पानी में असंख्य मछलियाँ हैं। बाईं ओर की एक ऊँची चट्टान से झरने का दृश्य देर तक देखते रहे। पहला झरना पानी की चादर के समान, दूसरा बहुत दूर से गिरता फेनिल दूध के समान, तीसरा सीढ़ी बनाता, टकराता, बल खाता और चौथा और पाँचवाँ मामूली रूप से गिरता था।

सपाट, चट्टानी ज़मीन पर बहता हुआ पानी जब ६०-७० फ़ीट की ऊँचाई से एकदम खड़ी चट्टानों से नीचे गिरता है, तो कहीं तो लगता है, सीढ़ी-सी बनी हुई चट्टानों पर सफ़ेद चादर-सी बिछी है; और वह

विनोद तथा विश्राम-भवन (पुरुषों के लिये)
(भुवाली-सैनिटोरियम)

विनोद तथा विश्राम भवन (स्त्रियों के लिये)
(हुनाली-रोडिशिया)

हिल रही है। कहीं चाँदी के पत्र के समान, कहीं दूध के फेने के समान जल-धारा गिरती है। कम-से-कम ५ स्थानों से पानी भारी धारा में गिरता है। उस अवर्णनीय दृश्य को देखकर हम फिर कोठी लौटे। कोठी के लिये इतना सुंदर स्थान चुना गया है कि उस स्थिति के चुनने के लिये इंजीनियर की जितनी तारीफ़ की जाय, कम है।

वहाँ से लौटे, तो इक्केवाले ने कहा—"बाबूजी, बाँध नहीं देखिएगा।" हम लोग उस ओर चल दिए। शाम हो गई थी, हर ओर अँधेरा फैल चुका था, पूर्णमासी का चंद्रमा आकाश में था, आकाश निर्मल था; प्रकृति निस्तब्ध थी। ऐसे सुहावने समय हम लोग 'वाटर रिज़रवायर' पर पहुँचे। बाँध लगभग ३/४ मील चौड़ा और १ मील लंबा होगा। पानी के अंदर एक कोठी-सी बनी थी, और उस तक जाने के लिये एक छोटा-सा पुल। पानी स्थिर और अगाध था—चंद्रमा उसमें झिलमिला रहा था। शांत, सौम्य-मूर्ति और गंभीर प्रकृति के साम्राज्य में एक गाय चर रही थी। हृदय आनंद से उछल रहा था, किंतु थोड़ा-बहुत घूमकर ही चल दिए। मन तो होता था, यहीं बैठे रहें। उसे देखने के लिये इंद्र की आँखें और ब्रह्मा के दिन की आवश्यकता है। रात हो जाने से सुनसान जंगल और पहाड़ी पर लुट जाने का भय था, क्योंकि पहाड़ियों पर गुंजान वृक्षों में सैकड़ों आदमी छिप जायँ, तब भी कुछ पता न चले। हम तीनो आदमियों के पास रुपया और माल मिलाकर ४००), ५००) से कम का न होगा। नया स्थान था। अस्तु। हम लोग उसी मार्ग से लौटे। चट्टानें और हरियाली ज्योत्स्ना में स्नान कर रही थीं। पूर्ण चंद्र की ज्योति में पहाड़ी कितनी सुंदर लगती है, यह बताने की बात नहीं, वरन् अनुभव द्वारा जानी जा सकती है। डरते और आँखों द्वारा प्रकृति का सौंदर्य पान करते हुए हम लोग ६ बजे रात को मिर्ज़ापुर पहुँचे।

अब हमारे सामने दो विकट प्रश्न उपस्थित हुए—प्रथम तो रात्रि

कहाँ व्यतीत की जाय, और दूसरे यह कि इतनी काफ़ी सरदी है, और न बिछाने के लिये एक दरी और न ओढ़ने के लिये एक भी कपड़ा— क्या करेंगे ? टाँडा-फ़ॉल देखते समय तो इसका ध्यान भी न आया था, और आया भी था, तो हम लोगों ने कहा होगा—इस समय तो आनंद ले लें, फिर देखा जायगा, खैर। हम लोग स्टेशन गए, और वहाँ के स्टेशन-मास्टर से मिले। वह एक अँगरेज़ सज्जन थे। उनसे पूरा हाल कहा, और कहा कि इंटर क्लास-वेटिंग रूम खुलवा दीजिए। उन्होंने खुलवा दिया। हर ओर के किवाड़ बंद कर लिए। हवा और चोरों से तो यह बचाव किया, बिजली की बत्ती भी जाड़े में गरमी और प्रकाश देती रही। टाँडा-फ़ॉल पर ही हम लोगों को एक सज्जन ने यह सलाह दी थी। उनका शुभ नाम बाबू बद्रीनाथजी था। वह वहीं के निवासी थे। रात्रि में भी वह बेचारे हम लोगों की सुधि लेने आए। रात्रि-भर हम लोग मज़े में सोए। एक सज्जन मेज़ पर सोए, और दो-एक तिपाई पर। मच्छड़ काटते रहे, कुछ सरदी भी लगी, पर नहीं के बराबर। यदि वहाँ रात्रि को सोने को न मिलता, तो रात-भर हम लोग जाड़े में ऐंठ जाते, और न-जाने क्या दुर्दशा होती।

प्रातःकाल शौचादि से निवृत्ति पाकर हम लोग स्टेशन से पैंटूनब्रिज तक पैदल आए। स्थान-स्थान पर इक्केवालों से पूछते जाते थे—उन्हें जगाकर, पर इतने सुबह कौन जाता। वहाँ से इक्का किया। वह सर्राटे की हवा चल रही थी कि हम लोग सिकुड़े जा रहे थे, और थर-थर काँप रहे थे। उँगलियाँ नीली पड़ गई थीं, क्योंकि मामूली कपड़े पहने थे। घर से यह सोचकर थोड़े ही चले थे कि रात को रुकना पड़ेगा, नहीं तो हमारे मित्र की माताजी के कहने पर भी हम लोग लोई तक लाने से क्यों इनकार कर देते। वहाँ तो कह आए थे कि ९-१० बजे रात को आ जायँगे। खैर।

मिर्ज़ापुर के आस-पास और भी कई स्थान दर्शनीय हैं।

यहाँ से १० मील पर विंडहम-फ़ॉल, विंडहम-बँगला और कोटवा हैं। लॉरी द्वारा भी यहाँ जाया जा सकता है। यहाँ का दृश्य अपूर्व है—अलौकिक और प्राकृतिक। दूसरा स्थान धाँधरौल है। मिर्ज़ापुर-डिस्ट्रिक्ट में राबर्ट्सगंज एक तहसील है (यह मामूली स्थान है), और यहाँ से १० मील पर धाँधरौल है। यहाँ एक बहुत बड़ा बाँध है, जो प्रायः १४ वर्गमील में होगा। इसकी गहराई १० या १२ फ़ीट होगी। इस बाँध से पानी एक नहर द्वारा बहता रहता है। उसी के किनारे-किनारे सड़क गई है। वहीं बाँध तक आने का मार्ग है। बाँध के दोनो ओर पर्वत हैं, और दो ओर पत्थर की दीवार इसी हेतु बनवा दी गई है। बाँध में कई फाटक हैं। इस बाँध से ५ मील पर विजयगढ़ का अच्छा और प्राचीन क़िला है। इसमें सात तालाब, पाँच इमारतें हैं। क़िले का क्षेत्रफल प्रायः पाँच वर्गमील होगा। क़िले में अनेक अमूल्य पदार्थ हैं। यह स्थान अत्यंत भयंकर जंगलों और जानवरों से परिपूर्ण है। अस्तु।

६½ बजे प्रातःकाल हम लोग विंध्याचल पहुँचे। उस दिन गंगा-स्नान था, अतः वहाँ बहुत भीड़ थी। मैंने स्नान करना चाहा, तो मेरे एक साथी, जो ज़रा गंगा-स्नान आदि से भागते हैं, मुझे रोकते रहे कि रात-भर ठंड में मरे हो, और इस समय काँपते हुए यदि नहाओगे, तो निमोनिया हो जायगा। किंतु मेरी इच्छा और हठ ने उनके वाद-विवाद पर विजय पाई। केवल मैंने ही स्नान नहीं किया, मुझे कोसते हुए उन दोनो ने भी स्नान किया।

अब मैं विंध्याचल का वर्णन करता हूँ—प्रयाग से ४६ मील विंध्याचल-स्टेशन है। प्रयाग से काशी जाते समय यह रास्ते में पड़ता है। और, यहाँ से ५-६ मील पर दूसरा स्टेशन मिर्ज़ापुर है, जिसका वर्णन हो चुका है। यह भी गंगा के दाहने किनारे पर स्थित है। यहाँ का बाज़ार छोटा है, किंतु आवश्यकता की सभी वस्तुएँ प्रायः मिल जाती हैं। हाँ, जब यहाँ मेला होता है, तब बाहर के बहुत-से लोग यहाँ दूकानें लाते हैं।

पूजा-पाठ और प्रसादी का सामान, जैसे चुड़ुवा, कमलगट्टा आदि, यहाँ बहुत मिलता है। बस्ती बड़ी और अच्छी है, और पंडों के ही मकान अधिक हैं। कई धर्मशालाएँ भी हैं।

यहाँ का महत्त्व और माहात्म्य विंध्यावासिनीदेवी के मंदिर के कारण है। मंदिर बहुत बड़ा नहीं, किंतु बहुत छोटा भी नहीं। कालीजी की
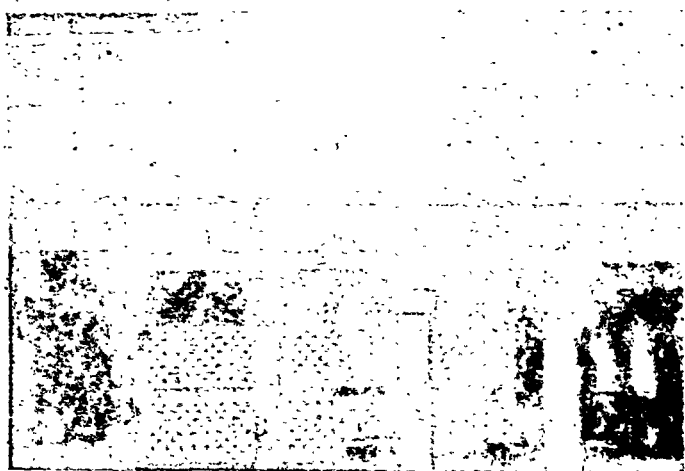
विंध्यवासिनीदेवी का मंदिर

श्याम मूर्ति है—लगभग २½ हाथ ऊँची। वह सिंह पर सवार हैं। यात्रियों को देवीजी के दर्शन नहीं हो सकते। कारण यह कि मंदिर के अंदर फ़ीट-डेढ़ फ़ीट ऊँचा चबूतरा है। उसके चारों ओर काठ का जँगला है। उसी के अंदर देवीजी की मूर्ति है, जो काफ़ी नीचे पर है—अँधेरा भी वहाँ काफ़ी है। मेले में अधिक भीड़ होने के कारण तो दर्शन हो ही नहीं पाते। विंध्याचल की मुख्य देवी कौशिकी और कात्यायनी हैं।

मंदिर के चारों ओर चढ़ने के लिये सीढ़ियाँ बनी हैं। सीढ़ियाँ चढ़कर एक चौकोर खंभों का दालान है, और दालान में मंदिर, जिसका

वर्णन हो चुका है। मंदिर के पश्चिम में एक आँगन है, जिसमें देवीजी को बकरों की बलि चढ़ाई जाती है। आँगन के एक ओर और एक दालान है। उसमें सात बड़े घंटे लगे हैं। पश्चिम में बारह-भुजी देवी भी निकट ही हैं। पास ही खोपड़ेश्वर महादेव, दक्षिण में महाकाली और उत्तर में धर्मध्वजा देवी आदि के मंदिर हैं। उत्तर में विश्वेश्वर महादेव और हनुमान्‌जी की मूर्ति है। मंदिर में खुला हुआ मंडप है।

गंगा के उस पार, उत्तर में, रेती में, छोटी चट्टान पर, विना अर्घे के एक शिवलिंग भी है, जो विंध्येश्वर नाम से प्रसिद्ध है। पास ही चट्टान पर एक शिला-लेख भी है, जो काशी-नरेश का बताया जाता है। पास ही दूसरी चट्टान पर घिसा हुआ दूसरा शिला-लेख है।

दर्शन और स्नान के बाद भोजन किया, और फिर त्रिकोण-यात्रा करने की सोची। भगवती, काली और अष्ट-भुजी के दर्शन को ही त्रिकोण-यात्रा कहते हैं। हम लोगों ने इक्का किया। सुंदर पहाड़ी प्रदेश की सड़कों से होता हुआ इक्का आगे बढ़ा। पहाड़ियों की चोटियों पर सुंदर बँगले बने हैं। यहाँ की जल-वायु बहुत सुंदर है, और 'सैनीटोरियम' की दृष्टि से यह दिन-प्रति-दिन अत्यधिक ख्याति पा रही है। यह स्थान सुंदर, रमणीक और तपस्या के योग्य है। यहाँ पवित्रता, शांति और एकांत के दर्शन होते हैं। इसका प्राकृतिक सौंदर्य यों तो सराहनीय है ही, किंतु वर्षा-ऋतु में इसके सौंदर्य में बहुत वृद्धि हो जाती है, क्योंकि यहाँ तब बहुत-से झरने आदि बहने लगते हैं। इक्का एक पहाड़ी के बीच में नीचे ही रुक गया। हम लोग पैदल चलकर अष्ट-भुजी देवी के मंदिर में गए। यह काली-खोह से २ मील पर हरे-भरे पहाड़ों पर स्थित है। विंध्याचल में अष्ट-भुजी से थोड़ी दूर रामेश्वर शिव का मंदिर है। वहाँ दर्शन किए। एक सुंदर वन के बीच में यह स्थित है। एक और 'राम गया'-नामक स्थान है, जहाँ पिंड-दान होता है। सुंदर, ऊँची-नीची पहाड़ियाँ और पक्की बनी सीढ़ियाँ हम लोगों को मिलीं। रास्ते में

मिझुवा-खोह मिली। फिर सीता-कुंड पड़ा। यह बड़ा रमणीक स्थान है। यहाँ काले मुँह के बंदर बहुत हैं। इसके बाद एक बहुत लंबा-चौड़ा मैदान मिलता है। फिर मोतियाताल पड़ा, इसके बाद गेरुआ तालाब पड़ा। इसे गिरवहना भी कहते हैं। निकट ही श्रीकृष्णजी का मंदिर है। फिर काली-खोह है। काफ़ी सीढ़ियाँ उतरना पड़ीं—शायद १०८। निकट ही एक और कालीजी का मंदिर है—उसमें दर्शन किए। देवी का शरीर छोटा मुख बड़ा है। निकट ही एक और स्थान पर दर्शन हैं। यह बड़ा ही रमणीक और हृदयहारी वृक्षों से आच्छादित पहाड़ी स्थान है। दर्शन करके फिर लौटना पड़ा इक्के के लिये, अष्ट-भुजी होते हुए। इसके निकट भैरों-कुंड है। यह एक सुंदर झरना है, और बड़ा सुंदर स्थान है। इसी का पानी एक तालाब में जमा होता है, जिसे देवी का कुंड कहते हैं। यह कुंड यहाँ से दिखाई देता है, और पास ही है। यहाँ भी पेड़ छितरे-छितरे हैं। ग्रीष्म-ऋतु होने के कारण घास सूखी-सी थी, और झाड़ियाँ छोटी-छोटी।

जब त्रिकोण-यात्रा हो चुकी, तो पता चला कि प्रयाग गाड़ी जाने में अभी काफ़ी देर है। अतः इच्छा न होते हुए भी हम मित्रों के हठ के कारण गंगाजी के पार चील-स्टेशन को रवाना हुए—नाव द्वारा। बड़ी गंगा में नाव पर इतनी दूर की यात्रा करना, जब नाव में इतना अधिक बोझ हो, ख़तरे से ख़ाली न था। मैं तो तैरना जानता हूं। यदि नाव पर कुछ संकट आता, तो संभव था, मैं तैरकर गंगा पार भी कर लेता, पर मेरे दोनो मित्र तैरना न जानते थे। ख़ैर, नाव चली। जब मैंने अपने हठ का कारण उन्हें समझाया, तब तो वे लोग इतना डरे कि रह-रहकर कहते थे—"नाव किनारे लगवा लो।" किंतु मेरे समझाते रहने पर किसी तरह रुके रहे। नाव किनारे लगी। हम लोगों ने ३-४ फ़र्लांग रेती पार की, स्टेशन पर आए। माधोसिंह में गाड़ी बदलनी थी। वह अभाग्य-वश ३ घंटे 'लेट' थी।

८३ बजे रात्रि को प्रयाग गाड़ी पहुँची। हमारे मित्र के घर में और जहाँ मैं टिका था, वहाँ बड़ी घबराहट हम लोगों के कारण हुई। कारण यह था कि उस समय हिंदू-मुसलमानों का वैमनस्य चल रहा था—कुछ दिन पहले लड़ाई भी हो चुकी थी। हम लोग स्वयं स्टेशन से चौक तक बहुत डरते-डरते आए। इतनी आनंदप्रद और कष्टप्रद यात्रा के बाद घर पहुँचने पर मीठी झिड़कन और डाँट पड़ी, और उसके लिये हम लोग पहले से ही तैयार होकर गए थे।

चुनारगढ़

प्राचीन भारतवर्ष अपनी आध्यात्मिक उन्नति तथा शांति के लिये संसार में सर्वोपरि रहा है। किंतु बाह्य शांति के दर्शन इसे सदा कम हुए। विदेशी आक्रमणों तथा दुःखद अंतःकलह के चित्र सदा इसके वक्षःस्थल पर बनते-बिगड़ते रहे। आत्मरक्षा के भाव से देशवासी सतत प्रयत्नशील रहे। अनेक उपाय इसके लिये किए गए; उनमें से एक उपाय सुदृढ़ गढ़ों का निर्माण था। चुनारगढ़ भी अपने गढ़ के लिये ही प्रसिद्ध है।

बनारस से इलाहाबाद आते हुए मुझे चुनारगढ़ जाने का मौक़ा मिला। चुनार पहुँचने के थोड़ा पहले ही पहाड़ी प्रांत शुरू हो जाता है। चारों ओर गहरे-गहरे खड्ड और छोटी-छोटी पहाड़ियाँ रेल से दिखाई देती हैं। प्राकृतिक दृश्य बहुत सुंदर होता है, ख़ासकर बरसात में। स्टेशन
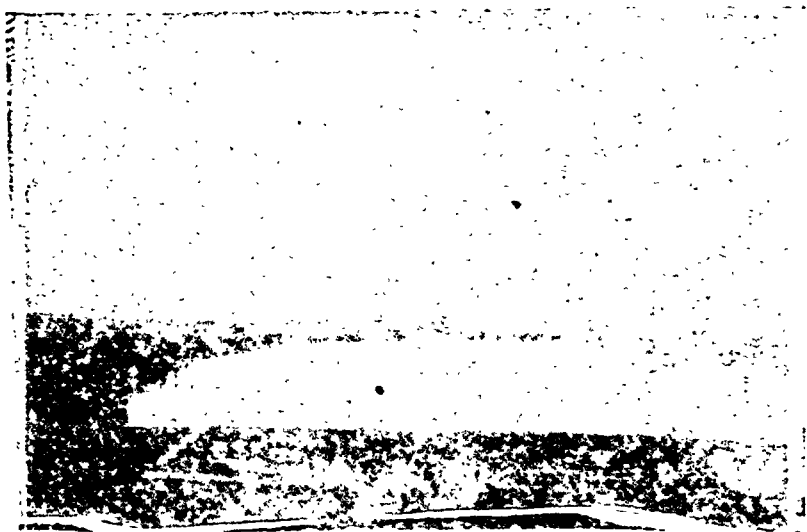
चुनार के क़िले पर से गंगा का दृश्य

के दूसरी ओर पहाड़ियाँ हैं। स्टेशन से दो मील, गंगा के किनारे, चुनारगढ़ की बस्ती है। स्टेशन पर इक्के-तांगे मिल जाते हैं।

स्टेशन के पास आबादी नहीं। स्टेशन के क़रीब एक छोटी धर्मशाला है, जिसमें एक पक्का कुआँ भी है। दो-तीन छोटी दूकानें भी हैं। इक्के से नगर की ओर जाइए, तो रास्ते में आपको सड़क के दोनो ओर ज़्यादातर झाड़ियाँ और बीच-बीच में पेड़ दिखाई देंगे। मार्ग सूना-सा लगता है। दृश्य बहुत सुंदर है। प्रायः डेढ़ मील चलने पर कुछ दूकानें ऐसी पड़ती हैं, जिनमें मिट्टी के खिलौने या पत्थर की बनी हुई चीज़ें बिकती हैं। चारो ओर की ज़मीन ऊँची-नीची और ऊबड़-खाबड़ है।

चुनार में गंगाजी हैं, जो उत्तर-पश्चिम की ओर बहती हुई बनारस जाती हैं। गंगाजी के दाहने तट पर ही चुनार का प्रसिद्ध क़िला और नगर है। यह ई० आई० आर० की शाखा पर है, और काशी से
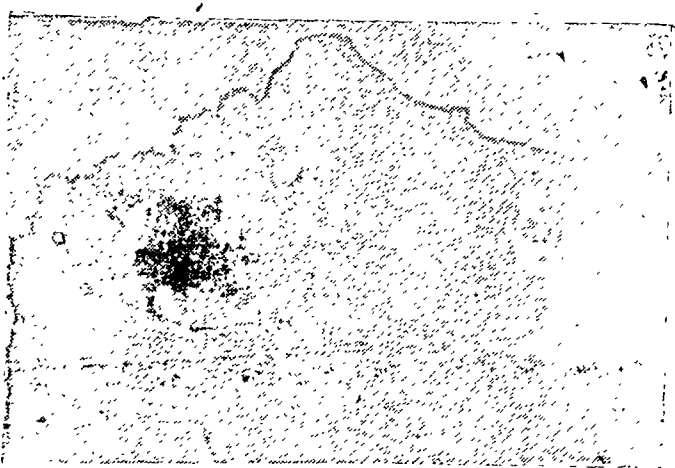
चुनार के क़िले का दृश्य

२६ मील, विंध्याचल से २४ मील और प्रयाग से ७५ मील है। चुनारगढ़ बड़ा क़स्बा है। इसे देखकर मिर्ज़ापुर याद आ जाता है। हाँ, मिर्ज़ापुर इससे बड़ा ज़रूर है, चुनार तहसील हेडक्वार्टर है, और

मिर्ज़ापुर डिस्ट्रिक्ट हेडक्वार्टर। नगर में अनाज की मंडी है। पास ही सर्राफ़ा है, जिसमें सोना-चाँदी और उनके बने गहने तथा बर्तन बिकते हैं। इसी के पास एक जनरल मार्केट है, जिसमें सभी ज़रूरी चीज़ें आसानी से मिल सकती हैं। चुनार में पत्थर का काम बहुत होता है— पत्थर काटना और उसकी सब चीज़ें (पथरी, खिलौने, स्टेशनरी का सामान आदि) बनाना। यहाँ मिट्टी के खिलौने भी बहुत अच्छे बनते हैं। कपड़ा बुनने का काम और लाख का भी कुछ व्यापार होता है। रेलों के न खुलने पर चुनार भी व्यापारिक दृष्टि से महत्त्व-पूर्ण स्थान था, क्योंकि कलकत्ते से यहाँ तक स्टीमर आते और व्यापार करते थे। १९वीं सदी तक इसका व्यापार बहुत बढ़ा-चढ़ा रहा, लेकिन इसके बाद ढीला पड़ गया, क्योंकि स्टीमर का स्थान रेल ने ले लिया।

नगर नदी के किनारे ऊँची सतह पर बसा है, पर ज्यों-ज्यों नगर के अंदर जाइए, त्यों-त्यों सतह कुछ नीची होती जाती है। गंगा के किनारे बसे मुख्य बाज़ार से हटकर, लगभग मील-भर की दूरी पर, सिविल लाइन्स हैं, जहाँ चुनार के कई हाईस्कूल, अस्पताल, कोर्ट और म्युनिसिपल एरिया हैं। यहाँ सबसे अधिक देखने योग्य वस्तु चुनारगढ़ का क़िला है, जो चुनारगढ़ कहलाता है। किसी समय इसमें केवल सेनाएँ ही रहती होंगी, पर अब यह रिफ़ारमेटरी स्कूल के नाम से प्रसिद्ध है। कहते हैं, यह गढ़ इलाहाबाद के क़िले से बहुत बड़ा, चौड़ा और मज़बूत है। क़िले के नीचे बहुत ज़ोर से गंगाजी बहती हैं। इसके दो ओर गंगाजी और एक ओर गहरी खाई-सी है। कई सौ वर्षों से क़िले से टकराती हुई गंगा की धारा बह रही है, लेकिन क़िला अब भी उसी तरह खड़ा है। क़िला पत्थर का और ज़मीन की सतह से काफ़ी ऊँचे पर है। क़िले की ऊँची सतह तक सीढ़ियों से पहुँचना होता है, तब क़िले का मुख्य फाटक मिलता है, जो मुख्य नगर की सतह से काफ़ी ऊँचाई पर है। फाटक बहुत ऊँचा, सुंदर और लाल पत्थर का है। उस पर बना

हुआ काम और कारीगरी बहुत उत्तम है। फाटक के पास एक पत्थर दीवार में गड़ा है, जिसमें क़िले से संबंध रखनेवाली सब इतिहास की घटनाएँ खुदी हैं। क़िले के चारो ओर प्रायः दो गज़ चौड़ी दीवारें हैं, जिन पर मनुष्य आसानी से दौड़ सकता है। फाटक से क़िले के अंदर घुसते ही आपको बाईं ओर का मार्ग पकड़ना पड़ेगा। दाहनी ओर तो वहाँ के सुपरिंटेंडेंट (डॉक्टर हैकरवाल) तथा चुनारस्कूल के मास्टरों के रहने की जगह है, जहाँ जाने की आज्ञा नहीं है। बाईं ओर चलते ही बग़ीचा तथा खेत पड़ते हैं। थोड़ी दूर और चलने पर बच्चों की जेल पड़ती है, जिसे रिफ़ारमेटरी स्कूल कहते हैं। १८ वर्ष से कम उम्र के बच्चों को, जो भारी गुनाह कर डालते हैं, यहीं की जेल में रक्खा जाता है। जेल में बड़े-बड़े तीन कमरे-से हैं, और हरएक कमरे में थोड़े-थोड़े लड़के रहते हैं। उम्र के अनुसार बाँटकर लड़के कमरों में रक्खे जाते हैं। आप उन्हें दूर से देख सकते, उनके पास जा सकते और उनसे बोल भी सकते हैं। क़ैदियों को कोई भी चीज़ देने की सख़्त मनाही है। जेल के अंदर एक छोटा-सा बग़ीचा भी है, जिसमें क़ैदियों को सुधारने के लिये तरह-तरह के सिद्धांत-वाक्य (moto) लिखे हैं; जैसे "सच बोलो", "चोरी करना महापाप है" आदि। वहाँ लड़कों को किसी तरह का कष्ट नहीं, ऐसा कहा जाता है। कमरों में ऊँचे-ऊँचे अलग-अलग बहुत-से चबूतरे हैं, जिन पर क़ैदियों के तसले और गिलास रक्खे रहते हैं। एक चबूतरा एक क़ैदी के लिये होता है। थोड़ी-सी पत्थर की दीवार और फिर लोहे के कटहरे, इसी क्रम से जेल बनी है। जेल के पास ही वर्क-शाप या स्कूल है, जहाँ लड़कों को शिक्षा दी जाती है। यहाँ बुनाई, दरी बनाना, चमड़े का काम, दरज़ीगीरी तथा और हाथ की कारी-गरी और मशीन का काम सिखाया जाता है।

क़िले के अंदर वहाँ के सुपरिंटेंडेंट की आज्ञा लेकर ही जाया जा सकता है। क़िले के अंदर फ़ोटो लेना मना है। फाटक पर अपना नाम

भी लिखना होता है। जिस वर्ष मैं गया था, उस वर्ष प्राय: ५६ बच्चे क़ैदी थे। स्कूल के पास ही बच्चे-क़ैदियों के खेलने के लंबे-चौड़े मैदान हैं। जेल के पीछे की ज़मीन में क़िले की गायों के बाड़े हैं। उसके बाद फिर खेलने के मैदान और बग़ीचे हैं। क़िले के ख़ाली स्थान में बग़ीचे लगा दिए गए हैं। जेल को बाहर से देखने के बाद दाहने हाथ की ओर मुड़ना पड़ता है। कुछ आगे चलकर पहले ढाल पड़ता है, फिर थोड़ी सीढ़ियाँ चढ़कर एक छोटा-सा फाटक, आगे एक बारादरी है। इसके पास वह स्थान है, जहाँ, कहा जाता है, आल्हा का विवाह हुआ था। यह स्थान 'माड़ो' कहलाता है। वह स्थान, जहाँ आल्हा की स्त्री सुनवा का महल था, अब तक सुनवा-बुर्ज के नाम से प्रसिद्ध है। इसी स्थान
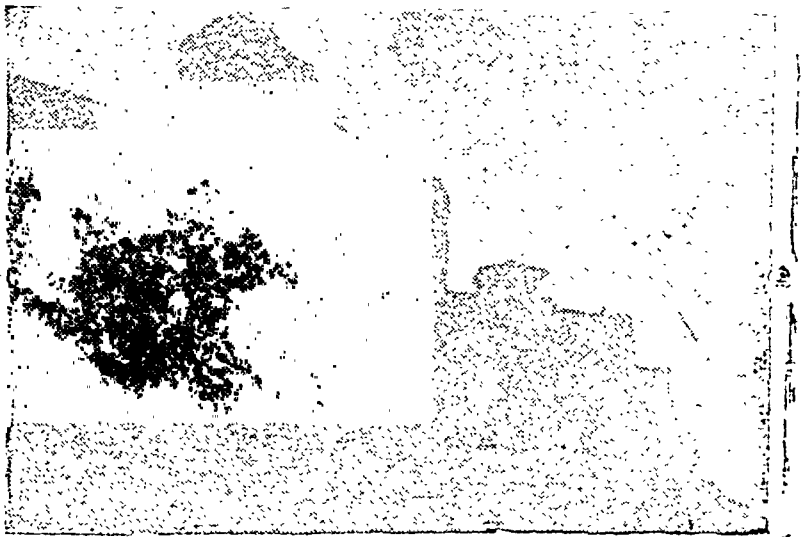
सुनवा-बुर्ज

पर आजकल रिफ़ारमेटरी स्कूल के सुपरिंटेंडेंट का बँगला है। बीच में एक ऊँचा-सा चबूतरा है। उसके चारो ओर खंभे हैं, और ऊपर पटा है। यहाँ कारीगरी देखने योग्य है। थोड़ा और आगे बढ़ने पर राजा भर्तृहरि का मंदिर है। मंदिर के अंदर एक छेद है। कहते हैं, यदि

मनुष्य यह कहकर कि मैं इस छेद को भर दूँगा, तेल डालना शुरू करे, तो छेद कभी न भरेगा, अगर यों ही उसमें कोई तेल डाले, तो थोड़ी ही देर में भर जाता है। इसमें कहाँ तक सचाई है, इसका प्रत्यक्ष अनुभव मैंने नहीं किया। इस मंदिर के पास ही एक बावली है, जिसे अब चारो ओर से बंद कर दिया गया है। बावली सवा सौ या डेढ़ सौ फ़ीट गहरी होगी, और नीचे तक पहुँचने के लिये सीढ़ियाँ भी बनी हैं। मंदिर के पास एक सुंदर बग़ीचा है। एक सुंदर फ़ौवारा भी, जो शायद आजकल काम नहीं देता। इसके बाद वह भाग है, जहाँ वार्डन आदि रहते हैं, और उस ओर जाने की आज्ञा नहीं है।

क़िले से गंगाजी तथा चारो ओर का दृश्य अत्यंत चित्ताकर्षक और मनोरंजक है।

इस क़िले में गहरे तहख़ाने हैं। तहख़ानों में सुरंग भी हैं, ऐसा कहा जाता है। सुरंगें आदि देखने का अवसर तो नहीं मिला, पर एक खुदा हुआ चबूतरा अवश्य देखा। अंदर की ओर की दीवारें देखने से पता लगता है कि नीचे तहख़ानों में भी शायद इमारतें हैं।

इसमें संदेह नहीं कि इतिहास में इस क़िले का नाम विशेष रूप से आता है। कहा जाता है, भर्तृहरिजी जब राजा विक्रमादित्य के बहुत मनाने पर भी घर लौटकर नहीं गए, तो उनकी रक्षा के लिये यह क़िला उन्होंने बनवा दिया। उस समय यह स्थान घना जंगल था। आल्हा-ऊदल की कथा को किंवदंती ही मान लें, तो भी शेरशाह, अकबर और ग़दर के समय में इस ऐतिहासिक तीर्थ में जो घटनाएँ घटी हैं, वे तो इसकी स्थिति के अनुकूल ही हैं। बनारस के महाराज चेतसिंह को जब वारेन हेस्टिंग्स की कृपा से अपने राज्य से भागना पड़ा, तब काशी की प्रजा में कुछ क्रोध की आग फैली। उस समय वारेन हेस्टिंग्स को भागकर इसी क़िले में आना पड़ा।

यहाँ की और देखने-योग्य चीज़ें ये हैं—

(१) मुअज्जीन मसजिद—कहते हैं, मुसलमानों के प्रसिद्ध नबी हसन-हुसैन के पहने कपड़े अब तक यहाँ सुरक्षित रक्खे हैं। फ़रुख़सियर बादशाह के समय में इन्हें कोई मक्का शरीफ़ से लाया था।

(२) भैरवजी की मूर्ति—डाकघर के पास है।

(३) गंगेश्वर महादेव।

(४) कामाक्षादेवी का मंदिर—यह स्टेशन के उस पार, २-३ मील की दूरी पर, पहाड़ी पर, है। मंदिर के नीचे दुर्गा-कुंड है। मंदिर और कुंड के आस-पास का दृश्य बहुत सुहावना है। पास ही एक और पुराना मंदिर है।

(५) दुर्गा-खोह।

(६) शाह क़ासिम सुलेमानी की दरगाह आदि।

बस्ती अब उजाड़-सी हो गई है। वही पुराने ढंग की इमारतें, कच्चे या खपरैलों के मकान और पतली सड़कों के दोनो ओर विशेषतया खँडहर हैं। परंतु यहाँ की जल-वायु स्वास्थ्य-प्रद है। बरसात में गंगा-नदी का भारी पाट इस स्थल की गंभीरता और भी बढ़ा देता है।

यहाँ एक हाई तथा अन्य छोटे-छोटे स्कूल भी हैं। स्वास्थ्य की दृष्टि से यहाँ की जल-वायु अच्छी है।

चित्रकूट

दशहरे की छुट्टियों के कई मास पूर्व ही न-जाने क्यों मेरी यात्रा करने की इच्छा सदा ही जग उठा करती है, और मैं अपने खाली समय में बैठे-बैठे प्रोग्राम बनाया करता हूँ। वास्तव में दशहरे का समय यात्रा के लिये होता भी उपयुक्त, सुखद और सुविधा-जनक है। पहले तो १०-१२ दिनों की छुट्टी, फिर सुंदर ऋतु। वर्षा समाप्त हो चुकती है, बड़ी नदियाँ उतर चुकती हैं, सड़कों की कीचड़ सूख चुकती है। न बहुत सरदी, न बहुत गरमी, न लू और न पानी। अस्तु। हम लोगों ने प्रकृति के निकेतन, भगवान् की लीला-भूमि चित्रकूट को ही देखने का निश्चय किया। घर से बाहर निकलना गृहस्थों के लिये इतना सरल नहीं होता—बीमारी, आवश्यक काम, रुपए की चिंता और हज़ार झंझट, किंतु दृढ़ विश्वास के आगे सब रुकावटें हट जाती हैं। बड़ी कठिनाई से तो जानेवाले तैयार हुए, किंतु श्रीगणेश ही विचित्र हुआ। पहले कानपुर से ६ बजे सायंकाल को गाड़ी छूटती थी, किंतु ऐन वक़्त पर जब ताँगा आ गया, तो पता चला, अब गाड़ी ४½ पर ही छूट जाती है। ४½ तो बज चुके थे, अब क्या किया जाय? मेरे एक मित्र की तो राय हुई, कल चला जाय, किंतु मैंने दृढ़ता-पूर्वक कहा—"न-जाने किस कठिनाई से तो घर से निकला, यदि फिर बिस्तरा खुल गया, तो अब न बँध सकेगा, यह निश्चय है, अतः मैं तो कहता हूँ, आज ही चलें। कानपुर में ही रात्रि को विश्राम करेंगे। वहाँ से प्रातःकाल की गाड़ी से चल देंगे।" मेरी विजय हुई, और हम लोग लखनऊ से कानपुर पहुँचे। धर्मशाले में सामान रक्खा। सरसैया-घाट में स्नान, गंगाजी पर बोटिंग, प्रयागनारायण के मंदिर में दर्शन और बाज़ार की सैर हुई। सायंकाल को वहाँ कोठे पर नौबत बजती है, और ठाकुरजी पीनस पर बैठाकर मंदिर में घुमाए जाते हैं। कानपुर

में रामलीला के संबंध में उस दिन 'नाव नवैया' थी। इसमें यह होता है कि चाँदी के रथ पर राम और लक्ष्मण को बैठाकर मुख्य बाज़ारों में घुमाया जाता है। बड़ी भीड़ होती है। यह सब देखकर सोए। प्रातः-काल कानपुर से चले, और १० बजे दिन को बाँदा पहुँचे। यहाँ गाड़ी बदलनी होती है। कुछ घंटों का समय था ही। बाँदा देखने चल दिए। बाँदा अपने अमूल्य और अलौकिक पत्थरों के लिये प्रसिद्ध है। यहाँ के नदी के जल में यह विशेषता है कि कुछ महीनों में प्रत्येक वस्तु 'पत्थर' में परिवर्तित हो जाती है। एक मित्र के यहाँ सामान रक्खा, और पहाड़ी पर स्थित बमेश्वर महादेवजी के दर्शन करने चल दिए। पहाड़ी पर चढ़े और घूमे। फिर वहाँ के प्रसिद्ध बाबाजी के स्थान पर गए (मंदिर ही से मिला उनका स्थान है)। वहाँ महीने-भर का अखंड कीर्तन हो रहा था—वहाँ आनंद लिया। बाबाजी की गुफा देखी। ३ बजे की गाड़ी से बाँदे से चले, और ५ बजे सायंकाल को करवी-स्टेशन पर उतरे। चित्रकूट-स्टेशन पहले ही पड़ता है, पर प्रायः लोग करवी पर उतरते हैं, क्योंकि यहाँ लॉरी और गाड़ियाँ आदि सरलता से मिल सकती हैं। लॉरी से मंदाकिनी-नदी तक आए। नदी सब यात्रियों ने पैदल पार की—घुटने-घुटने पानी था। उस पार दूसरी लॉरी मिलती है। उस पर बैठे, और चित्रकूट की बस्ती में पहुँचे। पुल न होने से यह असुविधा यात्रियों को होती है। मंदाकिनी के किनारे स्थित धर्मशाला में हम लोग ठहरे। करवी से सीतापुर ५ मील है।

प्रातःकाल हम लोग कामतानाथजी की परिक्रमा को गए। धर्मशाले से लगभग २ मील पर पर्वत है, और इसकी परिधि प्रायः १½-२ मील है। कहते हैं, आधा भाग सरकारी क़ब्ज़े में और आधा चौबे की रियासत है। मार्ग में कई मंदिर पड़े—पुरानी लंका का मंदिर, अक्षयवट-मंदिर, रामनाम-संस्कृत-विद्यालय का मंदिर तथा बाग़, गौरिहाल राजा का मंदिर आदि। इस सदा हरी-भरी रहनेवाली पहाड़ी के तट पर चारो ओर परि-

क्रमा में अनेक मंदिर पड़ते हैं। चित्रकूट में कामदगिरि का बड़ा माहात्म्य है। कहते हैं, यहाँ सब तीर्थों का निवास है। राम, सीता और

कामतानाथ—चित्रकूट

लक्ष्मणजी ने यहीं निवास किया था। कालिदास के मेघदूत में भी इस पहाड़ी का वर्णन है। यह विंध्याचल की एक शाखा है। परिक्रमा ३-४। मील लंबी है (पर्वत के चारो ओर)। परिक्रमा में पक्की सड़क बनी है। यह पहाड़ी इतनी पवित्र समझी जाती है कि न तो इस पर कोई चढ़ता है, और न इसके वृक्ष काटे जाते हैं। नंगे पैर महावीरजी के मंदिर से

परिक्रमा आरंभ की। पहले मुखारविंद के दर्शन किए। कहते हैं, पहले यहाँ दूध की धारा निकलती थी। फिर साक्षी गोपाल, लक्ष्मीनारायण का मंदिर, श्रीरामचंद्र का स्थान, श्रीतुलसीदास का स्थान, केकयी का मंदिर, भरत का मंदिर, चरण-पादुका, विरजा-कुंड, नरसी-खोह और सुरा गाय आदि देखी। इसके बाद लक्ष्मण-पहाड़ी पर चढ़े। १५० सीढ़ियाँ चढ़कर लक्ष्मणजी का मंदिर देखा। वहाँ से नीचे और आस-पास का दृश्य बड़ा सुहावना लगता है। वहाँ से चले, तो बदरीनारायण, एक और मंदिर तथा कूप-बावली देखी। फिर कोई गाँव मिला। यहाँ का खोया बहुत सस्ता और अच्छा होता है। यहाँ एक विशेष उल्लेखनीय बात यह हुई कि एक बाबाजी से वार्तालाप हुआ, जो १०० वर्ष से अधिक वृद्ध हैं। वह बड़ी देर तक सन् ५७ के गदर का हाल बताते रहे। वहाँ से चले, तो मार्ग में स्वर्गाश्रम और एक बहुत बड़ा दवाखाना पड़ा। फिर वैष्णव-संप्रदाय के महाप्रभुजी की बैठक पहाड़ पर थी। दर्शन किए (यद्यपि वैष्णवों के यहाँ मंदिर खुलने का निश्चित समय होता है, तभी दर्शन हो सकते हैं)। जगन्नाथजी का मंदिर आदि पड़ा। इसके पश्चात् उन बाबा के यहाँ गए, जो प्रत्येक वर्ष असंख्य व्यक्तियों को एक निश्चित दिन दमे की दवा देते और कहते हैं, उससे सदा के लिये दमा चला जाता है। परिक्रमा पूर्ण हो ही चुकी थी। वहाँ से लौटे, तो बंदरवाले बाबा के मंदिर में बैठे। हनुमानजी के दर्शन किए, और धर्मशाले आए।

सायंकाल को नदी-तट की सैर की। धर्मशाले से थोड़ी दूर पर बूढ़े बाबा (मत्तगजेंद्र)जी के मंदिर गए। यह मंदाकिनी के किनारे बहुत ऊँचे टीले पर है। इसके बिलकुल नीचे श्मशान है। उस स्थान में शांति और सौंदर्य बरसता है—चारो ओर बड़ा सुंदर दृश्य है। यहाँ के प्रधान बाबा केशवदास की, जो बहुत पहुँचे हुए साधु थे, कुछ वर्ष पूर्व मृत्यु हो चुकी है। थोड़ी दूर पर एक प्रसिद्ध मौनी बाबा की कुटी और

निकट ही एक और महावीर(संकटमोचन)जी का मंदिर है। वहाँ के बाबा के दर्शन हुए। यह सब मंदाकिनी के बाएँ ओर का वर्णन है। अब धर्मशाला के दाहनी ओर गए। पहले तो राघव-प्रयाग के निकट हरि-मंदिर और भगवान् का मंदिर देखा। मत्त गजेंद्र-घाट और मंदिर
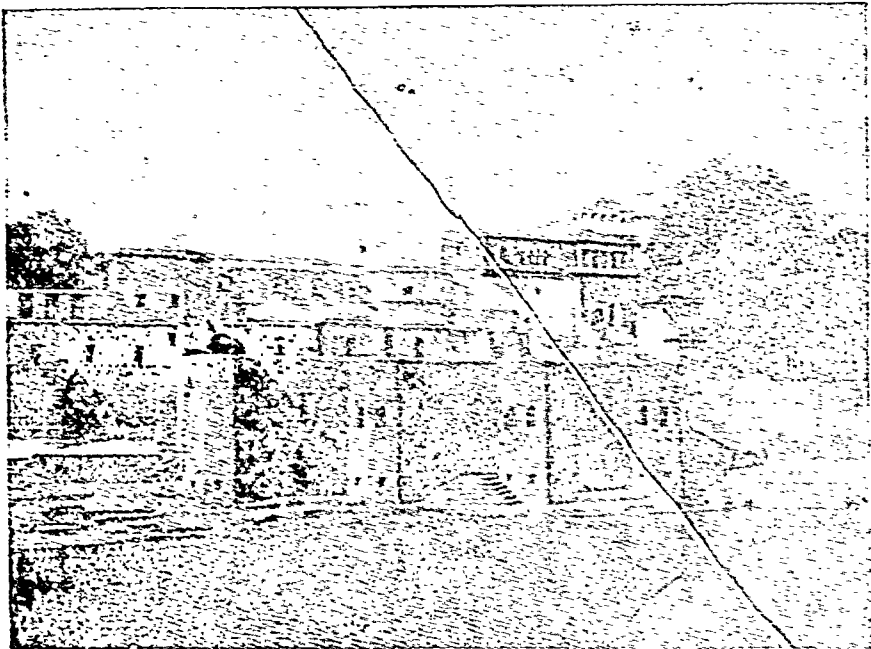
मत्त गजेंद्र-घाट (राघव-प्रयाग)

देखा। यहीं सीतापुर (चित्रकूट) का पोस्टऑफ़िस है। घाट की शोभा अलौकिक है। दूर तक पक्के घाट बने हैं। मंदाकिनी में असंख्य मछलियाँ हैं। अस्तु।

मंदाकिनी का जल पार कर उस पार गए, और वहाँ के मंदाकिनी-घाट तथा अन्य पक्के घाट और किनारे पर बने रतनेश्वर राजा का सुंदर मंदिर तथा अन्य मंदिर देखे। फिर गूदड़वाले बाबा के यहाँ जगदीश का मंदिर और वहाँ से अहल्याबाई का मंदिर देखा। मंदिर क़िले की-सी चहारदीवारी के अंदर थे। वहाँ रामलीला के संबंध में रामायण हो रही

थी। बड़ी देर तक बैठे आनंद लेते रहे। फिर 'नया गाँव' होते, बाला-जी के दर्शन करते इस पार आए। राम-घाट के निकट यज्ञवेदी-नामक मंदिर में गए। कहते हैं, यहाँ ब्रह्मा ने यज्ञ किया था। फिर पर्णकुटी गए, जहां सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर जाना पड़ता है। फिर गोस्वामी तुलसी-दास की कुटी (राम-घाट के सामने गली में) देखी। कहते हैं, यहीं तुलसीदास को भगवान् के दर्शन हुए थे। दोहा प्रसिद्ध है—

"चित्रकूट के घाट पर भइ संतन की भीर ;
तुलसिदास चंदन घसैं, तिलक देत रघुबीर।"

दूसरे दिन हम लोग कोटतीर्थ गए। मार्ग में सुंदर और घनघोर जंगल पड़ता है। यह संकर्षण पर्वत पर स्थित है, और सीतापुर से ५-६ मील होगा। कई सौ सीढ़ियाँ चढ़ने पर ऊपर पहुँचे। बड़ा अच्छा लग रहा था—पचासों यात्री चल रहे थे। बहुत-से डोली पर सवार थे। बाँके सिद्ध, सरस्वती-नदी, यमदर्रा, पंपासर आदि भी इसी ओर से जाते हैं। ये सब थोड़ी-थोड़ी दूर पर हैं। यहाँ मंदिर है, एक सुंदर झरना है। वहाँ नहाने का माहात्म्य है। यहाँ से चले, तो सरस्वती-कुंड और मंदिर तथा देवांगना भी पड़ा। फिर पहाड़ की चोटी पर बड़ा विस्तृत मैदान है, जहाँ तेंदुवे बहुत हैं। पहाड़ पर एक झील पड़ी—क्या भगवान् की देन है। फिर एक भीलों का गाँव पड़ा। यहाँ खोया लेकर खाया। जीवन में ऐसा खोया कभी नहीं खाया था। यहाँ आँवला, देवदारु और चिरौंजी के पेड़ अधिक हैं। सीता-रसोई पहुँचे। निकट ही गिद्धाश्रम, सिद्धाश्रम, मणिकर्णिका-तीर्थ, पंचतीर्थ (जिसमें चंद्र, सूर्य, वायु, अग्नि, वरुण, पाँच देवताओं की मूर्तियाँ हैं) और ब्रह्महृद-तीर्थ आदि हैं। वहाँ से लगभग ३५० सीढ़ियाँ उतरना पड़ीं। हनुमान्-धारा आए। महावीरजी की विशाल मूर्ति है। यहाँ दो जल के कुंड हैं, जो सदा ऊपर से गिरते हुए झरने के पानी से भरे रहते हैं। यह स्थान बहुत सुंदर है। दो-तीन बहुत बड़ी दालानें बनी हैं। यहाँ

झरने का पानी महावीरजी की मूर्ति को स्पर्श करता हुआ बहता है। फिर नया गाँव होते हुए लौट आए।

हनुमान-धारा—चित्रकूट
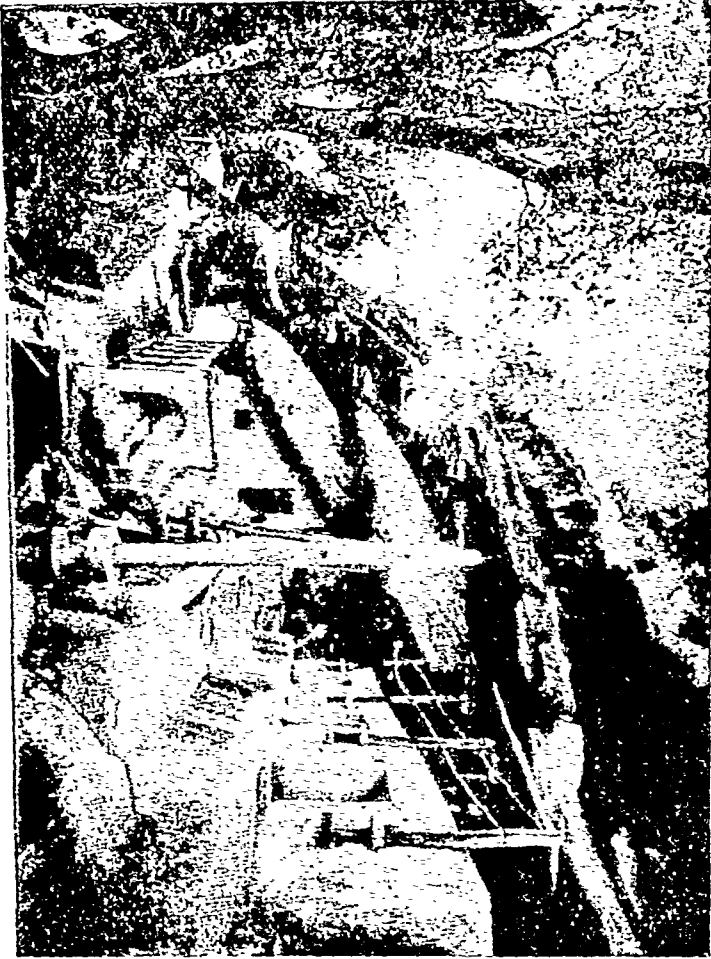
तीसरे दिन हम लोग गुप्त गोदावरी पहुँचे। छपरा, मिनाही, चौबेपुर आदि गाँव मार्ग में पड़े। मार्ग में कहीं खेत थे, कहीं उजाड़ भूमि। एक नाला पड़ा, फिर कई झीलें और कई झरने पड़े। एक मोरध्वज-वाला झरना पड़ा। चौबेपुर के निकट कैलास-मंदिर और कुंड था। बड़ी ऊँची-ऊँची घास पार कर गुप्त गोदावरी पहुँचे। सीढ़ियाँ चढ़कर मुख्य

स्थान पर पहुँचे। एक अँधेरी गुफा है—ऊपर चढ़े। सीता-कुंड उसमें है (उस पर पहाड़ की छत है), जिसमें झरने का जल भरता और पृथ्वी के नीचे स्वतः लुप्त हो जाता है; इसी से इसका नाम गुप्त गोदावरी पड़ा। प्रकृति की कारीगरी के इस नमूने को जिसने नहीं देखा, उसका जीवन व्यर्थ है। लालटैन जलाकर पंडे भीतर ले जाते हैं। फिर खटखटा चोर, सुइया और अनसुइया देखा। गुफा २ फ़र्लांग लंबी होगी। स्नान करके गीली धोती पहने नीचे के कुंड में गए, और लगभग ३-४ फ़र्लांग सिर झुकाए-झुकाए पहाड़ी गुफा के अंदर जाना पड़ा। पानी में असंख्य साँप और मछलियाँ भरी थीं। उसी बहते झरने के जल के अंदर गए। पर्वत का नाम तुंगारराय है। कठिनता से एक गज़ चौड़ी और ऊँची पहाड़ी दीवार, चारो ओर रंगीन और सफ़ेद पत्थर और कमर-कमर तक पानी। पहले तो महादेवजी का मंदिर, फिर राम-लक्ष्मण, फिर महावीरजी का मंदिर। गुफा के अंदर १½ फ़ीट ऊँची मेहराब-सी (प्राकृतिक टेढ़ी-मेढ़ी) है, उसी को मंदिर कहते हैं। हनुमान्-कुंड, लक्ष्मण-कुंड और राम कुंड भी ऐसे ही भीतर के स्थानों के नाम रख लिए गए हैं—वहां स्नान का माहात्म्य है। नहाकर बाहर आए। ख़याल कीजिए ३-४ फ़र्लांग पहाड़ की खोह के अंदर का यह सब दृश्य है, जहाँ रोशनी जलाकर जाना पड़ता है। प्रकृति की ऐसी अपूर्व गुफा पहले नहीं देखी थी।

वहाँ से भरत-कूप चल दिए। चौबेपुर, छपरा, मिनाही गाँव होते छिरतहा गाँव आए। बरुवा-नदी पार की। कई नाले पार किए। जब तीन मील भरत-कूप रह गया, तब बड़ा सुंदर दृश्य प्रारंभ हुआ। तीन तरफ़ पहाड़ थे—बीच में ऊबड़-खाबड़ ज़मीन। सब देखते-दाखते ५ बजे सायंकाल को भरत-कूप पहुँचे। पक्का बड़ा कूप है, और निकट ही भरतजी का मंदिर। राज्याभिषेक के लिये लाया हुआ सब तीर्थों का जल भरतजी ने इसी कुएँ में डाला था। इस कुएँ में नहाने का बड़ा माहात्म्य

है। रात हो गई थी। चाँदनी रात में पहाड़ों का दृश्य कितना अवर्णनीय होता है, किंतु रात्रि के समय पर्वत पर विचरना बहुत खतरनाक है। शेर-चीतों का भय एक ओर, साँपों का डर दूसरी ओर।

भरत-कूप—चित्रकूट

वहाँ चोर-बदमाश बहुत हैं, यह भी हम लोग जान चुके थे। राम-राम करते वहां से चले। पहले तो पहाड़ पर एक जानवर घुर्र करके हम लोगों की ओर दौड़ा, किंतु हम लोगों की संख्या देखकर कदाचित्

भाग गया। आगे चलकर एक कच्ची घाटी से होकर चलना पड़ा, जो कठिनता से १-१½ गज़ चौड़ी होगी, और उसकी दीवारें १०-१२ फ़ीट ऊँची। दिखाई न देता था—काँटे और घास चुभ रही थीं। आगे चलकर दो लट्ठबंद मिले, किंतु वे हमारे 'गाइड' महोदय की जान-पहचान के निकले। हम लोग उस दिन २७-२८ मील चल चुके थे, टाँगें भरी हुई थीं, मन-मन के पैर उठाए न उठते थे, किंतु डर ने यह सब कष्ट दबा दिए। न प्यास, न भूख, न थकावट। सिर पर पैर रखकर भाग रहे थे। भगवान् ने कृपा की, सही-सलामत ६½ बजे रात्रि को धर्मशाले पहुँचे।

चौथे दिन शरभंगाश्रम जाने की सोची। दो दिन का भोजन लेकर बाँध लिया। हाथी-दरवाज़े होते चले। पहले 'राघव-प्रयाग' पड़ा। यहाँ मंदाकिनी-नामक एक नाला पयस्विनी में मिलता है। कहते हैं, प्रयाग में जैसे सरस्वती गुप्त रूप से गंगा-यमुना में मिली हैं, उसी भाँति यहाँ भी सावित्री या गायत्री-नदी गुप्त रूप से मिली हैं। 'राघव-प्रयाग' के विषय में एक पौराणिक कथा है। 'राघव' यानी भगवान् राम + प्रयाग=राघव-प्रयाग। कहते हैं, भगवान् ने जब प्रयाग को सब तीर्थों का राजा बनाया, तो उसे गर्व हो गया। वह अपना गर्व नारदजी से भी न छिपा सका। नारदजी के यह कहने पर कि 'चित्रकूट' से बड़े नहीं हो—यों तो सब तीर्थों के राजा हो, वह राम के पास चित्रकूट आया। राम ने भी यही बात कही। तभी से इस घाट का नाम 'राघव-प्रयाग' पड़ा। निकट ही हरि-मंदिर और एक भगवान् का मंदिर है। इसी घाट पर प्रसिद्ध मत्त गजेंद्रेश्वर का मंदिर है। इसकी भी एक पौराणिक कथा है। जब राम चित्रकूट में आए, तो मजगंद-नामक राजा यहाँ राज्य करता था। राम ने लक्ष्मण को इसके पास अपने रहने की आज्ञा प्राप्त करने के लिये भेजा। लक्ष्मण के मुँह से यह सुनकर कि स्वयं राम यहाँ पधारे हैं, वह सुध-बुध भूलकर प्रसन्नता के मारे नंगा

नाचने लगा। लक्ष्मणजी बड़े क्रोधित हुए, और राम से बताया— "वह तो बोला ही नहीं, वरन् नंगा नाचने लगा।" राम ने कहा— "शब्दों से नहीं, अपने भावों से उसने आज्ञा दे दी।"

राघव-प्रयाग (संगम)

अस्तु। हम लोग पहाड़ी ऊबड़-खाबड़, हरी भरी भूमि और सघन जंगलों से होते, प्राकृतिक दृश्य देखते पयस्विनी के किनारे-किनारे चले।

नदी के एक ओर जंगल और ऊँचे कगार और दूसरी ओर पर्वतों की श्रेणियाँ। एक बहुत ऊँचे टीले (रामधाम) पर बहुत-से साधुओं की कुटिया हैं। यहीं प्रसिद्ध रामायणी बाबा रहते थे, जिनकी हाल ही में मृत्यु हो गई है। केशव-गढ़ के बाद प्रमोद-वन के फाटक में घुसे। चारो ओर पक्की चहारदीवारी है, और बीच में मंदिर हैं। लक्ष्मीनारायणजी के मंदिर में दर्शन किए। उसके नीचे तहख़ाने में अन्नपूर्णा की मूर्ति है। वहाँ के परकोटे पर चढ़कर दृश्य देखा। मंदिर क्या है क़िला है। उस हरियाली का क्या वर्णन किया जा सकता है। तोतों और मोरों की तो भरमार है। फिर पुत्र-जीवा पेड़ से भेंट की। कहते हैं, इसे भेंटने से निःसंतान के पुत्र होता है, और पुत्रवान् के पुत्र चिरजीवी होते हैं। फिर एक रामचंद्रजी के मंदिर में गए। इसके बाद बिहारी-बिहारिणी का मंदिर देखा। फिर जानकी-कुंड पहुँचे। प्राकृतिक सौंदर्य का साक्षात् उदाहरण यह स्थान है। नदी के बीच में श्वेत पर्वतखंड पड़े हैं, जिनमें चरण-चिह्न बने हैं। ऐसा कहा जाता है कि जब राम और सीता यहाँ चलते थे, तो पत्थर मोम के समान पिघल जाता था। चरण-चिह्न तीन स्थान पर हैं—(१) जानकी-कुंड में, (२) स्फटिक-शिला में, (३) चरण-पादुका में (परिक्रमा में)। मछलियों और बंदरों की तो खान ही है यह देश। फिर सिरसा वन गए। परम साधु बाबा रामनारायणजी के दर्शन किए, और उनसे वार्तालाप का सौभाग्य प्राप्त हुआ। आपसे मिलकर आत्मा को अत्यंत संतोष हुआ। यहाँ घनघोर जंगल हैं। फिर स्फटिक-शिला पहुँचे। अत्रि मुनि के यहाँ जाते हुए राम-सीता ने यहीं पयस्विनी के बीच में पड़े हुए एक पत्थर पर विश्राम किया था। यहीं जयंत ने कौवा बनकर सीताजी के चोंच मारी थी। दो बहुत बड़े शिला-खंड हैं। उस पर बैठकर प्रकृति के मनोरम दृश्य देखिए। शिला के नीचे अगाध जल है, जहाँ मगर और बहुत बड़ी-बड़ी मछलियाँ भरी हैं। निकट ही साधुओं की कुटियाँ थीं। एक तपस्विनी ने हम लोगों को खट्टी और मीठी पत्तियाँ खिलाईं। यहाँ

से फिर अनसुइयाजी चले। चलते-चलते बाबूपुर के तालाब पर रुके। रास्ते में बड़ा रमणीय दृश्य पड़ता है। पहले घना जंगल पड़ता है, फिर थोड़ी दूर पर विस्तृत मैदान। यहाँ शेरों का बड़ा डर है। तालाब

जानकी-कुंड — चित्रकूट

से १-१½ मील चलने के पश्चात् जंगल शुरू हुआ। १ मील चलकर दो कुंड पड़े। आदमी ने बताया—"सरकार ने इन्हें नहर बनाने के सिलसिले में खुदवाया था, पर काम असंभव समझकर छोड़ दिया गया।

तब से ये ऐसे ही पड़े हैं।" थोड़ी दूर चलने पर झूरी-नदी पड़ी। वहाँ एक काला जानवर हम लोगों की आहट पाकर भागा। जब एक मील अनसुइया रह गया, तो सैकड़ों झरने पहाड़ से बहते और नदी में मिलते देखे। एक बड़े पत्थर पर महावीरजी खुदे मिले। और आगे २५० सीढ़ी चढ़कर सिद्ध बाबा का आश्रम पड़ा। वहाँ पहाड़ों का विचित्र दृश्य था। नीची ज़मीन से कई सौ गज़ ऊँचे समकोण बनाते हुए पहाड़ खड़े थे। दोनो पहाड़ों के बीच नदी के किनारे हम लोग बढ़ रहे थे। ऊपर चढ़े—महावीरजी की मूर्ति थी, और ऊपर यात्रियों के ठहरने के लिये कोठरियाँ बनी हैं, वे देखीं। यहाँ एक और दृश्य देखा, जो उल्लेखनीय है। सीधे खड़े पहाड़ की चोटी पर ४ शहद के छत्ते लगे थे। पहाड़ी लोग बड़े मज़े में वहाँ से शहद निकालते हैं। चोटी पर एक लकड़ी रखकर, उसमें नीचे लकड़ी बाँधकर नीचे लटकते हैं—हवा में। कितना खतरनाक काम है! यह साहस की परा काष्ठा है। थोड़ी देर बाद अनसुइया पहुँचे। पातक-मोचन, ऋण-मोचक और दरिद्र-विमोचन यहाँ से दक्षिण की ओर हैं। अत्रि मुनि और अनसुइयाजी के दर्शन का सौभाग्य हुआ। निकट ही दत्तात्रेय, दुर्वासा, गणेश आदि की मूर्त्तियाँ हैं। दर्शन करके स्नान करने की सूझी। यहाँ इतना निर्मल जल है कि नीचे के पत्थर साफ़ दिखाई देते हैं। पहाड़ी नदियाँ तो ऐसी होती ही हैं कि कहीं घुटने-घुटने और कहीं अगाध जल। अत्यंत तीव्र धारा थी। जल बहुत मीठा और ठंडा। भोजन किया। भाग्य-वश १२-१३ और लोग भी शरभंगा जाने को वहीं मिल गए। बड़ा सुख हुआ। पहले तो निकट ही साधुओं की कुटियाँ थीं, उनके दर्शन किए। वहाँ साधुओं ने कंद-मूल दिया। नाम पहले से सुनते थे, पर खाने का सौभाग्य आज ही प्राप्त हुआ। प्रकृति ने अपने प्रेमियों के लिये कैसा प्रबंध कर दिया है। एक बात और भी हम लोगों ने देखी कि बीहड़-से-बीहड़ स्थान पर भी जहाँ मंदिर है, वहाँ पुजानेवाले ज़रूर बैठे मिले। हाय रे पेट!

अस्तु, आगे बढ़े। एक नाला पार किया। फिर घनघोर जंगल अनसुइया से शुरू होता है, जहाँ सब प्रकार के जानवर हैं। मंदाकिनी पार की। वह उस स्थान पर काफ़ी चौड़ी थी, और किनारे-किनारे हरी

अनसुइया—चित्रकूट

काई लगी थी। थोड़ी देर बाद घाटी (चढ़ाई) शुरू हुई। मीलों की सीधी, पथरीली चढ़ाई, मगर वाह रे वहाँ के घोड़ों के सधे हुए पैर! सुगंध से परिपूर्ण वायु-मंडल के मध्य होते हुए हमारी पार्टी चली जा रही थी। सब चुप थे—कभी-कभी ही निस्तब्धता भंग होती। चार-

चार क़दम पर प्रकृति की ऐसी अनोखी वस्तुएँ एवं दृश्य दिखाई देते कि जिह्वा बरबस खुल जाती थी। परिश्रम के कारण साँस चल रही थी, पैर भरे हुए थे—किंतु हृदय की कली खिली हुई। जीवन में इतने घनघोर जंगल अभी तक कभी न देखे थे। भगवान् की यह लीला-भूमि रही है, फिर यहाँ अलौकिक और अवर्णनीय सौंदर्य क्यों न हो। आँखों से सौंदर्य-पान करते हम लोग बढ़ रहे थे—हृदय प्रसन्नता से फटा जाता था। समझ में नहीं आता था कि अपने इस appreciation (तारीफ़) को, जो इतना अधिक है कि इस छोटे-से हृदय में नहीं समा सकता, कैसे प्रकट किया जाय। कम-से-कम शब्दों द्वारा तो यह असंभव था—"वह मज़े दिल के लिये थे, न थे ज़बाँ के लिये।" अमरावती पहुँचे। वहाँ एक छोटा-सा झरना है, उसे अमरावती गंगा कहते हैं। वहाँ भी साधु थे। वहाँ से चढ़कर एक मीलों का सपाट मैदान पड़ा, जो पहाड़ की चोटी पर था। 'जम्हुआई' गाँव पड़ा। 'टिकरिया' के पास एक छोटा ताल-सा पड़ा। क्या जीवन वहाँ का भी है। एक माता ने बताया—"गर्मी में जब कुओं का पानी सूख जाता है, तो कनस्टर में छेद करके पानी भरते हैं।" पचासों स्थानों पर झाड़ियाँ हटा-हटाकर मार्ग करना पड़ा। नीचे मैदान में पहुँचे। रेलवे के एक फाटक के निकट 'पुष्करिणी ताल' पड़ा। उसके निकट एक बहुत प्राचीन परित्यक्त-सा मंदिर था। निकट ही बिजली के तार और रेल की गुमटी थी। फाटक पार किया। डौंरा गाँव जाना था। जिससे पूछो, वही 'सामने है, सामने' कह देता, और वास्तव में सामने था। मगर पहुँचने में १½ घंटा लग गया। पहाड़ी मार्ग जो ठहरा। गाँव में आए। खाटें पड़ी थीं, बच्चे खेल रहे थे, और हम नवागंतुकों की ओर बच्चे और स्त्रियाँ देखती जाती थीं—बाबू लोग तो श्रद्धालु और भक्त होते नहीं, फिर इस गाँव में प्रयोजन? गाँव के मुखिया के यहाँ हम लोग पहुँचे। कितने 'मेहमान-नेवाज़' गाँववाले होते हैं। काँटों से घिरा, बहुत बड़ा, खुला

सहन-सा था। छप्पर बहुत बड़ा था। हम लोगों के लिये वृद्ध ब्राह्मण ने खाटें बिछवा दीं। गाँव के जीवन का आनंद लिया। पहाड़ी प्रांत, चाँदनी रात, असंख्य झिलमिलाते तारे, स्वच्छ, नील आकाश, औरतों का मधुर संगीत, ढोलक की ध्वनि और बीच-बीच में 'हुक्का हुआ, हुक्का हुआ।' क्या आनंद आ रहा था—खुले मैदान में ८-१० चूल्हे जल रहे थे, कंडों के सहारे बाटियाँ और भोजन बन रहा था, बातें हो रही थीं। दो-एक बातें इस गाँव के विषय में और कहना चाहता हूँ। एक तो यह गाँव पहाड़ी के बिलकुल नीचे बसा है, और शहर या आबादी से बहुत दूर, तो भी यहाँ सब चीज़ें सस्ती थीं और बहुत उम्दा। यहाँ सचमुच राम-राज्य है। स्त्री, पुरुषों, बच्चों और गाय-बकरियों तक के मुख पर स्वास्थ्य की झलक, भोलापन और पवित्रता तथा सात्त्विकता। दूसरे, यहाँ दूध डेढ़ आने सेर मिलता है। सेर-भर लो, तो डेढ़ सेर से अधिक देंगे। गाढ़ा इतना कि उँगली डाल दो, तो चिपक जाय। यहाँ ईमानदारी है, और इसी से बरकत। सबको सुख है, शांति है, संतोष है। एक हम शहर के सभ्य लोग हैं—कृत्रिमता के भक्त और खोखले जीवन से युक्त। न-जाने क्या-क्या सोचते-सोचते सोए—शायद यह कि न-जाने कौन पुराय उस जन्म में किए थे, जो यहाँ तक आए, और न-जाने कौन पाप उन लोगों ने किए हैं, जिन्हें यह सब देखने का सौभाग्य न होगा। सोए, और घोड़े बेचकर सोए। प्रातःकाल ३ बजे अपने कल के साथियों के मधुर गीत से नींद खुली। परमात्मा, ऐसे सुख बेर-बेर दिखा।

६½ बजे हम लोग शरभंगा चल दिए। रास्ते में फिर घनघोर जंगल पड़ा। उसी गाँव के एक आदमी को लेकर चले। उसने बताया—"यहाँ शिकार करने, विशेषकर शेर का, बहुत अँगरेज़ आते हैं।" पचासों नाले रास्ते में पड़े। कमलदहा-नदी, मंदाकिनी, भौंरा-नदी आदि पड़ी। यहाँ के प्राचीन निवासी कोल-भील भी इसी जंगल में दिखाई दिए। मार्ग में एक स्थान पर बहुत अधिक मक्खियाँ मिलीं। उन मार्गों से होकर गए,

हैं भगवान् की माया। उस आदमी ने बताया—"इसमें बहुत-से छत्ते मक्खियों के हैं।" कहते हैं, एक साधु भी इसके अंदर निवास करते हैं। इसके पश्चिम दंडक-तीर्थ है। वहाँ से आदमी हम लोगों को लघु मार्ग (Abrupt cut) के फेर में काँटे आदि से भरे मार्ग (Untrodden path) से ले गया। अमरावती पहुँचे। वहाँ इतनी सुंदर चिड़ियाँ बोल रही थीं कि हम लोग बड़ी देर तक बैठे उनकी बोली सुनते रहे। फिर अनसुइया आए। फिर बाबूपुर के ताल आए। उसके अंदर मगर के बच्चे दिखाई दिए, पर आदमी ने बताया—"पर साल इतनी ज़्यादा नदी बढ़ी थी कि वह इस तालाब तक पहुँच गई थी। उसके साथ ये आ गए, और अब इसी में हैं।" सिरसा (शृंगार) वन होते हुए धर्मशाले आए।

राम-शय्या—यह भी प्रसिद्ध स्थान है। एक बार राम-सीता ने रात्रि के समय यहीं निवास किया था, क्योंकि वन में विचरते दूर तक आ गए थे—रात्रि हो गई थी, और पर्ण-कुटी दूर थी। इसके नामकरण का यही कारण है। एक बड़ी शिला पर दो प्राणियों के सोने के दो चिह्न बने हैं—बीच में धनुष का निशान।

अब चित्रकूट के आस-पास की अन्य दर्शनीय तथा आवश्यक वस्तुएँ लिखकर मैं यह वर्णन समाप्त करता हूँ। आस-पास के तीर्थ ये हैं—

वाल्मीकि-आश्रम—एक तो सीतापुर ही में है, और दूसरा कामतानाथजी से १५-१६ मील दूर लालपुर पहाड़ी पर स्थित बक्रोई गाँव में।

राजापुर—यह अच्छा क़स्बा है। सीतापुर से २४-२५ मील होगा। यमुना के किनारे एक ऊँचा, पक्का गोस्वामी तुलसीदासजी का मंदिर बना है। गोस्वामीजी का जन्म यहीं हुआ था। उनकी हस्त-लिखित रामायण का अयोध्या-कांड अब भी एक महानुभाव के पास है।

चित्रकूट का धार्मिक महत्त्व अत्यधिक है। यहाँ, कहते हैं, प्रायः ३६०

मंदिर होंगे । भगवान् रामचंद्रजी ने वनवास की अवधि के १२ वर्ष यहीं बिताए थे । यह पर्वतीय रमणीय स्थान है, जहाँ सदा से ऋषि-मुनियों
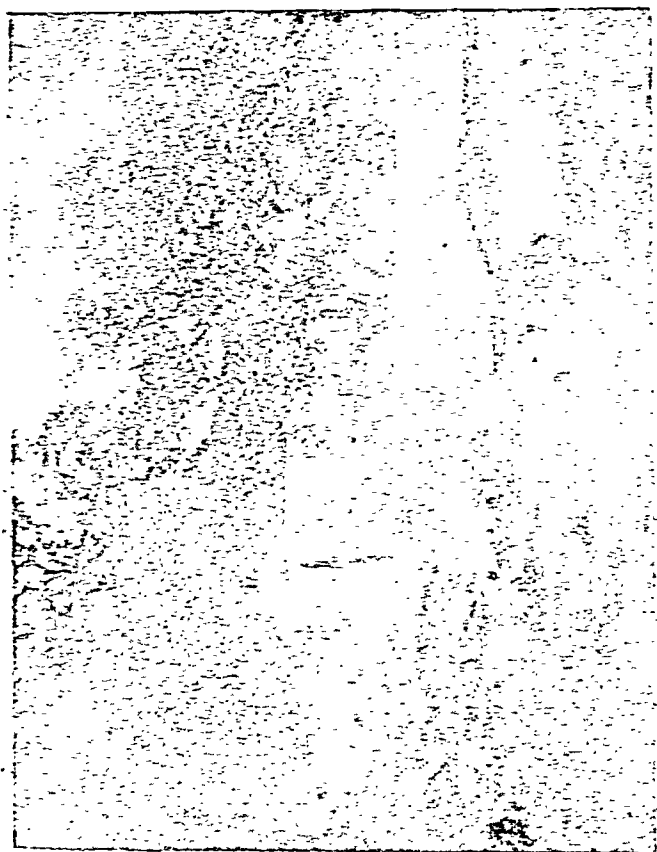
राघव-प्रयाग के ऊपर बना हुआ मंदिर—चित्रकूट

ने निवास किया है । जी० आई० पी० की एक शाखा मानिकपुर होती हुई इधर आती है । दूसरी लाइन कानपुर से बाँदा आती है, जिससे हम लोग आए थे । बाँदा में गाड़ी बदलनी पड़ती है । चित्रकूट में सर्वश्रेष्ठ और प्रसिद्ध स्थान कामदनाथ (कामद+नाथ=इच्छाओं के नाथ, अर्थात् भगवान् राम) है । यहाँ अनेक जड़ी-बूटियाँ मिलती हैं । चित्रकूट बना

ही 'चित्र' (अनेक रंग-बिरंगे) + 'कूट' (पहाड़-पहाड़ी) से है। भिन्न-भिन्न रंगों के फूल-पत्तियाँ, जड़ी-बूटियाँ तथा पत्थर यहाँ मिलते हैं। चित्रकूट में मुख्य गाँव सीतापुर ही है। पयस्विनी यहाँ की प्रसिद्ध नदी है—(पय=दूध) + (स्विनी=बहनेवाली)। राजापुर के निकट यह यमुना में मिल गई है। इसे मंदाकिनी भी कहते हैं। स्वास्थ्य के विचार से यहाँ की जल-वायु अत्यंत सुंदर और लाभप्रद है।

भगवान् राम सीतापुर ही में पर्णकुटी बनाकर रहे थे। नदी के दोनो ओर उच्च भवन और मंदिर बने हैं। कहते हैं, यहाँ २४ घाट हैं— हो सकता है। किंतु चार घाट बहुत प्रसिद्ध हैं—राघव-प्रयाग, कैलास-घाट, राम-घाट और घृतकुल्या-घाट। यहाँ के मेले भी प्रसिद्ध हैं। चैत्र की रामनवमी और कार्त्तिक में दिवाली पर, अमावस और ग्रहण की तिथि पर यहाँ बड़े मेले होते हैं। यों तो सदा ही यात्री आते-जाते रहते हैं। शरत्-पूर्णिमा पर दमे के रोगी इतने अधिक आते हैं कि ३), ४) सेर तक दूध बिक जाता है, क्योंकि दवा दूध में ही दी जाती है।

यहाँ परिक्रमा करने का नियम है। भरतजी ने जो पाँच दिन में परिक्रमा की थी, वह इस प्रकार है—

(१) सीतापुर से कामतानाथ की परिक्रमा ६-७ मील। (पहला दिन)

(२) सीतापुर से कोटितीर्थ, देवांगना, सीता-रसोई, हनुमान्-धारा आदि, प्रायः १२ मील। (दूसरा दिन)

(३) सीतापुर से केशवगढ़, प्रमोद वन, जानकी-कुंड, सिरसा वन, स्फटिक-शिला और अनसुइया, प्रायः १२ मील। (तीसरा दिन)

(४) अनसुइया या बाबूपुर से कैलास आदि होता हुआ गुप्त गोदावरी, प्रायः १० मील। (चौथा दिन)

(५) चौबेपुर (गुप्त गोदावरी देखकर यहीं रहे)—भरत-कूप और राम-शय्या होता हुआ सीतापुर वापस, प्रायः १२ मील। (पाँचवाँ दिन)।

हम लोगों ने दशहरे की छुट्टियाँ वहाँ बिताईं, और ३ बजे सायंकाल को वहाँ से चलकर करवी-स्टेशन पहुँचे। यद्यपि २ बजे रात्रि को गाड़ी वहाँ से चलती है, पर वहाँ जानवरों और चोर-डाकुओं के डर से जल्दी ही आकर स्टेशन पर पड़े रहे। ४ बजे प्रातःकाल बाँदा पहुँचे। गाड़ी बदलना थी—६ बजे गाड़ी पर बैठे, और १० बजे कानपुर आए। वहाँ उतरे—गंगा-स्नान करने गए। २ बजे की गाड़ी से वहाँ से चले, और ४ बजे सायंकाल को लखनऊ पहुँच गए।

युक्त प्रांत के कुछ अन्य दर्शनीय स्थान ये हैं —

लंढौर—(७,४५६ फ़ीट) यह मसूरी से थोड़ी दूर पर दक्षिण-पूर्व में स्थित देहरादून-ज़िले में है। यहाँ योरपियनों तथा ऐंग्लो-इंडियन लोगों की काफ़ी बस्ती है। यहाँ उनका सैनीटोरियम भी है। ग्रीष्म-ऋतु में काफ़ी लोग यहाँ आते रहते हैं।

लैंसडौन—यह नगर गढ़वाल में है, और अँगरेज़ी सेना का हेड-क्वार्टर है। यहाँ का दृश्य सुंदर है। यहाँ से चारो ओर का हिमाच्छादित पर्वत-दृश्य भी बड़ा चित्ताकर्षक है। कोटद्वारा तक तो रेल जाती है, और कोटद्वारा से मोटर और लॉरियाँ यहाँ तक आती हैं। यह दूरी प्रायः २६-२७ मील की होगी। यहाँ दो डाक-बँगले भी हैं। यहाँ चीते और शेर का शिकार अच्छा है।

चकराता—यह स्थान पिकनिक्स और इक्सकर्शन के लिये अच्छा है। अति सुंदर प्राकृतिक दृश्यों तथा स्वास्थ्य-वर्धक जल-वायु और अपनी सुंदर स्थिति के लिये यह स्थान प्रसिद्ध है। देहरादून से ४-५ घंटे में मोटर यहाँ पहुँचा देती है। सहारनपुर से भी ७-८ घंटे का मोटर का मार्ग है। यह स्थान कालसी के उत्तर में है। मार्ग में अत्यत सुंदर दृश्य दिखाई पड़ते हैं। यहाँ भी अँगरेज़ी सेना रहती है। वहाँ से हिमालय का बर्फ़ीला दृश्य चारो ओर का बड़ा सुंदर दिखाई देता है। यह स्थान समुद्र-तट से ७,००० फ़ीट ऊँचा है। यह भी देहरादून-ज़िले में है।

कुछ विद्वानों की सम्मतियाँ—

प्रोफ़ेसर श्रीधरसिंहजी एम्० ए०, लेक्चरार गवर्नमेंट इंटर-मीजिएट कॉलेज, फ़ैज़ाबाद्—"प्राचीन काल से ही हमारा साहित्य हमें अपने भीतर की ही सैर करने की शिक्षा देता आया है। बाह्य संसार से हमने परिचय की आवश्यकता ही नहीं समझी। कदाचित् यही कारण है कि हमारे यहाँ यात्रा-संबंधी पुस्तकें बहुत कम हैं। देश-प्रेम के नारे लगाकर हम बालकों में वह पुनीत भाव भरना चाहते हैं। किंतु जिस देश को उन्होंने देखा नहीं, जिसका वास्तविक स्वरूप ही उनके सामने नहीं है, उसके प्रति सच्चा प्रेम हो ही कैसे सकता है? अतः इस बात की आवश्यकता है कि हमारे नवयुवकों के सामने देश के रमणीय प्राकृतिक दृश्यों तथा ऐतिहासिक महत्त्व के स्थानों का सुंदर वर्णन रक्खा जाय, जिसे पढ़कर उनके हृदय में उन स्थानों से परिचय पाने का उत्साह बढ़े। अस्तु।"

"टंडनजी की पहाड़ी यात्राओं के वर्णन से उस उद्देश्य की बहुत कुछ पूर्ति हो जाती है। यात्रा-प्रेमी होने के साथ-साथ आप एक कुशल कवि तथा चित्रकार भी हैं। अतः कोई भी मर्मस्पर्शी दृश्य आपकी दृष्टि से बच नहीं सका है। जहाँ शब्द-चित्र पर्याप्त नहीं समझा गया, वहाँ कैमरा से काम लिया गया है। अतः पाठकों के सम्मुख यात्रा का एक सजीव चित्र-सा खिंच जाता है। अनेक तीर्थों के वर्णन होने के कारण यह पुस्तक साधारण पाठकों के अतिरिक्त तीर्थ-यात्रियों के लिये भी उपयोगी है। आशा है, हिंदी-भाषी जनता इसका समुचित आदर करेगी।"

साहित्यमर्मज्ञ पं० रामचरित्रजी पांडेय एम्० एल्० ए०—"सुंदर दृश्य के लिये कितने ही चित्र हमारे हृदय पर बनते और

मिटते रहते हैं, परंतु टंडनजी-ऐसे भावुक पुरुष अपने हृदय पर खिंचे हुए चित्रों को यों ही मिटने देना कब सहन कर सकते थे। उन्होंने यह पुस्तक जिसे एक वर्णनात्मक अलबम् कह सकते हैं, रचकर उन चित्रों को सामूहिक तथा स्थायी रूप दे दिया, जिनका अनुभव उन्होंने अपनी यात्राओं में किया है। पहाड़ी स्थानों का विवरण बड़े ही सुचारु रूप से दिया गया है। देखने योग्य कोई भी बात छोड़ी नहीं गई। भाषा मधुर, सरल तथा चलती हुई है। वर्णन-शैली बड़ी ही रोचक है। इस पुस्तक को पढ़ने पर तो पहाड़ी स्थानों की स्थिति का पूरा ज्ञान हो ही जाता है; परंतु इसकी उपयोगिता उन स्थानों की यात्रा करनेवालों को तो पूर्ण रूप से मुग्ध ही कर लेगी।"

'बालक'-संपादक आचार्य रामलोचनशरणजी—"आपकी पुस्तक, जिस विषय पर वह लिखी गई है, बड़ी सुंदर निकली है। उससे संयुक्त प्रांत के पहाड़ी प्रदेशों एवं दर्शनीय स्थानों की यात्रा करनेवालों के लिये उन स्थानों से परिचित एक मित्र तथा मार्ग-प्रदर्शक के अभाव की पूर्ति हो जाती है, यह कहना कोई अत्युक्ति नहीं। दृश्यों तथा घटनाओं का कहीं-कहीं ऐसा सजीव वर्णन आया है कि पाठक को पढ़ने में तन्मयता आ जाती है।

डॉ० पी० एन० शर्मा एम्० डी० (रोम), टी० डी० डी० (वेल्स), पी० एम० आर० (रोम) इत्यादि भुवाली-सैनीटोरियम—"संसार में यात्रियों और भ्रमण करनेवालों की सुविधा के लिये अँगरेज़ी में टॉमस कुक और बेडकर इत्यादि लेखकों द्वारा लिखी अनेक पथ-प्रदर्शक पुस्तकें (Guide Books) मिलेंगी। किंतु भारतवर्ष में, जो विभिन्न सौंदर्य की खान है, और जहाँ प्राचीन इतिहास महत्त्व-पूर्ण होने के कारण अनेक देखने के स्थान हैं, ऐसी पुस्तकों की कमी है। यह सच है कि भारतवासी भारत के बाहर के देशों में बहुत कम भ्रमण करते हैं। लेकिन भारत की अपेक्षा किसी दूसरे देश में

इतने ग़रीब यात्री एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते न मिलेंगे। भारतवासी अपने धर्म में भक्ति रखने के कारण तीर्थ-स्थानों के दर्शन करना अपना परम सौभाग्य समझते हैं। चाहे अपने लक्ष्य तक पहुँचने के लिये कितनी ही कठिनाइयों का सामना क्यों न करना पड़े, उन्हें सहर्ष स्वीकार है। अगर हम भारतवर्ष का नक़्शा ध्यान से देखें, तो तीर्थ-स्थान हमें सुदूर दक्षिण में रामेश्वरम् से उत्तर में हिमालय पर स्थित बदरीनाथ तक मिलेंगे। इनमें हर तीर्थ-स्थान अपनी जगह अपना महत्त्व रखता है। अँगरेज़ी पुस्तकों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि योरप में किसी भी नवयुवक की शिक्षा तब तक पूर्ण नहीं समझी जाती थी, जब तक कि वह योरप में भ्रमण कर दूसरे नागरिकों से व उनकी सभ्यता के संपर्क में न आया हो। किंतु भारत में उस मनुष्य का जीवन सार्थक समझा जाता था, जो मुख्य तीर्थ-स्थानों के दर्शन कर आया हो। अस्तु। श्रीलक्ष्मीनारायण टंडन की इस पुस्तक में संयुक्त प्रांत के पहाड़ी भागों के सहित पहाड़ी तीर्थ-स्थानों का विस्तृत वर्णन हम लोगों की पुरानी चाह व कमी की पूर्ति करता है। आप उन लोगों में से एक हैं, जिन्हें भ्रमण करने का नशा-सा चढ़ा रहता है, और जो साथ-ही-साथ प्रकृति की सुंदरता का पूर्ण आनंद उठा सकते हैं। ज्ञात होता है कि पहाड़ी प्रांतों से आपको विशेष प्रेम-सा है। आपकी पहाड़ी यात्रा हरिद्वार से आरंभ होकर चित्रकूट का वर्णन कर समाप्त होती है। जो कुछ आपने लिखा है, वह स्वयं अनुभव से लिखा है। प्राकृतिक सौंदर्य के अतिरिक्त ऐतिहासिक और साहित्यिक महत्त्व की सुगंध भी है। जैसे-जैसे आपकी पुस्तक पढ़ते जाइए, लगता है, स्वयं यात्रा ;करते जा रहे हैं। किसी-किसी भाग का तो आपने इतना विस्तृत वर्णन किया है कि पढ़ने से ज्ञात होता है, मानो हम भी उनके गोल (Party) में से एक हैं। इस पुस्तक से इन पहाड़ी भागों पर घूमने की इच्छा रखनेवाले मनुष्यों को बहुत सुविधा मिल सकती है। हर स्थान में कौन-कौन-सी जगह देखने योग्य है, और मार्ग में किन-किन

वस्तुओं की आवश्यकता पड़ती है, यह इसे पढ़ने से सहज में ही मालूम पड़ जाता है। जिस प्रकार लेखक ने अपनी यात्रा के प्रत्येक पद का आनंद उठाया है, उसी प्रकार मैंने उनकी पुस्तक के प्रत्येक पृष्ठ से मनो-रंजन किया है।"

श्रीनरोत्तमदासजी कक्कड़ तहसीलदार—"पुस्तक बहुत रोचक और उपयोगी है। आपका उद्योग सराहनीय है। कागज और छपाई अति उत्तम है। पुस्तक अपने ढंग की निराली है। इससे यात्रियों को बहुत लाभ हो सकता है।"

प्रसिद्ध नाटककार पंडित गोविंदवल्लभजी पंत—"आपकी पुस्तक सुंदर है, केवल कागज़ के अभाव ने हाफ़टोनों का रूप खुलने नहीं दिया। यदि फ़ोटो को देखकर रेखा-चित्र बनते, तो उनके ब्लॉक इसी कागज़ पर भी साफ़ खिल उठते।"

This is to be welcomed as an attractively got-up pilgrim's guide to important places of pilgrimage in Northen India. The conception, plan and execution of this work are due to the experiences of Mr. L. N. Tandan, a noted educationist and poet of Lucknow. A descriptive book, as it is, was a great desideratum and the necessity of a book of this type was keenly felt by the tourists and travellers. Besides, serving as a pilgrim's guide, the book creates an inquisitive interest in the minds of the general reader about the several sites of historical, mythological and religious importance. Moreover, the descriptions are remarkable for their lucidity, simplicity and vividness and the book as a whole appears to be the first of its kind. The author deserves our congra-

tulations for having removed our want of such a book.

Acharya (Dr.) Tulsidas Goswami,
M. A. B. T B. L. Ph. D.
Kabya-Byakaran-Jyotish—Bedanta Tirtha,
Calcutta (Bengal)

I have read with great interest Mr. L. N. Tandon's book entitled "संयुक्त प्रांत की पहाड़ी यात्राएँ"
It presents a very interesting and exhaustive description of sacred and other places situated in the hills of Northern India. Mr. Tandon, as a traveller, must have studied the places very minutely as is evident from the thoroughness with which he has given description of the various places. The book makes a delightful reading coming as it does from the pen of a literary artist.

Y. G. Shrikhande,
B. Sc. M. B. B. S., T. D. D. (Wales)
Medical Superintendent

"I have gone through your book with great pleasure and profit to myself, and will keep it as my guide when, if ever, I do that (बद्रिकाश्रम) trip.

It undoubtedly fills a long-felt want in Hindi literature and I congratulate you on doing it so well".

Dr. Shivasaran Misra
M. D. (Hons) M.R.C.P. (Lond.)
Lecturer, King George V Med. College
Lucknow.